यादों की बरात

भारत छोड़कर पाकिस्तान जा बसे उर्दू के मशहूर शायर जोश मलीहाबादी की बहुचर्चित आत्मकथा का संक्षेप

क्रम

कुछ प्रारम्भिक बातें

सबसे पहले ये बातें सुन लीजिए, इनसे आगे चलकर मुझे समझने में आपको मदद मिलेगी।

मैंने अपनी जिन्दगी के हालात लिखने के सिलसिले में पूरे छः बरस तक ज्यादातर लगातार और कभी-कभी रुक रुककर महनत की है। डेढ़ बरस की मेहनत के बाद पहला मसविदा तैयार किया उसे रद्दी की टोकरी में डाल दिया। फिर डेढ़ बरस में दूसरा मसविदा मुकम्मिल किया, उसपर भी लकीर खींच दी। फिर डेढ़-पौने दो बरस लगातार नौ सौ पृष्ठों का तीसरा मसविदा तहरीर किया और तीन हजार रुपये में उसकी किताबत भी मुकम्मिल करा ली। मगर जब उसपर एक गहरी नजर डाली तो पता चला कि इस मसविदे को भी मैंने एसे घबराए हुए आदमी की तरह लिखा है जो सुबह बेदार होकर रात के ख्वाब को इस खौफ से जल्दी-जल्दी उल्टा-सीधा लिख मारता है कि कहा वह जेहन की गिरफ्त से निकल न जाए।

और खुदा-खुदा करके यह चौथा मसविदा छप रहा है।

और मेरे दिल की बात आप पूछें तो यह भी कह दूं कि मैं इस चौथे मसविदे से भी संतुष्ट नहीं हूं। लेकिन क्या करूं अब मुझमें यह दम बाकी नहीं रहा है कि दो बरस और महनत करके पाचवा मसविदा लिखू और उस पर भी कलम फेर दू।

फिर यह भी सोचता हू कि मेरे चल चलाव का वक्त सर पर आ पहुचा है और यह मिसरा—नसीम जागो कमर को बाधो उठाओ बिस्तर कि रात कम है दिल में गूजता रहता है। इसलिए डरता हू कि कहीं एसा न हो कि तहरीर ही में खुदा के फजलो-करम से मौत आ जाए और मसविदा नातमाम पड़ा रह जाए। इसलिए अब जैसा भी है यह चौथा मसविदा पेश कर रहा हूं।

क्षीण स्मरण-शक्ति

मैं कभी मजबूत हाफिजे का मालिक नहीं रहा और अब तो यह आलम हो गया है कि रात को क्या चीज खाई थी सुबह को यह भी याद नहीं रहता। कई महीने की बात है कि तारों की छाव में टहलने निकला वापसी में अपने घर का रास्ता भूल गया। वह तो कहिए कि मेरे एक हमउम्र टहलते मिल गए। मैंने उनसे पूछा कि यहीं-कहीं करमानी नाले के किनारे जो एक गुम्बदवाला मकान है क्या आप उसका रास्ता बता सकते हैं? उन्होंने कहा, 'क्या आप जोश साहब के मकान जाना चाहते हैं?' मैंने कहा, 'जी हा।

और उन्होंने मुझे मेरे घर तक पहुँचा दिया। रुखसत होते हुए उन्होंने मुझसे कहा, 'आप से तालीम-बयाबान बहुत पढ़े' मैंने जोश साहब को आगरे में देखा था। मेरा नाम नसीर अहमद है। जोश साहब से मेरा सलाम कह दीजिएगा।' मैंने शर्म के मारे यह नहीं बताया कि मैं ही जोश हूँ।

और तो और आपको मुश्किल से यकीन आएगा कि एक रोज़ तक़रीर लिखने के बाद जब दस्तख़त की नौबत आई तो अपना तख़ल्लुस भूल गया। चन्द सेकंड तक मुझ पर एक विचित्र पीड़ा की कैफ़ियत तारी रही, दिल धड़-धड़ करने लगा और अगर चार सेकंड के अन्दर-अन्दर अपना तख़ल्लुस याद न आ जाता तो यकीन जानिए मेरा दम निकल जाता।

मैंने यह बात इस वास्ते लिख दी कि अगर मेरी ज़िन्दगी के किसी वाक़्य में कमी-बेशी या आगा-पीछा नज़र आए तो उसे मेरी तरफ़ से जान-बूझकर की गई बात न समझें और मेरी हालत पर तरस खाकर उसे माफ़ कर दें।

आत्मकथा लिखने की कठिनाई

पचहत्तर बरस की पहाड़-सी ज़िन्दगी का अहाता करना बच्चों का खेल नहीं है। मैंने बुझे हुए हाफ़िज़े की तह-दर-तह पेचीदा और घोर अंधेरों में टटोल-टटोलकर यह सफ़र तय किया है। उन अंधियारों में मेरे हालात इस कदर उलझे और एक दूसरे पर चढ़े हुए मिले कि यह पता नहीं चलता था कि कौन घटना पहले की है और कौन बाद की। और भूलने का रेवड़ मुझे किस तरफ़ लिए जा रहा है। मैं फूँक-फूँककर कदम रखता आगे बढ़ता रहा। अपने बुढ़ापे को लड़कपन की सीमाओं तक खींचकर ले गया। लड़कपन से किशोरावस्था की ओर बाग मोड़ी, किशोरावस्था से भरपूर जवानी और जवानी से अधेड़ उम्र के दो बयाबाँ तय करता हुआ बुढ़ापे के इस बीहड़ तक आ गया। क्या बताऊँ इस कठिन यात्रा में क्या-क्या जतन करने पड़े। मैंने अपने बुढ़ापे को बच्चा बनाकर अपने माँ-बाप के आगोश में बिठाया, अपने घर की अँगनाई में कुलेल की पुरानी बरसातों को जगाया, अपने मदरसों और बोर्डिंग हाउसों में गया, अपने लंगोटिया यारों को पुकारा, मौत की नींद सोए हुए जवानी के इतिहासकारों के कंधे हिलाए, अपने दूरस्थ दोस्तों को इशारों से करीब बुलाया, अपनी जवानी के शबस्तानों (रात्रि गृहों) में पहुँचा जहाँ ज़ुल्फ़ों की सुगंध अब तक मचल रही है और टूटे पैमानों और बुझी हुई शमओं के अम्बार लगे हुए और गेसुओं से गिरे हुए सिंदूर के ज़र्रे अब तक दमक रहे हैं। वहाँ पहुँचकर अपने बिछुड़े हुए माशूकों को उस सिंहासन पर बिठाया, इंद्रधनुष और आकाशगंगा के रंग जिसकी परिक्रमा किया करते थे। और माज़ी से अपने को जब डसवा चुका तो कलम को ख़ून में डुबो-डुबोकर सब कुछ कलमबंद कर लिया और आपको सुनाने बैठ गया।

कहते हैं लखनऊ में एक बूढ़े मिर्ज़ा साहब रहते थे, जिन्होंने हज़रते जाने

आलम वाजिद अली शाह की आखें देखी थी। एक बार चंद नौजवानों ने आग्रह किया कि मिर्ज़ा साहब किबला कुछ पुराने हालात सुनाइए। उन्होंने सीना पीटकर कहा 'लड़को मुझसे वह दास्तां न सुनो, वरना मेरी छाती फट जाएगी। तुम्हारी थोड़ी देर की दिलचस्पी हो जाएगी और मैं पहरों के लिए बेकार होकर रह जाऊंगा।" लेकिन जब उन नौजवानों ने उनके कदम पकड़ लिए तो माज़ी की तरफ पलटने पर मजबूर हो गए और हालात सुनाते-सुनाते थोड़ी देर में उनका यह हाल हो गया कि गला रुंध गया और हिचकियां ले-लेकर रोने लगे और 'हाय जान-आलम' कहकर बेहोश हो गए। सो बन्दापरवर, अपना हाल सुनाकर मैं भी इसी तरह हिचकियां ले-लेकर रो रहा हूं। हाय माज़ी के दुख!!

अपने कभी के रंग महल में जो हम गए
आंसू टपक पड़े दरो दीवार देखकर।

२

जिन्दगी का मेला

मेरा जन्म

मैं इस बूंद भर जिन्दगी को भोगने और बजाहिर रंगीन लेकिन खून में लथपथ इस खूनी जिन्दगी में ऊपर से उतरकर दुनिया के लफड़ों में उलझ जाने के वास्ते पैदा किया गया इस बात का ठीक-ठीक बयान नहीं कर सकता, इसलिए कि मेरे खानदान में बच्चों की जन्म तिथि दर्ज करने का रिवाज नहीं था।

अलबत्ता मेरी दादीजान ने जो पैदाइश की इतिहासकार थीं मुझसे मेरी पैदाइश का जो सन् बताया था वह सन ईसवी के हिसाब से १८९६ था या १८९८, यह भी याद नहीं रहा।

बहरहाल अपनी उम्र को दो साल कम करने में नुकसान ही क्या है? इसलिए आप यह समझ लें कि मैं १८९६ में पैदा हुआ था। (दो बरस और बूढ़ा हो गया, हो जाने दीजिए। खुशी की बात है।)

अलबत्ता यह बखूबी याद है कि दादी ने फरमाया था कि बेटा, तू सुबह चार बजे पैदा हुआ था।

मेरा वतन

आम के बागों की रोमानी और घनेरी छांव में घूमता और की हुए मस्तानों में महकता कोयलों की कूकू और पपीहों की पीहू पीहू से चहकता मलीहाबाद हिन्दुस्तान की तहजीबी जन्नत—लखनऊ से सिर्फ तेरह मील की दूरी पर स्थित है।

यह खालिस पठानों की बस्ती है जिसके एक गोशे में हम लोग यानी दर्राए-खैबर से आए हुए आफरीदी[1] और दूसरे गोशे में कंधार से आए हुए कंधारी आबाद हैं।

हिन्दुस्तान में आकर और लखनऊ के आस पास बसने के बावजूद हमने लड़ाकू आदत नहीं छोड़ी। और आफरीदियों और कन्धारियों के दरम्यान एक लम्बी मुद्दत तक तलवार चलती रही और फिरंगियों ने आकर जब तलवार छीन ली तो लठ पौंगा होने लगा।

हिन्दुस्तान आकर और खासतौर पर लखनऊ की सभ्यता से प्रभावित होकर हम लोग एक अजीब गंगा जमुनी कौम बन गए।

हमारे यहां एक तरफ तो लखनऊ की दुपल्ली टोपियां मखमल की

---

१ हम लोग आफरीदी आदमखेल और आदमखेलों की एक शाख 'अलाखेल' से ताल्लुक रखते थे।

लिहाफ़, चौक का इत्र, कनौज का तल फुलेल और मशरू के पायजामे रिवाज पा गए। और पतंगबाज़ियाँ मुर्गबाज़ियाँ बटेरबाज़ियाँ और उनकी पालियाँ होने लगीं—और हमने 'अस्सलाम अलैकुम' के बजाय आदाब तस्लीमात, कोरनिश और बन्दगी को अख़्तियार किया। और उसके साथ-साथ बतबाज़ियाँ और मुशायरे भी होने लगे और सेहन-ज़ुबान के तसर्रुफ़ ने भी आँखें खोल दीं

और दूसरी तरफ़ अल्लाह दे और बन्दा ले किस्म के हंगामे भी जारी रहे और आए दिन की फ़ौजदारियाँ और खूँख्वारियाँ भी बराबर होती रहीं।

मुद्दतों तक हमारा यह आलम रहा कि अगर किसी राही को अचानक खाँसी आ जाती थी और वह किसी के दरवाज़े के सामने थूक देता था तो साहब-ख़ाना साहब लट्ठ लेकर गली में आ जाते थे कि ख़ान साहब आप हमारे मकान पर थूक रहे हैं। और थूकनेवाले ख़ाँ साहब अकड़कर जवाब देते थे कि तब नहीं थूका था अब थूक रहे हैं—आक थू आक थू।

और दोनों के दरम्यान बड़े ज़ोर शोर से लट्ठ चलने लगता था और अगर किसी शादी-ब्याह में दो मुख़ालिफ़ गिरोह आमने-सामने खटोलों[1] पर बैठे हुक्का पीते थे तो उनमें से जब एक गिरोह का आदमी कुड़-कुड़ कुड़ कुड़ कड़ाक की आवाज़ निकालकर हुक्का पीता था तो दूसरे गिरोह के तमाम आदमी उसे एलान-जंग समझकर इससे भी कहीं ज़्यादा ज़ोर से कुड़-कुड़ कुड़-कुड़ कुर कुर कड़ाक कड़ाक कड़ाक की आवाज़ें निकालकर इस क़दर ज़ोर से हुक्का पीते थे कि चिलमों से आँचें निकल आती थीं और इस ज़िद्दम ज़िद्दा का नतीजा यह होता था कि पल भर में दोनों तरफ़ के सर लहू-लुहान होकर रह जाते थे।

लखनऊ के कमिश्नर या गवर्नर ने मलीहाबाद के बारे में यह जुमला निहायत खूब लिखा था कि मलीहाबाद दर्रा ख़ैबर का एक ऐसा अंश है जिसको हिंदुस्तान में अभी तक विलय नहीं हो सका।

मेरे कुल के विघटन के बाद मलीहाबाद की कमर टूटकर रह गई। तीनों ड्योढ़ियों[2] में से अब एक भी ड्योढ़ी बाक़ी नहीं रही—और मलीहाबाद की धाक दम तोड़ चुकी है।

फिर भी मेरे मलीहाबाद के तेवर अभी तक एकदम मिटने नहीं पाए हैं। हरचंद ज़मींदारी और ताल्लुक़ेदारी का ख़ात्मा फ़िज़ा पर एक ख़तरनाक सन्नाटे की तरह छाया हुआ है। मगर लोगों में पठनौटी का दम-ख़म और सिपहगिरी का तनतना आज तक बाक़ी है।

अब मलीहाबाद की हालत लखनऊ के उन मीर साहब की-सी है जो शबाब में इस क़दर ख़ूबरू और गबरू थे कि बड़ी-बड़ी नकचढ़ी परी जमालों के ग़रूरे-जमाल की पिंडलियाँ उनके रूबरू काँपने लगती थीं। शबाब ढलने के

१ ऊँची और चौड़ी चारपाई

२ मेरे बाप और मेरे दोनों चचाओं की ड्योढ़ियाँ।

बाद जब वह किसी शहर की सराय में जाकर ठहरे और बरामदे में बैठकर हुक्का पीने लगे और भठियारियों की लड़कियाँ उनके हुक्का पीने के अन्दाज और हर कश पर उनके गालों के गढ़ों पर हँसने लगीं तो उन्होंने झल्लाकर कहा : हँस लो ! कटूटी छोकरियो जी भरके हम लो। अगर जवानी में तुम मुझे देख लेतीं तो हाय मेरे अल्लाह हाय मेरे अल्लाह कहकर जमीन पर बैठ जातीं और छटपटाने लगतीं।

मेरी हवेली का भीतरी वातावरण

हर तरफ रोशनी थी रंगीनी थी चहल-पहल थी लौंडियाँ बांदियाँ, मामायें असील मुगलानियाँ अनायें खिलाइयाँ उस्तानियाँ पंखों की डोरियाँ खींचने और रातों को कहानियाँ सुनानेवालियाँ चारों तरफ चलती फिरती और हँसती-बोलती नजर आती थीं।

इस मुस्तकिल आबादी के अलावा शरीफ घरानों की गरीब औरतें भी चंद अच्छे दिन गुजारने के लिए आए दिन बतौर मेहमान आतीं एक-एक दो दो महीने रहतीं और जब चली जातीं तो नई मेहमान औरतें आकर उनकी जगह पूरी कर लेती थीं।

बाहरी वातावरण

खिदमतगारों रकाबदारों, फर्राशों, सिपाहियों मौलवियों मास्टरों मुसाहबों, दास्तानगोओं मुंशियों, जिलादारों और कारिंदों का हर तरफ एक हंगामा सा बरपा रहता था।

उनके अलावा बाहर के और लखनऊ के शायरों में से दो चार हमेशा बतौर मेहमान रहते और आए दिन मुशायरे हुआ करते थे।

और हम बच्चे मजा लिया करते थे अपने घर की हथिनी से, जिसको हम गन्ने खिलाते तो वह झूमती। और जब हम उसको 'नूरी अंडा' कहकर चिढ़ाते थे तो वह गुस्से के मारे जंजीरें तुड़ाने लगती थी।

मेरा परस्पर विरोधी स्वभाव

कुछ समझ में नहीं आता कि मैं बचपन में था क्या ? शोला था कि शबनम हदीद[1] था कि हरीर[2], नोके-खार था कि बरगे गुल खंजर था कि हिलाल चंगेज खाँ का अल्मबरदार था कि रहमतुल आल्मीन का परस्तार ?

एक रुख तो मैं इतना गुस्सैल था कि जरा-जरा सी बात में आप से बाहर हो जाता और जो भी सामने आता उसीको फाड़ खाया करता था।

---

१ पत्थर

२ रेशम

और एक रुख से इस कदर मेहरबान और फराखदिल था कि दूसरा के वास्ते बडी से बडी कुर्बानी के लिए आमादा रहता था।

मेरे गुस्से का यह आलम था कि साथ खेलनेवाले बच्चो से अगर किसी बात पर बिगड जाता तो बेंत मारमारकर उन बेचारो की खाल खीच लिया करता था।

और जब मास्टर बनकर अपना पढा हुआ सबक साथ के बच्चो को पढाता और दूसरे दिन उसे उनसे दोहरवाना और वे दोहरा न सकते तो उनको डडो से पीटता और उनके कधो पर सवार होकर उनको खच्चरो की तरह इस कदर सरपट दौडाया करता था कि उनकी जान पर बन आया करती थी।

अपनी छोटी बहन अनीसजहा से तो मेरे ऐसे-ऐसे जबदस्त हगामे हुआ करते थे कि अल्लाह की पनाह! वह भी बचपन मे मेरी ही तरह बदमिजाज, जल्द भडकनेवाली और चिडचिडी थी कि लडाई मे वह मेरा गरेबान पकडकर चाक कर लेती और मैं उसके झोटे पकडकर फक दिया करता था।

हर तीसरे चौथे रोज अनीस से मेरी महाभारत हुआ करती थी और अगनाई मे कुए के गिर्दो पेश का हिस्सा हमारा पानीपत का मैदान था। और ऐसा मैदान कि अगर मामायें, असीले आकर हमे छुडा न देती तो हम एक दूसरे को हलाक करके रख देते।

मेरी मा अपने बच्चो मे सबसे ज्यादा मुझे चाहती थी। और दूध और शहद का प्याला रोज सुबह मुझे अपने हाथ से पिलाया करती थी। अगर किसी दिन दूध के प्याले मे कोई जरा नजर आ जाता था तो मैं कम्बख्त तड-से प्याले को जमीन पर पटक दिया करता था और वह रोने लगती थी।

मैं अपने बाप से बेहद डरता था, और इस कदर कि जब उनके सामने जाता था तो मेरी चाल बदल जाया करती थी। लेकिन इसके बावजूद जब एक रोज मैं खरबूजे की फाकें चाकू की नोक से उठा उठाकर खा रहा था और उन्होने डाटकर यह कहा था कि यह क्या कर रहा है गधे, चाकू की नोक अगर तालू मे चुभ गई तो नाचता फिरेगा सारे घर मे, तो मुझे इस कदर गुस्सा आ गया था कि मैंने बाप की तरफ चाकू इस तरह निशाना बाधकर फेंक मारा था कि अगर वह उनके सीने मे चुभ जाता तो लहू लुहान हो जाते।

इसी तरह मैंने एक बार और भी अपने बाप के साथ गुस्ताखी की थी।

मेरे बाप का सख्ती के साथ यह हुक्म था कि हम बच्चो मे से कोई भी उनकी इजाजत के बगैर फाटक से बाहर कदम न रखे, और जब हम बाहर जाने की इजाजत दे देते तो चार-पाच सिपाही हमारे साथ कर दिया करते थे। एक रोज वह बाग तशरीफ ले जा चुके थे इस बात से फायदा उठाकर मैं मशीर अहमद खा रायपुरी के घर, जो बिलकुल मेरे फाटक के सामने था, चला गया। मशीर खा की मा अपने पोते यानी मेरे दोस्त मुख्तार को खाना

खिला रही थी। मुझे भी उन्होंने दस्तरख्वान पर बिठा लिया और अपने हाथ से लुकमे बना-बनाकर भिंडी खिलाई।

जब मजे की भिंडी खाकर घर आया तो देखा कि मेरे बाप बाग से आ गए और आराम कुर्सी पर लेटे हुए हैं। मुझे देखते ही उन्होंने त्योरी चढ़ाकर पूछा, 'कहां गए थे?' मैंने कहा, 'मशीर खां के घर।' उन्होंने पूछा, 'और मेरी इजाजत के बगैर?' मैंने कहा, 'आप यहां थे कहां?' उन्होंने कहा, 'मेरे आने का इन्तजार करते। और अगर गए भी थे तो सिपाहियों को साथ लिया होता।' मैंने कहा, 'मियां दो कदम के लिए सिपाही ले जाकर क्या करता।' उन्होंने चिढ़कर फरमाया, 'मुझसे दलील करता है।' वह उठे और हरोती की पतली-सी जरीब इस जोर से मेरी पीठ पर मारी कि मैं बिलबिला उठा और इन्तहाई दर्द के आलम में मुझ नालायक की जबान से निकल गया, 'अल्लाह करे मर जाएं मियां।'

यह सुनते ही मेरे बाप गुस्से के मारे दीवाने हो गए और जरीबों पर जरीब मारने लगे। वह तो कहिए मेरी दादीजान आ गईं और उन्होंने मेरे बाप की पुश्त पर लकड़ी मारकर कहा, 'क्या मार डालेगा बच्चे को?' और मेरे बाप ने फौरन हाथ रोक लिया।

मालूम नहीं क्यों मगर 'मियां बसन्त' से मेरी चिढ़ थी।

एक रोज मेरे बाप के कमरे में एक बड़ी खौफनाक दाढ़ी के मौलाना बड़ा-सा पग्गड़ बांधे और मोटे शीशों की ऐनक लगाए किसी मसले पर गुफ्तगू कर रहे थे कि मैं उधर आ निकला। मुझे देखते ही मशीर खां ने उन मौलाना के कान में कुछ कहकर मेरी तरफ इशारा किया, मौलाना ने झपटकर मुझे गोद में उठा लिया और मेरे सर पर बड़ी शफ्कत से हाथ फेरकर कहा, 'क्या मियां बसन्त क्या खाओगे?' यह सुनते ही मैंने उनकी दाढ़ी पकड़ ली और 'अबे मार डालूंगा' का नारा लगाकर इस जोर से उनकी दाढ़ी को झटका दिया कि उनका पग्गड़ ऐनक समेत जमीन पर गिर पड़ा। उनके मुंह से दर्दनाक चीख निकल गई। मशीर खां हंसते हंसते बेदम हो गए। मेरे बाप ने जोर लगाकर उनकी दाढ़ी मेरी गिरफ्त से छुड़ा दी, और मैं उफ उफ़ उफ़ करता बाहर निकल गया।

एक रोज़ मैं अपने फाटक पर बड़ी-सी हवाई बन्दूक भरे खड़ा हुआ था कि एक नाई का लड़का मेरे सामने से गुजरा लेकिन मुझे सलाम नहीं किया। उसकी इस गुस्ताखी पर मुझे ताव आ गया। मैंने उसपर दन्-से फायर कर दिया। बड़ा सा छर्रा उस बेचारे की पीठ में खुभ गया और वह गिरकर तड़पने लगा। और मुझ निर्दयी ने उसके तड़पने पर रहम खाने के बदले उसकी पसली पर ठोकर मारकर कहा, 'अबे दो कौड़ी के नाई उठ और सलाम कर।' जब वह गरीब कराहता हुआ उठा और झुककर मुझे सलाम किया तो मेरा गुस्सा ठंडा हो गया।

एक रोज़ याद नहीं किसी खता पर मैं अपने घर के गुलाम हुसनबख्श को जनाने मकान के सेहन में खड़ा मार रहा था छड़िया से तड़ातड़-तड़ातड़ कि ड्योढ़ी से दादा मियां तशरीफ ले आए। दम निकल गया उन्हें देखकर, कि अब वह मुझे मारें या डाटेंगे। लेकिन यह देखकर खुशी भरी हैरत हुई कि दादा मियां मुसकराते हुए आए। मेरा हाथ पकड़कर मुझे मेरे बाप के कमरे में ले गए और मेरे बाप से कहा 'बशीर, मैं तुमको मुबारकबाद देता हूं कि तुम्हारा यह मझला बेटा बड़ा सूरमा निकलेगा और बादशाहत से टक्कर लेगा।' जब मेरे बाप ने पूछा 'बावा, यह अन्दाज़ा कैसे हुआ?" तो उन्होंने फरमाया, 'यह गुलाम को मार रहा था और ऐसे तेवरों से मार रहा था कि सूरमा के सिवा ऐसे तेवर किसी को मयस्सर नहीं हो सकते।

'बशीर, हम पठान हैं। सूरमा और बुज़दिलों के तेवरों को हमसे ज्यादा और कौन समझ सकता है और इसलिए कि—सौ बरस से है पेशाए-आबा सिपहगिरी।

और फिर मुझसे इरशाद फरमाया कि बहने-बावा मैं दो गांव बकूहे-रास्त तेरे नाम लिख दूंगा। ले ये दो गिन्नियां, इसकी मिठाई खाना और इनमें से पांच रुपये उस गुलाम को दे देना जिसको तू अभी मार रहा था।

आपने मेरा गुस्सा देख लिया अब मेरी फराखदिली का रुख भी देख लीजिए।

मेरे बचपन तक मेरे घर में चाय का रिवाज नहीं था। नाश्ते में हम निहायत खस्ता रोग़नी रोटियां बालाई और अंडे खाते और शहद मिला खालिस दूध पिया करते थे। जाड़ों के ज़माने में नाश्ते के बाद जब हमारी जेबों में छिले चिलगोज़े अखरोट की गिरी, किशमिश, बादामों का मग्ज़ और साफ किए हुए पिस्ते भर दिए जाते थे तो मैं बाहर आकर आवाज़ दिया करता था—'बर्फ के छुड़ाव्वियो चलो।'

पहले इस नारे को समझ लीजिए।

मेरे दादा के बावर्चीखाने की छत पर मिट्टी के कोरे बरतन मसालों लगाकर रख दिए जाते थे जिनमें पिछले पहर तक बर्फ जम जाती थी और मुंह अंधेरे बर्फखाने के आदमी पुकारते थे मज़दूरों को—'ऐ बर्फ के छुड़ाव्वियो, चलो। ऐ बर्फ के छुड़ानेवालो आओ।' और वे मज़दूर आकर बरतनों से बर्फ खुरच-खुरचकर छुड़ाते और खत्तों में कूट-कूटकर भर दिया करते थे। और इन खत्तों में जस्त की सुराहियां दबा दी जाती थीं। यह समझ लेने के बाद अब यह सुनिए कि ज्योंही मैं 'बर्फ के छुड़ाव्वियो चलो' का नारा लगाता था तो लौंडियों और मामाओं के तमाम बच्चे दौड़-दौड़कर मेरे पास आ जाया करते थे। और मैं 'ऐ मेरे टाघनो चने चबाओ' यह कह-कहकर अपना सारा मेवा उन्हें खिला दिया करता था।

जब कभी समदा तालाब के जोगी मुंह अंधेरे यह गीत गाते हुए मेरे दरवाज़े पर आते थे—

ले बेटा तेरी अना आ गई और मैं उस गुड़िया से चिपटकर सो जाया करता था।

एक रोज जबकि बड़े धूम धड़क्के से रिम झिम पानी बरस रहा था, ओलौतिया टपक रही थी, परनाले धन धड़ चल रहे थे अगनाई के भरे हुए पानी में जा-बजा भवर पड़ रहे थे कि मुहम्मद शेर खा सिपाही ने लहक लहक कर मल्हार गाना शुरू कर दिया

मनमोहन बिन कल ना पड़े रे—अरी ओ सखी, अरी ओ सखी

हाय भीगे दरो दीवार मस्ताना बौछार मनी का सितार, पीहू की पुकार, विरह की झकार और मुहम्मद शेर खा का मल्हार—खुदा ही जाने क्या चोट लग गई मेरे मासूम दिल पर कि मैं रोने लगा जारो कतार।

अभी मैं बरखा की झड़ी और मल्हार के झूले में झूल ही रहा था कि सारा मजा किरकरा कर दिया जहूरअली खा ने यह कहकर कि मुहम्मद शेर खा तुम्हें खा साहब बहादुर (मेरे बाप) बुला रहे हैं। मैं हाय करके रह गया, खन से चकनाचूर हो गया मेरा सागरे-सरशार (भरा प्याला), और चट से टूट गया मेरा नगमा नम का तार।

और जब मैंने यह सुना कि मेरे बाप शेर मुहम्मद को जोर जोर से डाट रहे हैं कि मैंने कहा था कहार बुला लाओ और तुम अभी तक नहीं गए तो मैं छतरी लगाकर अपने बाप के कमरे में जाकर बे अख्तियार रोने लगा। मेरे बाप ने बड़ी हैरत से पूछा—"बेटा, किस बात पर रो रहे हो?" मैंने रुक रुककर कहा, 'मियां यह मुहम्मद शेर खा यह कहते ही मेरी आवाज रुध गई। मेरे बाप ने चारपाई से उठकर मुझे घुटने पर बिठा लिया और बहुत चुमकारकर पूछा—बेटा जल्दी बताओ क्या बात है।

मैंने रुआसी आवाज में कहा—मियां पेटे का पानी बरस रहा है। यह मुझे अभी मल्हार सुना रहे थे और अब इनपर डाट फटकार हो रही है।

यह सुनते ही मियां ने मुझे छाती से लगा लिया और कहा—बेटा तू आगे चलकर शायर हो जाएगा और हमारे खानदान का नाम तुमसे रोशन होगा मुहम्मद शेर जाओ इसे मल्हार सुनाओ और जहूरअली को भेज दो कहार बुलाने के लिए।'

मैं अपनी पचासी बरस की खिलाई अब्बासी खानम का जिक्र कर चुका हूं जिन्हें मैं बड़ी बी' कहा करता था। हम दोनों एक दूसरे पर जान न्योछावर करते थे। मुझे बरफी बेहद पसद थी। और बुजा या बिल्लाह हलवाई की दुकान से हर सुबह को बरफी का एक दोना आ जाया करता था। यह क्योंकर हो सकता था कि मैं बरफी खाऊं और बड़ी बी को न खिलाऊं—और यही नहीं मेरी यह तमन्ना होती थी कि आधा दोना मैं खाऊं और आधा दोना अपनी बड़ी बी को खिलाऊं। लेकिन मेरी उल्टी खोपड़ी में यह बात नहीं आती थी कि बड़ी बी जैसी फूसी बूढ़ी औरत आधा दोना क्या

३

मेरी बिस्मिल्लाह

अरे मैं अपनी बिस्मिल्लाह का हाल लिखना तो भूल ही गया। इसे पहले ही आना चाहिए था। खैर अब सुन लीजिए। जरा सी तो बात ही है। उस मौके पर क्या-क्या रस्म हुई थी, विस्तार से याद नहीं है। बस इसी कदर खयाल है कि कम उम्री में मेरी बिस्मिल्लाह हुई थी। चांदी की थाली में सोने की दवात साने के खोल का कलम और कुरआन मेरे सामने रखा गया था और मुझे सबसे पहले अध्यापक मौलवी नयाजअली खा ने मुझसे कहा था— मियां साहबजादे, कहिए बिस्मिल्लाह। इसके बाद हाजिरीन के गलों में हार डाले गए थे और मिठाई तकसीम की गई थी। दादा मियां भी मौजूद थे जिन्होंने बुलन्द आवाज में यह मिसरा पढ़ा था—

कलम गोयद कि मन शाहे-जहानम।

(कलम कहती है कि मैं संसार का सम्राट हूं।)

उसी रात को जनाने में डोमनियों का गाना और मर्दाने में तवाइफों का मुजरा हुआ था—और मुझे दूल्हा बनाकर बीच में बिठा दिया गया था।

मेरे उस्ताद

मेरे फारसी के उस्ताद थे मौलवी नयाजअली खा उर्दू के मौलाना ताहिरअली, अरबी के मौलवी कुदरतुल्लाह बेग और अंग्रेजी के थे मास्टर गोमतीप्रसाद।

मौलवी नयाजअली खा एक रूखे खुश्क मिजाज आदमी थे। मौलाना ताहिरअली बड़े ही खुशदिल थे और शायर भी। उनका यह एक शे'र अब तक याद है —

शाहरा जो सुना हुस्न का ताहिर की जबानी,
नाशीदा मैं आशिक हुआ, तुझ पर मिरी जानी।

मौलवी कुदरतुल्लाह बेग फारसी और अरबी के प्रकांड पंडित थे। मेरे पास उनकी एक मसनवी मौजूद है जिसमें लगभग पांच हजार शे'र हैं। और अचरज की बात यह है कि इस मसनवी के तमाम शे'र ऐसे हैं कि उनमें एक लफ्ज भी नुक्तादार मौजूद नहीं है जिससे अंदाजा किया जा सकता है उनके अथाह शब्द भंडार का।

अब रहे मास्टर गोमतीप्रसाद सो वह बड़े ही मस्कीन और खामोश आदमी थे। लेकिन इस ढंग से पढ़ाते थे कि अक्षर-अक्षर मन पर अंकित हो जाता था। उसके बहुत दिन के बाद मेरे बाप ने हजरत मानी जायसी को मेरा ट्यूटर मुकर्रर फरमाया था।

सूर्योदय का प्रथम दर्शन

हमारे घर के अंदर चुटकुलों नक्लों और कहानियों के कारण दिन रहता था रात के ग्यारह बजे तक, और रात रहती थी दिन के बारह एक बजे तक। इसलिए इस माहौल में पला हुआ बच्चा वाकिफ ही कैसे हो सकता था सुबह की रंगीनियों से?

मेरे बाप रबी और खरीफ के जमाने में अपने इलाके के दौरे पर तशरीफ ले जाया करते थे और उन अवसरों पर वह सो रहते थे आठ नौ बजे रात को और जाग उठते थे सुबह तीन चार बजे।

एक बार जब वह दौरे पर जानेवाले थे तो मैंने दरख्वास्त की थी कि मियां हमें भी अपने साथ लेते चलिएगा। तो उन्होंने मेरी दरख्वास्त मंजूर करके बुआ लहाजन को नियुक्त किया था कि मुझे बहुत तड़के जगा दें।

जब लहाजन बुआ ने बहुत तड़के मुझे झंझोड़कर जगाया कि भैया उठ बैठो मियां के साथ गांव जाना है तो मैं उठ बैठा और आंखें मलकर निगाह उठाई तो बड़ी हैरत के साथ जब यह देखा कि गंगा जमनी परियां नकाबों के सेहरों को चुटकियों में तोले रसमसाते आसमान से कसमसाती जमीन की तरफ उड़ती चली आ रही है, तो मेरे दिल ने पूछा अरे यह हो क्या रहा है?—दिन है न रात अंधेरा है न उजाला—अंधेरे में उजाला—उजाले में अंधेरा—एक तरफ मखमल कमख्वाब सुरमा काजल गेसू मलमल करब और रेशम और एक तरफ सल्मा सितारा गोटा किनारी सोना चांदी मरमर लचका पटठा, अबीर और गुलाल फिजा पर सुनहरे तारों का जाल और बड़ा आहिस्तगी के साथ उभरता हुआ कुंदन का थाल।

छलांगें भरता नीम के नीचे गया। शाख पर चहचहाती चिड़िया भरा मारकर उड़ गई। हाथ फैलाकर नीम को छाती से लगा लिया। डाली को झुकाकर उसकी पत्तियों को चूम लिया—दीवानावार मैदान में पहुंचा। देखा कि म्याना सहन में रखा हुआ है। कहार चिलम पी-पीकर खांस रहे हैं। उनकी खांसी भी अच्छी लगी। सिपाही ला इला इल्लल्लाह कहकर मुंह धो रहे हैं। उनके कलमा की आवाज ने दिल मोह लिया। फाटक के करीब घोड़े दुम हिला रहे हैं कुएं के पास खड़ी हुई हथिनी झूम रही है अलाव के गिर्द पासी बैठे ताप रहे हैं अलाव की उछलती आंच में जुहरा की कमर लचक रही है और यह सारा समां इन्द्र के अखाड़े में तब्दील हो गया। मैं चहकी चकारे के मानिन्द दौड़कर सामने के कमरे में दाखिल हो गया। कमरे की समोई सर्दी-गर्मी से दिल खुश हो गया। मैं जरा-सा मुड़कर और एक कद्दे-आदम आईने के सामने जाकर अपना मुंह देखने लगा। गालों पर सुर्खी के इन्तजार आंखों में गुलाबी डोरे इकहरा बदन पतली कमर घनेरे बाल, पतले-पतले होंठ लम्बी-लम्बी पलकें—देह पर रेशमी कुर्ता कुर्ते पर रुई भरा मखमली सदरी,

सर पर आड़ी जर्नैली टोपी, टोपी के गिर्द आगर का सुनहरा फीता और दाहिने कान में हिलता हुआ सोने का झलाझल, उफ़ मैं किस कदर हसीन हूँ। जिन्दगी में पहली बार इसका पता चला। अल्लाह भला करे पौ फटने की रंगीनी का जिसने मेरे छिपे रूप को मुझ पर ज़ाहिर कर दिया।

गाँव का पहला दृश्य

किरन फूटते ही हमारा काफ़िला चल पड़ा। मेरे बाप आठ कहारोंवाले म्याने में, जिलेदार और सम्बन्धी घोड़ों पर, मेरे बड़े भाई मशीर अहमद खाँ रामपुरी और मैं हथिनी पर, बाकी तमाम खिदमतगार, सिपाही और गुडीत[1] (गोइन्त) पैदल।

पाँच छः मील का सफ़र तय करके हमारा काफ़िला मयदपुर में दाखिल हुआ तो, चूँकि इससे पहले मैंने कभी गाँव देखा ही न था, मेरी आँख खुली की खुली रह गई। अल्लाह-अल्लाह जहाँ तक नज़र जाती थी, झूमते लहलहाते और गुनगुनाते खेत और खेतों में धरती माता की उगी हुई तमन्नाएँ। बीच-बीच में कम खानी पगडंडियाँ, चलती बड़ियाँ और परगहियों की बदौलत गहरी-गहरी नालियों में शहर के चूल्हों को आग बख़्शनेवाले बहते पानी की कुड-बुड-कुन्दुन, सुनहरी और मुलायम किरणों से धीमी की लहरों की झलमल-झलमल, किनारे पर ख़ूबसूरत मुर्गाबियों की कतारें पर मारती हुई और लहरों में उनकी रह रहकर डुबकियाँ। और मुलायम कंधों पर खेतों की तरावट, और बालियों की ख़ुशबू उठाए हुए ठंडे झोंकों की पाकीज़गी और लताफ़त—और खेतों से दूर कच्चे-कच्चे लिपे पुते मकानों, छप्पर, ऊँचे-ऊँचे खलिहान—निराई करनेवाली जवान-जवान औरतें और सुन्दर गूजर छोकरियाँ, उधर तूफ़ान इधर उठान। इनके लाल-पीले लहँगे, ऊदी ऊदी चुनरियाँ, मेहनत के पाले हुए छलकते शादाब चेहरे और गठे गठे चटकन बदन, ऐसे बदन कि पूरी तरह कसमसाकर अंगड़ाई आए तो जिल्द मसककर रह जाए और देखनेवाले के दिल में यह आरज़ू धूम मचाए कि इन्हें छूकर भी देख लिया जाए कि ये बनी हैं किन तत्वों से। यह समा देखकर मेरे सीने की तमाम खिड़कियाँ खुल गईं—रग रग में उल्लास के फव्वारे छूटने लगे, निचले पपोटों के नीचे खुनकी दौड़ गई, आँखें जैसे एकदम से बड़ी हो गईं, निगाह झुकी तो अपने चेहरे की सुर्ख़ी नज़र आ गई, पोर पोर में ताज़गी अंगुलियाँ चटखाने लगी, माग न्न का गर-महमूर अमर एक मासूम अय्याशी बन गया और मेरे जिस्म के अन्दर पौ फटने लगी। सवेरा हो गया।

इसी आलम में हमारा काफ़िला मना के पचासों में से गुज़रता, सजदा धरती चूमनेवाले सलामों का सिर्फ़ सर हिलाकर जवाब देना—हथिनी की बार-बार बढ़ती हुई सूँड में टूटते गन्नों की चटाख चटाख सुनना, कारे पिछा

1 वे पासी जो गाँव में पुलिस का काम करते हैं।

था कच्ची-पक्की सड़कों में घूमता और गाँव की झलकियाँ दिखाता तांगा खेतों के पास गुजरता हुआ और ताल-तलैयों की बगल से गुजरता हुआ आखिर थाने पहुंच गया।

हमारे थाने पहुंचते ही खूब जोर-ओ-शोर था और हम लोगों आँखों के पास से नजराना ले रहे थे और हम दालान में गद्दों पर गावतकिये से लगे तख्त पर बड़ी बेपरवाही के साथ गावतकियों पर और हम लोग पैर फैलाने लगे। थोड़ी देर में प्याज के मसालों के समोसे मिलाने का तख्त पर अम्बार लग गया। पकौड़ी भी बन गई।

फिर जब रुपये बरसने शुरू हुए तो रामपुर के ठिगने महाजन—मक्खन शाह—हाथों में सोने की अंगूठियां पहने और धोती के दामन और दाढ़ी के गले की हरकती थोंदें गुड़गुड़ाते आए—अपने नौकर के सर से रुपयों का भरा हुआ चाँदी का थाल उतारा—उसे हम लोगों भाइयों के सर पर सदके के तौर पर तीन मर्तबा घुमाया और फिर एक बड़े छनाके के साथ थाल का तमाम रुपया फर्श पर गिरा दिया। खालिस चांदी के खनकते रुपये फर्श पर इधर-उधर नाचने दौड़ने लगे और हमारे नौकरों ने रीत के अनुसार वे तमाम रुपये लूट लिए।

अब दोपहर के खाने का वक्त आ गया। जब अली फकीर दस्तरख्वान पर अपने हाथ का पकाया खाना चुनने लगा और दम भर में हमारे मुराव अहीर और ब्राह्मण काश्तकार अपने-अपने सरों पर पकवान उठाए हुए आए और देखते ही देखते हमारे सामने पूरियों, कचौरियों, भांति भांति की तरकारियाँ, तली मछली के टुकड़े, गुलगुले, फलकियाँ, दूध-दही की हांडियां, मिठाइयां और रसावल[2] की बड़ी-बड़ी लुटियों का एक अम्बार लग गया।

खाने के बाद मेरे बाप हस्बे मामूल अन्दर के कमरे में जाकर सो गए। मैं भी थकान के कारण चाह रहा था कि थोड़ी देर के लिए लेट जाऊं कि बाहर से आलमगीर फुप्पा की गरजती आवाज सुनाई दी। बाहर गया, तो देखा कि एक सर से पांव तक झुर्रियों में लिपटा हुआ काश्तकार अपने बेटे के कंधे पर हाथ रखे फुप्पा से अपनी जबान में यह कह रहा है कि खान साहब बहादुर आप खुद मेरी सामने खड़ी हुई बीवी को देख लें। उसे सूखे का रोग लग गया था। उसकी दवा-दारू ने मुझे खाक कर दिया है। आधा लगान अभी ले लीजिए, आधा दूसरी फसल पर अदा कर दूंगा।

उसका यह उज्र सुनकर फुप्पा ने एक मोटी-सी गाली देकर कहा—'अब एक आना भी कम नहीं लूंगा पूरा लगान अदा कर पूरा।' उस बूढ़े फूस ने थरथराती आवाज में कहा— भगवान की कसम आधे लगान से ज्यादा मेरे पास एक फूटी कौड़ी भी नहीं है। यह सुनते ही फुप्पा उठे और एक थप्पड़ उसके मुंह पर इतने चनाटे से मारा कि वह धड़ाम से जमीन पर गिर पड़ा। उसकी मुरझाई हुई बीवी की आंखों से फुल फुल आंसू बहने लगे उसके बेटे ने

१ गांव का नाम। २ गन्ने के रस और चावल से बना मीठा भात।

शम से आखे चुरा ली। गिरे हुए बूढे ने अपनी रोती हुई बीवी और सहमे हुए बेबस लडके का एसी नजर स देखा कि मेरी सास मेरे गले में उलझ गई और फिर एक रदनाक चीख मारकर मैं थान म दाखिल होकर अपने साए हुए बाप के सिरहाने जाकर खडा हो गया और हिचकिया ले-लेकर रोने लगा। मेरी हिचकियो से उनकी आख खुल गई और इतहाई घबराहट के साथ उन्होने मुझसे पूछा— अरे क्या हुआ, अरे क्या हुआ ?

मैंने उस बूढे किसान की हालत और फुप्पा की निष्ठुरता का सारा माजरा बयान कर दिया। मेरे बाप की आखें नमनाक हो गइ। सालेह मुहम्मद खा को हुक्म दिया कि उस बूढे किसान को मेरे पास बुला लाओ। वह बूढा मेरे बाप के कदमो पर गिरकर कहने लगा—'दुहाई खान बहादुर साहब की।' इतने म उसकी बीवी भी अपने बेटे के साथ आ गई और वे दोना भी फूट-फूटकर रोने लगे। मेरे बाप न उन्हे तसल्ली देकर मुडीन को हुक्म दिया कि मातादीन पटवारी को बुला लाओ। पटवारी आ गया तो उन्होने फरमाया— मातादीन स्याहे म इस किसान के लगान की पूरी बकाकी दर्ज कर लो और इसी वक्त रसीद इसके हवाले कर दो।'

बूढे किसान उसकी बीमार बीवी और उसके बेटे की आखें शुक्रिये के आसुओ की मडी बरसाने लगी। मुझे ऐसा महसूस हुआ जैसे किसी ने मेरे दिल के घाव पर मरहम रख दिया हो। और जब वे तीनो आदमी जय खान साहब बहादुर की ऐ भगवान खान साहब बहादुर का राज सदा धार तक रहे, कहते चले गए, तो मेरे तमाम रोगटे खडे हो गए। मुझे अपने बाप की सूरत और भी अच्छी लगने लगी और आलमगीर फुप्पा से एसी नफरत हुइ कि जब मेरा जमाना आया तो मैंने बडे लतीफ हीले के साथ उससे जिल्दारी निकालकर अपनी फुफेरी बहन के बेटे रवाजा हसन खा के सिपुर्द कर दी। लेकिन वह भी बुरे साबित हुए। फुप्पा नगी तलवार थे तो वह मीठी छुरी निकले। गरज कि रयत को आराम नहीं मिल सका।

मेरा खतना

लीजिए अपना बिस्मिल्लाह की तरह मैं अपने खतने (सुन्नत) का भी जिक्र करना भूल गया आगे—बहुत आगे निकल गया। क्या करू अब सुनाए देता हू कोई पनवाडा तो है नही। मेरा खतना कम उम्री म हुआ था और खूब याद है कि दादा मिया ने फरमाया था कि देखू कौन रोने की आवाज मुह से निकलने न पाए। लेकिन लाल दादी के जाहिली हज्जाम ने धोखी मार कर जब चट से मेरा खतना कर दिया—मेरी चीख निकल गइ थी। दादा मिया के माथे पर बल पड गए थे और मैं शर्म से गडकर रह गया। आज भी दादा मिया के माथे के बल जब याद आते हैं तो दिल पर कटारिया-सी चलने लगती हैं।

हरचन्द मेरे खतने की रस्म बड़ी धूम धाम से मनाई गई थी, देगें चढ़ी थीं, तवायफ़ों के मुजरे हुए थे, कश्मीरिया ने नज़रें दी थीं। मगर मेरे दिल की कली मुरझाई हुई-सी रही थी। इस मुरझाहट के दो कारण थे। पहला कारण तो यही मेरी खतने के वक्त की पीड़ा थी और दूसरा कारण यह था कि मेरे खतने की खुशी में जिस वक्त मसीहुज्जमाँ के एक ताहुर ने एक बड़ी खूबसूरत और छलछलाती किरच बतौर नज़र पेश की थी तो उस किरच को हाथ में लेते ही मुझ पर ऐसा जनून (उन्माद) तारी हो गया था कि मैंने अपने गुलामज़ादे हुसनबख्श के नंगे सर पर ज़ोर से मार दी थी। और उस बेचारे के सर से धल धल खून बहने लगा था। फ़ौरन उसकी तो तुरंत मरहम-पट्टी और उसके बाप की मुँह भराई कर दी गई थी। लेकिन मेरे दिल का भार कम नहीं होता था और मुझे खूब याद है कि कश्मीरिया की हँसानेवाली नज़रें भी मुझे हँसा नहीं सकी थीं। दिल ही तो है।

४

लखनऊ का पहला सफर

हमारी गाड़ी अकबरी दरवाजे के सामने जाकर खड़ी हो गई और हमारा सामान वामवाली सराय में जाने लगा। लखनऊवाले हमारे अफगानी खद्दो-खाल और डील-डौल, हमारे सिपाहियों की सज धज, उनके बड़े-बड़े पग्गड़ उनके मोटे मोटे लट्ठ देखने के लिए ठट लगाकर हमारे गिर्द जमा हो गए।

मैंने अकबरी दरवाजे के अन्दर कदम रखा तो देखा कि इस चौड़े चकले दरवाजे के दायें-बायें लकड़ी के तख्तों पर मिट्टी के इस कदर सजल सुंदर सुबक और नाजुक खिलौने ऊपर-तले रखे हुए हैं कि उन्हें देख यह खयाल होने लगा कि करीब जाऊं तो हर खिलौना पलकें झुकाने और बातें करने लगेगा और गुजरिया भाव बताने लगेगी और सक्का को अगर जरा-सा भी छू लिया तो उनकी भरी मशकों से धल धल पानी बहने लगेगा।

खिलौने खरीदकर जब मैंने चौक में कदम रखा अगर और लोबान की लपटों ने मेरा स्वागत किया। आगे बढ़ा तो चान्दी के वर्क कटने की नपी-तुली आवाज ने मेरे पांव में जंजीर डाल दी। वह व्यवस्थित और संगठित खटा-खट ऐसी मालूम हुई जैसे तबले पर बोल कट रहे हैं। फिर हारवाले की सुरीली आवाज आई 'हार बेले के फूल चम्पा के' वहां से आगे बढ़ा तो क्या बताऊं क्या क्या देखा ? हाय तवाइफों की वे झिलमिलाती निखरी कुर्तियां, वे दुपल्ली टोपियां वे शरबती अंगरखे वे घने घने पट्ठे वे चूड़ीदार पायजामे कंधों पर वे बड़े-बड़े रेशमी रूमाल आड़ी तिरछी मांगें, कल्लों में दबी हुई सुगंधित गिलौरियां साकियों और साकिनों के हाथों में वे खुशबूदार तम्बाकू के हुक्के हुक्कों पर वे लिपटे हार, हारों से पानी के कतरों का वह टपकना वे बजते झकोरे, वे सारंगियों की थरथराहट वे हवा में झंकार वे गमकते हुए तबले बालाखानों के सज्जों से वह मुखड़ों की बरसती हुई चान्दनी और जुल्फों के गिरते हुए स्याह आबशार (प्रपात), कोठेवालियों में कोई गोरी कोई चम्पई कोई सांवली-सलोनी खद्दो-खाल इस कदर बारीक गोया हीरे के कलम से तराशे हुए कोई कड़ीयल जवान कोई नौजवान और कोई इन दोनों के दरम्यान, गाया हुमकती हुई उठान, कोई गठे जिस्म की और कोई धान पान—किसी की नाक में नथ किसी की नाक में नीम का तिनका तमाशाइयों का हुजूम, शाने से शाना छिलते रहे और कोठों पर नजर जमाए हुए विपरीत दिशाओं से आने जाने वालों के सीनों की टकराव और टकराव पर वह विनीत क्षमा-याचना। मैं अभी इस तिलिस्म के दरिया में गोते खा रहा था कि मनीर खां ने मेरा हाथ पकड़कर अपनी तरफ खींचा। मैं किनारे पर आ गया। सारा तिलिस्म टूट गया। और मैं सबके साथ, मियां के पीछे-पीछे सर झुकाकर सराय आ गया।

सराय में कदम रखते ही दम-सा घुटने लगा। मैंने बड़ी लजाजत के साथ कहा—'मियां, हम सिपाहियों को साथ लेकर नीचे घूम आएं ?" मशीर खां मुस्कराए और मियां ने बड़ी भयंकर संजीदगी से कहा—'चोर बच्चों के टहलने की जगह नहीं है।' मैं कलेजा मसोसकर रह गया।

इतने में सालेह मुहम्मद खां ढार[1] को साथ लिए आ गए। उसने जस्ते की बड़ी बड़ी कुल्फियां को दोनों हाथों की हथेलियों में बड़े माहिराना अन्दाज़ से घुमा घुमाकर और बालाई के कागज़ी आबखोरों को मिट्टी की सोंधी सोंधी रकाबियों में खोल-खोलकर पेश किया। और मिट्टी के कोरे-कोरे चमचे भी सामने रख दिए। क्या बताऊं इन कुल्फियों और आबखोरों की लज़्ज़त और मुलायमत ज़बान ने इससे पहले कभी कोई ऐसी चीज चखी ही नहीं थी। उनके मज़े का बयान करूं तो क्योंकर ? उपमा दूं तो किस चीज़ से ?—और मुलायमत का तो यह आलम कि उन्हें सिर्फ होंठों से और तालू से खाया और नज़र की हरारत से पिघलाया जा सकता था। रात होते ही हमारे बावरची के पकाए हुए खानों के साथ साथ—अब्दुल्ला की दुकान की पूरियां, अहमद की बाकरखानियां, सआदत की शीरमालें, शबराती के अठारह-अठारह परतों के पराठे, झुम्मन रकाबदार के भुने हुए मुर्ग, शाहिद का बटेरों का पुलाव, हैदर हुसन खां के फाटक की गली का अनन्नास का मुज़अफर, गुलाम हुसन खां के पुल के कबाब, कप्तान के कुएं की पिस्ते बादाम की मिठाई और हसनाबाद की बालाई। और न जाने क्या-क्या न्यामतें हमारे दस्तरख्वान पर चुन दी गईं—और मैं खा-पीकर सो रहा।

भोर-दर्शन की चाट तो पड़ ही चुकी थी। मैं सबसे पहले बेदार होकर बालाखाने की छत पर चढ़ गया। सुबह का स्वागत करने को जब आसमान की तरफ नज़र उठाई, शहर की ऊंची-ऊंची इमारतों के कारण उषा की रंगीनी दूर दूर भी नज़र न आई। आंखें मुरझा गईं। मैंने देखा पौ तो ज़रूर फट रही है और मुर्ग भी बांग दे रहे हैं, लेकिन न पौ फटने में सुहानापन है और न मुर्गों की बांग में ज़ोर—ज़मीन से आसमान तक एक फीकापन छाया हुआ है। सांस लेता हूं तो धुआं भरी मोटी मोटी हवा सीने को खुरच और दिल पर बोझ डाल रही है। प्रातः-समीर चल रही है पर उसके झोंकों में प्यार नहीं है। प्रकृति की दुल्हन के पांव में न चांदी के घुंघरू हैं न सर पर छतरी। मेरे बचपन के ऐसी मलगजी मलगजी खाई-खाई फीकी फीकी उखड़ी-उखड़ी रूठी रूठी रूठी रूठी औंधी-औंधी गंगी-गूंगी भिंची भिंची और बुझी बुझी सुबह को देखकर गुल हो गए और धुआं देने लगे। मैं भारी दिल के साथ नीचे आया और मुंह-हाथ धोने लगा—मुंह पर बार-बार छपाके मारे, दिल की कली नहीं खिली।

---

१ लखनऊ का सबसे बेहतर कुल्फीवाला जो [illegible] पार्टियों में बुलाया जाता था।

इतने में नाश्ता आ गया। रोगनी रोटी, अंडों के सितारे, बालाई शीर-माल और नुमश का नाश्ता करके फारिग हुआ तो मेरे बाप ने दो सिपाहियों और मशीर खां को साथ करके मुझे लखनऊ की सैर के लिए रवाना कर दिया।

मैंने लखनऊ में हफ्ता भर रहकर नीचे लिखे स्थान देखे

हुसैनाबाद की शाही कोठी उसका क्लाक-टावर, हुसैनाबाद का इमामबाड़ा उसकी भूलभुलैयां, आसफुद्दौला का इमामबाड़ा, रूमी दरवाज़ा, हज़रत अब्बास की दरगाह नजफ अशरफ ताल कटोरे और भूल कटोरे की करबलाएं, बेलीगारद[1], अजायबघर, शाह पीर मुहम्मद टीले की मस्जिद शाह मीनार का मजार और मोती महल हज़रतगंज, चुनिया बाज़ार अमीनाबाद, गोमती, ठण्डी सड़क लोहे का पुल, लाल बाग, सिकंदर बाग बदरिया बाग, विक्टोरिया बाग और बनारसी बाग और छतर मंज़िल का फक्त वह हिस्सा जो सड़कों से नज़र आता है। हरचंद मेरी लड़कपन की नज़र में ये सारे स्थल बड़े अजीब थे लेकिन इनसे भी अजीबतर नज़र आए लखनऊ के वे रईस आलिम अदीब और शायर जो मेरे बाप के पास आते थे। वह उनके वहां तशरीफ ले जाया करते थे। अल्लाह-अल्लाह उनके वे लचकीले सलाम, उनके उठने-बैठने के वे पाकीज़ा अंदाज़, उनके वे तहज़ीब में डूबे हाव भाव उनके लिबास की वह अनोखी तराश-खराश सामाजिक और साहित्यिक समस्याओं पर उनका वह वाद विवाद, उनके शब्दों का ठहराव, उनके लहजों के वे कटाव गज़ल सुनाते समय शेर के भाव के अनुसार उनकी आंखों का रंग और चेहरों का उतार-चढ़ाव वह कहकहों से बचाव, उनका हल्का-हल्का तबस्सुम विनम्रता के सांचे में ढला हुआ उनका वह स्वाभिमान और बावजूदे-कमाल उनका वह हाथ जोड़-जोड़कर अपनी कम इल्मी का एतराफ। ये सारी बातें देखकर मैं आश्चर्यचकित रह गया। वे तमाम लोग इस कदर सभ्य, शालीन और सुसंस्कृत थे कि ऐसा मालूम होता था वे इस दुनिया के नहीं किसी प्रकाश-मंडल के वासी हैं।

इन्हीं बुजुर्गों की जूतियां सीधी करके मैंने शाइस्तगी (शालीनता) सीखी और यह ज़रा-सी सुध-बुध जो आज मुझे अदब और ज़बान पर हासिल है, यह उन्हीं की सोहबत का असर है।

अब वह लखनऊ है न लखनऊ वाले। एक-एक करके सब चले गए खाक के नीचे। खा गई मिट्टी उनके जौहरों को। बहुत दिन हुए, मैंने एक रुबाई कही थी

जलती हुई शमआ को बुझाने वाले
जीता नहीं छोड़ेंगे ज़माने वाले
लो-देहली पे, लखनऊ ने यह कहा,
अब हम भी हैं कुछ रोज़ में आने वाले।

[1] वह इमारत जिसमें बेली साहब ने शरण ली थी और १८५७ के सिपाही सैनिकों ने उसे गोलियों से छलनी कर दिया था।

५

फिरंगी से नफरत

एक रोज मैं लखनऊ के नक्खास वाले मकान की बालाई मंजिल के बरामदे में अपनी खिलाई 'बड़ी बी' के साथ बैठा हुआ था कि सड़क से अचानक 'तड़ाक-तड़ाक' की आवाजें आईं। बड़ी बी ने झुककर देखा और जार-जार से रोने लगीं। मैंने पूछा— 'यह बैठे बिठाए रोने क्या लगीं, बड़ी बी ?' उन्होंने रोते हुए कहा— 'बेटा! मुआ गाड़ीवाला घोड़े को चाबुक से मार रहा है तड़ाक-तड़ाक। हाय हमारे जाने-आलम पिया के जमाने में इन घोड़ों को रईसों की आबरू समझा जाता था। इन्हें दूध जलेबी और बालाई खिलाई जाती थी। जब से इन बंदर फिरंगियों का राज हुआ है इन गाजी मर्दों को चाबुकों से मारा जाने लगा है। बेटा ये गाजी मर्द किस कतार शुमार में हैं इन बंदरों का जब से दौर दौरा हुआ है बड़े बड़े शरीफजादे गलियों में जूतियां चटखाते फिरने लगे हैं।' उन्होंने यह कहते-कहते अपने थ-थाटी के खाकस्तर सीने पर हाथ मारकर कहा— हाय हमारे जाने-आलम पिया अब कभी नहीं पलटेंगे। बड़ी बी की यह बात सुनकर मैं बिलबिला गया और मुझे फिरंगी से नफरत हो गई और वही लड़कपन की नफरत आगे चलकर मेरी सियासी नज्मों के रूप में व्यक्त होने लगी।

अब जरा मेरी मूछों के कूंडों[1] का धूम धड़क्का भी देख लीजिए। उधर जनाने मकान के चौड़े चौड़े दरवाजों और ऊंची-ऊंची महराबों के लम्बे चौड़े दालानों में चांदनी का फर्श बिछा हुआ है। दीवारगीरियां, झब्बे और गैस के हंडे जल रहे हैं। औरतें गाव तकियों पर टेक लगाए बैठी हैं। इधर-उधर चांदी के उगालदान और बड़े-बड़े चांदी के पानदान रखे हुए हैं और उनके सामने डोमनियां ढारनें सरोंदनियां और मीरासिनें नकलें कर रही हैं और तबलों के बोल ढोलक पर गाना हो रहा है और गानेवालियों को बेल दी जा रही है।

इधर मर्दाने सहन में दल-बादल शामियाना लगा हुआ है। शामियाने के गिर्द नौकर चाकर वगैरह पहरे जमाए हुए हैं। चारों तरफ गैस के बड़े-बड़े हंडे सनसना रहे हैं। मशालची मशालें उठाए तस्वीर बने बीच में खड़े हुए हैं। शामियाने के नीचे भद्र लोग ऊंचे ऊंचे गाव तकियों पर कोहनियां टेके बड़ी शान के साथ कालीनों पर बैठे हुए हैं। और वह देखिए, अपने कश्मीरियों के तायफे के साथ पंद्रह-सोलह बरस का अलीजान जिसके हसीन चेहरे की शफक पर हल्का सा नमक छिड़का हुआ है चला आ रहा है बड़ी लचक के साथ छम छम करता हुआ। शामियाने में कदम रखते ही उसने बड़ी लोच के साथ फर्शी

---

1 अवध के शाही घरानों में जब लड़कों की मसें भीगने लगती थीं तो चार कूंडों में चने भर कर हजरत अब्बास की नजर दिलाई जाती थी। इसका नाम ही कूंडों की रस्म पड़ गया।

सलाम किया—सलाम करने में उसकी कलाई इस कदर लचकी कि डर लगने लगा कहीं टूट न जाए। सलाम करके वह अपने साजिंदों के आगे ऐसे दिल फरेब घुमाव के साथ बैठ गया जैसे उड़ता हुआ कबूतर अपनी छतरी पर आकर बैठ जाता है—उसके बैठते ही— मैं चमन में क्या गया गोया दबिस्ता खिल गया की तरह—साजिंदे अपने-अपने साज मिलाने लगे। साजों के मिलाए जाने में जो वक्त लगता है वह कितनी मुश्किल से गुजरता है—

हरचन्द सुरीले नग्मों से जज्बात जगाये जाते हैं
उस वक्त की तल्खी याद करो जब साज मिलाये जाते हैं।

लेकिन कश्मीरिया (भांडों) ने अपनी उछल-कूद अपने कूल्हों पर ... के नारों और पट में बल डाल डाल देनेवाली अपनी नकलों से इस तल्खी का ढाप लिया और इस कदर हंसाया कि लोग लोटने लगे। जब साज मिल गए और हंसी के दौंगड़े रुक गए तो अलीजान पुरहरी लेकर यों खड़ा हो गया भाव बताने जैसे पहली किरण फूटते ही दरिया सांस लेकर चलने लगता है। पल भर में अच्छी तरह मिले हुए साज बजने लगे। सारंगी की रूं रूं, जोड़ी की दूं दूं और मजीरे की खुन खुन की नपी-तुली और घुली मिली आवाजों के जादू भरे दायरे में अलीजान ने अपने भाव बताने के वास्ते जब अपने लचकीले हाथ यानी पप्पू उठाए अपने छरहरे जिस्म की किश्ती खेने के लिए तो कश्मीरिया ने उसे हल्के में ले लिया और बड़ी सुरीली आवाज में कहने लगे—'इधर देखो खुशवक्ती, अल्लाह ने यह दिन दिखाया कि खां साहब बहादुर की ड्योढी पर अलीजान का तायफा आया वह महफिल वीरान जहां भांड न हो।" इस पर बड़ा कहकहा पड़ा।

इसके बाद साजों की गूंज में अलीजान कश्मीरिया का हल्का तोड़कर यों अपना चेहरा सामने लाया गोया काली बदली को फाड़कर चांद निकल आया। सामने आते ही इस छलावे ने यों पांव फर्श पर मारा कि उबल पड़ा धरती से नाच का फव्वारा और दायें-बायें खड़े कश्मीरिया ने उसके नृत्य के हर सम पर तालियां बजा-बजाकर कहना शुरू कर दिया—ताता थई थई थई थई—ए ताता थई। जब उसके नाच में तेजी आई तो कश्मीरिया ने ऐ बढ़के ए बढ़के, धन्य बढ़के हां, बढ़के बेटा बढ़के—थई थई थई थई, ता ता ता' के नारे लगाना शुरू कर दिए और भाव बताने और नाचने के बाद जब उसने बिन पानी का चला जा रे बजरा गाना शुरू कर लिया तो ऐसा मालूम हुआ कि वह एक बजरा है और फर्श पर हचकोले खा-खाकर बहता चला जा रहा है और साज उसके बालों में इतने गुंथ गए हैं गोया सान की उड़ती हुई गुड़िया में हल्दपात मकोश के डोरे पिरो दिए जा रहे हैं।

अलीजान के मुजरे के बाद शामियाने पर एक सन्नाटा—खनखनाता सन्नाटा छा गया। इसके बाद चार तवाइफें तारनोड आई, लेकिन

मुजरे का रंग जमा ही नहीं और ऐसा लगा जैसे हाफ़िज़ शीराज़ी के कलाम के बाद जोश की नज़्म पढ़ी जा रही हो या शराब के बजाय खाली सोडा पिया जा रहा हो।

खुश-खुश बरस' अब पिछले पहर बाईं चौदह बरस की पांचवीं तवाइफ़ आई मुजरे के वास्ते। उसका चम्पई मुखड़ा गोया वतन के जुफ़्म में पहाड़ पर प्रभात हो रहा है। जब इस सितमगर ने नाचने के लिए अपने तराश हुए कूल्हे के खिलकरेब कटाव पर बांया हाथ रखकर छल्ला सी कमर लचकाई तो ऐसा लगा गोया नृत्य की देवी के सुनहरे रथ का धुरा बड़ी लचक के साथ घूम रहा है और ब्रह्मांड की गति उसकी परिक्रमा कर रहा है।

उसकी जवानी का सब अभी पाल से बाहर नहीं निकाला गया था। उसके मुखड़े पर जवानी और बालकपन गले मिल रहे थे। उसका वजूद एक ऐसा झुटपुटा था जिसकी छांव में धुंधलका हुमक रहा था—उसकी नाक की नथ गवाही दे रही थी कि उसका पिंडा अभी तक कारा है और सीने पर उसके *आधी आबरू के नीचे मोचर एक बलवा सा हो रहा है।*

वह बहुत कमसिन थी और संगीत में खाम होने की वजह से उसके गले में पत्ती लगती थी। लेकिन उसकी नीम पुख्ता जवानी की वहशी आंखों के शरबती डोरों में वह अनोखी रागिनी छिड़ी हुई थी जिसे दुनिया के किसी साज पर बजाया ही नहीं जा सकता और जिसे कानों से नहीं आंखों से सुना जा सकता है।

और आखिरकार डूबते सितारों की छांव में चांद की इस बेटी ने जब यह गजल छेड़ी—

नसीम जागो कमर को बांधो, उठाओ बिस्तर कि रात कम है

तो रागिनी की चलत फिरत उसके नीम रवां और कच्चे गले में यों घूमने लगी गोया पुरवा के मुलायम झोंकों में पेंटे[1] से कटा हुआ चांद-तारा[2] फ़िज़ा में पता रहा है।

और जब नाचते-नाचते इनाम की खातिर, वह हचकोले खाती किश्ती की मानिंद आहिस्ता-आहिस्ता मेरी तरफ़ बढ़ने लगी तो मेरा गला रुंधने सा लगा। मेरी गर्दन के हारों की खुशबू तेज़ हो गई। और जब वह एक घुटना टेककर छम से मेरे सामने बैठ गई तो उसकी कमसिनी की सांस की सुगंध खच से मेरे सीने में चुभ गई और उसकी पेशवाज का सिरा मेरे हाथ की हथेली से मस हो गया तो मेरे बदन में पौ सी फटने लगी।

मेरी ज़िंदगी के अठारह मुआशिक़ों में वह मेरा अस्पष्ट सा पहला मुआशिक़ा था—जो स्वप्नावस्था में शबनम के मानंद मुझ पर गिरा और मेरे तन बदन में रच-बस गया।

अब अगर वह ज़िंदा भी होगी तो मेरी तरह बूढ़ी हो चुकी होगी। हम एक

१ पतंगबाज़ी का एक पेच २ एक किस्म का पतंग

दूसरे को पहचान भी नहीं सकेंगे। हाय, जालिम वक्त कितने चादा को लील चुका है।

लेकिन इतनी तवील मुददत गुजर जान के बाद भी जब उस मुजरे की याद आ जाती है तो मेरे झुरिया भर हाथ की हथेली पर उसकी पेशवाज का दामन सरसराने और करवटें-सी लेने लगता है। हाय क्या करू मेरे अल्लाह !

६

तालीम का वलवला

मरे तालीम के वल्वल न मरे वाप क न्नि के साथ वह सलूर किया जो बिजली खलिहान ■ करती है। वात यह नही थी कि वह मुझ जाहिल रखना चाहते थे मगर सारा खेल बिगाडे हुए थी उनकी गैरमामूली मुहब्बत, बल्कि हिसाब मुहब्बत। वह दिल से चाहते थ कि मैं पढू तो जरूर मगर उनकी आखो से पल भर क लिए भी जुदा न होने पाऊ। जब मैं दात निकाल निकाल कर उनसे मिन्नत म अर्ज करता था कि मिया मुझ पढ़न क लिए कही वाहर भेज दीजिए म घर पर नहीं पढ सकूगा। मौल्वी उल्टे मुझसे डरते है। डरनेवाले मौल्वी पढा नही सकते।—तो उनके चेहरे पर एक तीव्र पीडा का रग दौड जाया करता था। तग आकर मैंने तमाम घर की दीवारें कोयले स तालीम का भूखा कबीर लिख लिखकर स्याह कर डाला। मिया नौकरो स उन तहरीरो को मिटवा देत थ और मैं फिर लिख देता था।

आखिरकार मैंने अपन फुफेर भाई और तालीम क शैदाई सफदर हुसन खा को पकडा कि आप मिया से मेरी सिफारिश कर दें। उन्होने मेरी इमदाद का वादा किया। मैं उनका यह एहसान कभी नही भूलूगा कि उन्होने मेरी तालीम के बारे म मेरे बाप से बार बार कहा और आग्रह के साथ कहा पर मिया ने इस कान स सुना उस कान स उडा दिया।

लेकिन सफदर भाई धुन क पक्के थ हिम्मत नही हारे और एक दिन शाम क वक्त मिया को बडे अच्छे मूड म पाकर उन्होने बडे साहस के साथ यहा तक कह दिया कि मामू अब जमाना बदल चुका है। जो बच्चा घर के रईसाना माहौल स बाहर निकलकर नही पढेगा, वह 'शरीफजादो की औलादे-बेतरबीयत है' क जुमरे म आकर तबाह हो जाएगा। मामू आप खानदान भर म सबसे ज्यादा पढे लिखे हैं और अक्लमद हैं और फिर भी तालीम से इस कदर गफलत बरत रह ह!

यह सुनकर मिया बिगड गए और इरशाद फरमाया 'सफदर एक छोड चार चार उस्ताद उसे पढा रहे हैं। यह इस उम्र म गुलिस्ता बोस्ता, सकन्दर नामा और दीवान हाफिज चाट चुका है और गोमतीप्रसाद से अंग्रेजी भी पढ रहा है। क्या इसी का नाम है तालीम से गफलत?' सफदर भाई ने हाथ जोड कर कहा मैं सर झुकाए लेता हू आप चाहें तो मुझे मार लें। मगर इस कदर अर्ज जरूर करूगा कि चार क्या दस उस्ताद भी इस माहौल मे बेकार हैं। मामू रईसो के बच्चे मौलवियो स नही डर सकते बल्कि उल्टा मौलवी उनसे खौफ खाते हैं। मामू यह तो आपके सामने की बात है कि नसीम नाना के एक बच्चे को बाहर स आए हुए एक उस्ताद ने जब हल्का-सा एक थप्पड

मार दिया था तो उन्होंने उसका हाथ फौरन तुड़वा डाला था। उस दिन से यहाँ के उस्ताद और भी डर गए हैं और अपने शागिर्दों को घुड़की तक देने की जुर्रत नहीं करते। यह सुनकर मियाँ कुछ सोचने लगे। सफदर भाई ने इशारे से बताया कि आसार अच्छे हैं। थोड़ी देर गौर करने के बाद मियाँ ने कहा 'सफदर यह तो बताओ कि शब्बीर को भेजूँ तो कहाँ भेजूँ ? लखनऊ हरचंद करीब है मगर वहाँ के रंगीन माहौल में बिगड़ जाएगा। सफदर भाई ने कहा "मामूँ मैं खुद भी नहीं चाहता कि उनकी तालीम लखनऊ में हो। मैं अपने असरार हुसैन को सीतापुर में पढ़ा रहा हूँ। आप शब्बीर मियाँ को सीतापुर भेज दें। वहाँ मलीहाबाद के बहुत-से लड़के यानी अब्दुल बारी, अब्दुल अज़ीज़, फखरुल हसन पढ़ रहे हैं। और शब्बीर मियाँ का लँगोटिया यार अबरार भी वहीं तालीम पा रहा है।

मियाँ ने यह सुनकर इरशाद फरमाया 'अच्छा सफदर एक महीने के बाद शब्बीर को सीतापुर ले जाना। मैं इस एक महीने में अपने दिल को भी समझा लूँगा। यह सुनते ही मेरा दिल किलकारियाँ मारने लगा।

लेकिन जब पूरा महीना गुज़र जाने के बावजूद मियाँ का वादा पूरा नहीं हुआ तो मेरी उम्मीदों पर पानी फिर गया।

उसी बीच में जब लेफ्टीनेंट गवर्नर से मिलने मियाँ लखनऊ गए मैं भी साथ हो लिया और जब वह लाट साहब से मिलकर रुखसत होने लगे तो मैं फूट-फूटकर रोने लगा। लाट साहब ने मेरे बाप से पूछा 'आपका लड़का क्यों रो रहा है ? तो मैंने उनसे तमाम माजरा बयान कर दिया। लाट साहब ने बढ़कर मेरे सर पर हाथ फेरा और मेरे बाप से अपनी टूटी-फूटी उर्दू में जो कहा उसका मतलब यह था कि खाँ साहब आप बड़े खुशकिस्मत हैं। ऐसे इल्म के शौकीन लड़के तो विलायत में भी नहीं हैं। आप इसे एक महीने के अंदर-अन्दर किसी स्कूल में दाखिल करके मुझे सूचित कर दें। उसने बड़े प्यार से मेरे गाल थपथपाए और कहा, अगर खाँ साहब ने मेरी बात नहीं मानी तो मैं सरकारी वज़ीफा दिलाकर तुम्हें तालीम के लिए लंदन भेज दूँगा।

गवर्नमेंट हाउस से निकलकर जब मियाँ गाड़ी में बैठे तो बरस पड़े मुझ पर। फरमाया, मरदूद, तूने लेफ्टीनेंट गवर्नर से मेरी शिकायत की और वह भी मेरे मुँह पर। क्या तू समझता है कि मैं इस लाल मुँहवाले बन्दर से डर जाऊँगा ? खूब कान खोलकर सुन ले कि अगर लेफ्टीनेंट गवर्नर भी कहेंगे फिर भी मैं तुझे घर से बाहर भेजकर नहीं पढ़ाने का। ऐसी-तैसी लाट साहब की। यह सुनते ही मैं फूट-फूटकर रोने लगा। हिचकियाँ बँध गईं रोते-रोते और मेरी साँस मेरे गले में घुमकर कुछ ऐसे ज़बरदस्त झटके लेने लगी कि मेरे आशिक बाप का मुँह फक हो गया। उन्हें यह खतरा पैदा हो गया कि मेरा दिल बैठ जाएगा। उन्होंने दीवानावार दोनों हाथ बढ़ाकर मुझे अपने सीने से लगा लिया और जल्दी-जल्दी कहा, तेरे सर की कसम एक महीने के अन्दर

मैं तुझे सीतापुर भेज दूंगा।' मेरी सांस ठहर गई, हिचकियां रुक गई, आंसू थम गए। मेरे बाप ने मुझे बहुत गौर से देखकर पूछा 'बेटा अब तबीयत कैसी है?'' मैंने मुस्कराकर कहा, अच्छा हूं मियां। उनके चेहरे पर बहाली आ गई और मैं दिल ही दिल में सीतापुर जाने के दिन गिनने लगा।

मलीहाबाद आते ही मियां ने सफदर भाई को बुला भेजा और कहा 'सफदर, तुम जुमा के दिन शब्बीर को सीतापुर ले जाओ। मेरा दिल खुशी के मारे उछलने लगा।

दो दिन के अन्दर-अन्दर मेरे साथ जानेवाले बावरची की जिसे 'सयन' के नाम से पुकारा जाता था नियुक्ति कर दी। सफदर भाई ने चार पांच दिन के अन्दर-अन्दर मेरे तमाम सुनहरे और भड़कीले कपड़े नजरी करके सादा जोड़े सिलवा दिए।

खुदा-खुदा करके जुमा आया। मेरा तमाम सामान गाड़ी पर रखवा दिया। लेकिन बड़ी बी दादी मां और सबसे ज्यादा मेरे बाप के रुखसती आंसुओं में गाड़ी का वक्त निकल गया और मैं कलेजा थामकर रह गया।

दूसरा जुमा आया। मैं गाड़ी के वक्त से दो घंटे पहले ही तैयार हो गया। दादी और मां ने मेरे बाजू पर इमामे जामन बांधे। सबने मुझे बारी-बारी गले लगाया। बड़ी बी ने भी मुझे सीने से चिपटा लिया। मियां ने इस कदर भींचकर मुझे सीने से लगाया कि पसलियां लचक गई और मेरे सीने पर उनके धड़कते दिल की जरबें पड़ने लगीं। आंगन में पहुंचकर जब हस्बे दस्तूर कुरआन के नीचे से निकलने लगा तो मियां ने भराई आवाज में हुक्म दिया कि इधर आओ बेटा। मैं उनके पास पहुंचा। उन्होंने इरशाद फरमाया—थोड़ी देर के वास्ते बैठ जाओ। दो चार मिनट के बाद मैंने घड़ी पर नजर जमाई तो गाड़ी का वक्त निकला जा रहा था।

इतने में सफदर भाई आ गए और हाथ जोड़कर कहा 'मामूं, गाड़ी छूट जाएगी। मियां ने मेरे चेहरे पर निगाहें जमा दीं और फिर इशारे से मुझे रुखसत की इजाजत देकर सर झुका लिया। मियां के साथ पूरा घर रोने लगा। मैंने आंसू भरी आंखों से झुक-झुककर सबको सलाम किया। जब बाहर जाने के लिए ड्योढ़ी से गुजरने लगा तो हिचकियां मेरा पीछा करती रहीं।

थर्ड क्लास और इक्के का पहला सफर

सफदर भाई ने स्टेशन जाते हुए मुझे एक लम्बा लेक्चर पिलाया, जिसका खुलासा यह था कि जमाना अब बड़ी तेजी के साथ बदल रहा है। अमीरी की बू अपने सर में निकाल दो। मामूं ने मुझे फस्ट क्लास का किराया दिया है मगर मैं तुम्हें ले जाऊंगा थर्ड क्लास में—मंजूर है तुम्हें? मुझे क्या मालूम था कि थर्ड-क्लास के मुसाफिरों को किन किन बलाओं से दो चार होना पड़ता है। मैंने उनकी तजवीज मंजूर कर ली।

मगर यह-क्लास में कदम रखा तो जी सन-से हाके रह गया। पाव के नीचे स जमीन निकल गई। सबसे पहले उस डिब्बे की उस बन्दू ने मेरे दिल पर घूसा मारा जिससे मैं कभी दो चार हुआ ही नहीं था। फिर मैंने देखा कि वह डिब्बा औंधा-औंधा-सा है और बेमदद की खुरदरी जलील बेंचें मुझे मुह चिढ़ा रही हैं। एक बेंच पर चन्द गवार बिच्छू मार्का तम्बाकू की चिलम पी-पीकर बुरी तरह खास रहे हैं। नाक में डक मारने लगी गम्बाकू की बदबू। मरता क्या न करता सर मुकाकर खुर्री सीट पर बैठ गया। सीट चुभने लगी सास भर सीने में उलझ गई और इसमें जामने गम हाकर मेरे बाजू पर चरके लगाने लगे। मैं खिड़की से मुह निकालकर बैठ गया। चारबाग से निकलकर सफ्दर भाई ने दो खबीस इक्केवाले को इशारे से बुलाया और वे दाकाली के जलील इक्के अपने गधा के-से मफ़्नूनी घोड़ा के साथ चू चू करते जब मेरी तरफ रेंगने लगे तो मुझे ऐसा लगा जैसे मुह काला करके मुझे गधे पर बिठाया जा रहा है। सफ्दर भाई ने मेरी हालत का अदाजा लगाकर कहकहा मारा और वह कहकहा घाव पर नमक छिड़कने की तरह मुझे बहुत बुरा लगा। उन्होंने मुझे जुज़-बुज़ देखकर कहा शबीर मिया, यह आपरेशन बहुत मुफीद है। इससे तुम्हारे दिल में गरूर का जो मवाद है वह निकल जाएगा। मैं चुप हो गया।

इक्का मेरे करीब आया तो मैंने कहा सफ्दर भाई इसपर बठू कैसे ?'' उन्होंने मेरी बगल में हाथ देकर मुझे हजार दिक्कत के साथ बिठा दिया और दूसरे इक्के पर सैयद बावरची सामान समेत सवार हो गया।

इक्के के चिकट गद्दे की बू स मुझे मतली होने लगी। जब चारबाग स हमारे जलील इक्के आग़ामीर की ड्योढी की तरफ रसान रसान रेंगने लगे।

जब हमारा इक्का पाठनाले के पुल से गुजरने लगा तो मेरी नजरों के सामने से अपने परदादा का मुहल्ला गुजरने लगा जिसके नुक्कड़ के पत्थर पर 'अहाताए फ़कीर मुहम्मद' मोटे अक्षरों में अंकित था। इस बोर्ड को देखकर मेरे तमाम रोंगटे सन-से हो गए। ख़याल आया कि इधर से दादा जान हाथी पर गुजरते और उनकी सवारी के आगे नकीब वाला करते थे। आज उसी तरफ से उनका पोता एक हकीर तोता बना हुआ इक्के में बैठा टरखटू-टरखटू गुजर रहा है। शर्म के मारे मैंने अपना मुह छिपा लिया।

खैर ये दिक्कतें और जिल्लतें उठाता हुआ सीतापुर पहुच गया। मलीहाबाद के तमाम लड़के निहाल हो गए। अबरार ने दौड़कर मेरे गले में बाहें डाल दीं।

दूसरे ही दिन मेरा नाम आठवें स्कूल में लिखा दिया गया। सफ्दर भाई ने हाई स्कूल के दबंग-स्वरूप हेड मास्टर घमंडीलाल और बालिग के हंसमुख इंचार्ज धापबाबू से भी मुझे मिला दिया और मैं हज़ारों वल्वलों के साथ बाकायदा स्कूल आने-जाने और जी लगाकर लिखने-पढ़ने में व्यस्त हो गया।

अभी सीतापुर आए मुश्किल से पन्द्रह बीस दिन ही गुजरे होंगे। एक रोज शाम के वक्त क्या देखता हूं कि हमारे घर के दारोगा शेख मुहम्मदअली चले आ रहे हैं। शेख साहब को देखकर मैं समझा कि मियां सीतापुर तशरीफ ले आए हैं। लेकिन जब दारोगा साहब ने मियां का खत दिखाया तो मालूम हुआ कि मियां ने फकत दो रोज के लिए मलीहाबाद बुलाया है। दो दिन की छुट्टी लेकर जब रात को ग्यारह बजे वाली गाड़ी से मलीहाबाद आया और अपने मकान की गली में पहुंचा तो देखा कि मियां डाक्टर अब्दुलकरीम और चन्द सिपाहियों को लिए आदत के विपरीत अवक्त और टोपी के बगैर फाटक से निकल रहे हैं। जैसे ही मुझ पर उनकी नजर पड़ी हाय मेरा बेटा कहकर वह झपट पड़े और मुझे सीने से लगाकर रोने लगे। डाक्टर अब्दुलकरीम ने कहा जो साहब आप खुश होने के बदले रो रहे हैं? मेरे बाप ने इरशाद फरमाया डाक्टर साहब काकोरी के पुल से गुजरते ही रेल हमेशा सीटी देती है। लेकिन आज उसने सीटी नहीं दी। मैं यह खयाल करके दीवाना हो गया कि कहीं खुदा न खास्ता पुल तो नहीं टूट गया है। डाक्टर साहब जिसका बेटा रेल में आ रहा है उसके जी से पूछिए कि अपने वक्त पर रेल का सीटी न देना कितने वहम पैदा कर सकता है।

सीतापुर में मेरी तालीम का सिलसिला साल डेढ़ साल से ज्यादा जारी नहीं रह सका। मेरी जुदाई की ताब न लाकर शायद १६०२ में मेरे बाप ने मुझे लखनऊ तलब फरमाकर हुसनाबाद हाई स्कूल में दाखिल करा दिया और मेरी रिहायश के लिए नक्खास (चिड़िया बाजार) में सैयद एजाज हुसन साहब के मकान के ऊपर का पूरा खुला हिस्सा किराये पर ले लिया गया। मेरे मकान के नीचे मुंशी वाहिदअली की नवादर[1] की दुकान थी। उनकी दुकान के सामने किसी बुजुर्ग का मजार था जिस पर हर जुमारात (बृहस्पतिवार) को चिराग (रोशनी) हुआ करता था और उसके आस-पास हर इतवार को चिड़िया का बाजार लगा करता था। और मेरे मकान के ऐन सामने हजरत ख्वाजा खराबाती रहते थे।

उस जमाने में मेरे मकान के सामने और हजरत ख्वाजा खराबाती के मकान की दीवार के नीचे दूर तक घोड़ा-गाड़ियों का अड्डा था जहां पचीस तीस गाड़ीवान रहते थे। हर रोज जिस वक्त सुबह के चार बजे एक साहब विक्टोरिया रोड की तरफ से मौला अली इमाम अली मुर्तजा अली गाते हुए जैसे ही मेरे मकान के सामने से गुजरते थे तो गाड़ीवाले ठुमकीदार आवाज में नारा लगाया करते थे नवाब साहब बन्दा हाजिर है। और वह नवाब साहब उन्हें गालियों पर धर लिया करते थे। पर क्या मजाल कोई अश्लील शब्द जबान पर आ जाए।

जैसे ही गाड़ीवालों की आवाज बुलन्द होती थी—नवाब साहब बन्दा

[1] दुर्लभ अमूल्य वस्तुएं

हाजिर है वसे ही वह बडी सुरीली और ठहरी हुइ आवाज म कहने लगत थे, "ऐ आले रसूल के दुश्मनो, ऐ मुआविया के दुम्वो ऐ इने-ज़्याद के ऊटा, तुम पर लानत, तुम पर आक थू ऐ यजीद के पिल्लो ऐ इब्ने मल्जम के बोकडो, ऐ हदए जिगरख्वार के पडदो तुम पर लानत, हजार बार लानत, आक थू आक थू आक थू। और उन गालिया पर गाडीवालो के कहकहे बुल्द हो जात थे। और जब वह गालिया देत हुए धडेवाली सराय की तरफ मुडने लगत थे तो गाडीवाला की आवाज फिर वुलद हो जाती 'नवाब साहब बकरा हाजिर है नवाब साहब बकरा हाजिर है।' और वह उसी किस्म की गालिया देते हुए मुड जाया करते थे। उस तरफ मेरे गाडे के वारिसद मिया नौरोज बावरची का भी यह मामूल था कि जब वह नवाब साहब बकरा हाजिर है' की आवाजें सुनते थ तो चारपाई पर उठकर बठ जात और बडबडान लगत थे 'इन साले गाडीवाल्न पर नालत (लानत), रोज रोज बकरा हाजिर, बकरा हाजिर चीखा करत हैं। यू का वाहियातपना है। साले सबेर-सबेरे अल्लाह रसूल का नाम तो लेत नाहीं, बकरा हाजिर, बकरा हाजिर का गुल मचा देत है। थू है उनकी औकात पर।

७

मेरा निकाह

मेरा निकाह ऐसा-वैसा नहीं बड़ा जिद्दम-जिद्दा और बड़ी धाम-धाम का निकाह था। उसका थोड़ा-सा हाल सुन लीजिए। मेरे दादा नवाब मुहम्मद अहमद खां के सौतेले भाई थे नवाब मुहम्मद नसीम खां—उन दोनों भाइयों के दरम्यान खानदानी दस्तूर के मुताबिक बड़ी अनबन और बड़ी खुन-खुन रहा करती थी। मेरे ससुर नवाब मुहम्मद नसीम खां के बेटे थे और मैं नवाब मुहम्मद अहमद खां का पोता। इसलिए मेरे ससुर के बड़े भाई नवाब मुहम्मद अली खां को यह बात पसन्द नहीं थी कि उनके छोटे भाई की लड़की से मेरा ब्याह हो। लेकिन चूंकि मेरे ससुर और मेरे बाप के दरम्यान खानदानी दस्तूर के खिलाफ बड़ी मुहब्बत थी इसलिए मेरे बाप ने जब मेरा पयाम दिया तो उन्होंने मंजूर फरमा लिया। उनकी मंजूरी से मेरे ससुर का तमाम कबीला बिगड़ गया और मेरे चचा नवाब मुहम्मद अली खां को खसूसियत के साथ बहुत मलाल हुआ। इस कारण मेरे निकाह के मौके पर खुशी के साथ-साथ यह भावना भी काम कर रही थी कि मेरे ससुर के तमाम कबीले के विरोध के बावजूद मेरा निकाह हो रहा है। अल्लाह-अल्लाह मेरे निकाह की धूम धड़क्का—बड़े धूम से मुजरे हुए दावतें हुईं और ऐन निकाह के दिन दुश्मनों को जलाने और तपाने के लिए इस कदर जोर-जोर से ढोल पीटे गए इस कदर शिद्दत के साथ ताशे बजाए गए और इतने बड़े-बड़े हौलनाक गोले छोड़े गए कि उनकी दनादन-दनादन से दूर-दूर तक जमीन हिलने लगी। हाय पठानों का मिज़ाज।

लेकिन यह निकाह आगे चलकर क्या रंग लाया कितना बड़ा फितना खड़ा हुआ उसके बाद और मेरे सहरे के फूलों ने कितने कांटे बो दिए मेरे बाप की राह में आगे इसका ज़िक्र आएगा।[1]

यों तो नौ बरस की उम्र ही से शेर की देवी ने मुझे आगोश में लेकर मुझसे शेर कहलाना शुरू कर दिया था। लेकिन आगे चलकर जब शायरी से मेरा लगाव बढ़ने लगा तो शायद इस खयाल से कि अगर मैं शायरी में डूब गया तो मेरी तालीम नाकिस रह जाएगी, मेरे बाप के कान खड़े हो गए और उन्होंने मुझसे इरशाद फरमाया कि खबरदार अब अगर तुमने शायरी की तो मुझसे बुरा कोई न होगा। इसके साथ उन्होंने ज़नाने में बुआ गुलज़ार और मर्दाने में उम्मीदअली को मामूर फरमाया कि वे जब मुझे शेर कहते

1 निकाह मसूख कराने के लिए बरसों मुकदमा चला। हजारों रुपये चौपट होने के अलावा बहुत परेशानी उठानी पड़ी। आखिर में जीत जोश के बाप की हुई।

दखें तो उनकी जनाब म रिपोट कर दें। बाप के इस हुक्म और ज़नाना मर्दाना की खुफिया पुलिस न मुझे बोखला दिया।

भाग्य का यह फरमान कि शायरी कर शरीयत का यह हुक्म कि खबरदार शायरी क करीब भी न फटक। मैं इस कशमकश म पड गया कि अपनी फितरत का हुक्म मानू कि अपने बाप का खारिजी फरमान कबूल करू।

सोचने लगा मैं अपनी जा से जुदा क्याकर हो जाऊ। शेर कहता हू तो बाप बिगडते हैं, नही कहता तो दिल पर बिगाड आते हैं। क्या करू और क्या न करू? शेर कहू तो बाप डाट पिलाए अपने दस्तरख्वान पर खाना न खिलाए और शेर न कहू ता दिमाग के परखचे उडकर रह जाए।

इसलिए मैं शायरी छोड नही सका। चोरी छिप शेर कहता इधर-उधर देखता हुआ किसी कोने म जाकर उन्ह लिखता और पर्चे अपने सन्दूकचे के अदर बद कर देता और स्मगलरो की तरह इस सन्दूकचे को अपनी मा के हवाले कर देता था कि वह इसे छिपाकर रख दें। मेरी मा को मेरी इस हालत पर बडा तरस आता था। मगर वह उदास हो जाने के सिवा और कर ही क्या सकती थी।

लेकिन इस अहतियात के बावजूद मैं अदर और बाहर एन मौके पर शेर कहता पकडा गया। मेरा जेब-खच बद हुआ बाप ने अपने साथ खाना खिलाना तरक कर दिया और अक्सर थप्पड भी मारे। अपनी हर जिल्लत के बाद मैंने बारहा कान पकड-पकडकर कसम खाई कि अब कभी शेर नहीं कहूगा। अब खाई सो खाई, अब खाऊ तो राम दुहाई। लेकिन जैसे ही मेरे दिल म शायरी की गुदगुदाहट होने लगती थी मेरी तमाम कसमें चूर चूर होकर रह जाया करती थी और हज़रत-वहशत का यह शेर मुझ पर लागू होता था

मजाल तर्के मुहब्बत न एक बार हुई
ख्याल तर्के मुहब्बत तो बार-बार आया।

शेर कहने की इजाजत

एक बार मैं अपने सदूकचे म जेब म पुर्जे निकाल निकालकर रख रहा था कि बुआ गुलजार न देख लिया। वह भाप गइ। मिया को खबर कर दी। मिया आए। मेरी मा से कहा शबीर का सदूकचा कहा है? मेरी मा का रग हल्दी का-सा हो गया। मिया का खौफ इस कदर था कि वह इनकार नही कर सकी और मेरा सदूकचा उनके सामने रख दिया। मिया ने मुझसे कुजी मागी। कापते-लरजते हाथो स मैंने कुजी द दी। उन्होने सदूकचा खोला। मेरे पुर्जे एक एक करके निकाले। मैं अपने बाप को इस तरह देखने लगा जिस तरह गाय अपने बछडे को छुरी के नीचे देखकर कापती है। जब उन्होने मेरे तमाम पुर्जे चर चर फाडकर फेंक दिए मेरे मुह स एक दर्दनाक चीख निकली

और मैं बेहोश हो गया। मेरी मां दीवानावार मुझसे चिमटकर रोने लगीं। मियां के हवास उड़ गए। दादी जान ने आकर मेरे बाप को डांटा कि क्या बच्चे को मार डालेगा?

डाक्टर अब्दुलकरीम को मेरे बेहोश हो जाने की खबर की गई। वह तुरन्त आ गए। मेरी नब्ज देखी और कहा खां साहब घबराइए नहीं। मैं दवा साथ लाया हूं।' उन्होंने मेरा मुंह खोलकर दवा पिलाई। रईस की अन्ना ने मुंह पर छींटे मारे और दस-पन्द्रह मिनट के बाद मुझे होश आ गया। मेरे बाप ने मुझे सीने से लगाकर इरशाद फरमाया बेटा मैंने तुम्हें शे'र कहने की इजाजत दे दी है। मैं खुद तुझे इस्लाह दिया करूंगा। इधर आकर दम भर के लिए इस पलंगड़ी पर लेट जा। मैं लेट गया तो मेरा जी बहलाने के लिए उन्होंने मुझसे कहा—बेटा इस शे'र के मानी बयान कर—

वह जल्द आयेंगे या देर में शबे-वादा
मैं गुल बिछाऊं कि कलियां बिछाऊं बिस्तर पर।

अब शे'र की इजाजत मिल जाने के बाद मेरी तबीयत बहाल हो चुकी थी। मैंने जरा सा गौर करके अर्ज किया— शायर से उसके दोस्त ने वादा किया है कि आज मैं आऊंगा। अब शायर इस असमंजस में है कि मैं गुल बिछाऊं कि कलियां। अगर वह ठीक वक्त पर आने वाला है तो मैं खिले हुए फूल और अगर देर में आने वाला है तो बेखिली कलियां बिछा दूं।

मियां ने पूछा डाक्टर साहब मानी सही बयान किए हैं शब्बीर ने? डाक्टर साहब ने कहा इससे ज्यादा सही मानी बयान नहीं किए जा सकते। मियां ने कहा मुझे आपकी राय से इत्तफाक है। लेकिन तर्जे बयान में उसने दो ठोकर खाई हैं। डाक्टर साहब ने कहा साहबजादे फिर तशरीह कर दीजिए। मैंने फिर एक एक लफ्ज दोहरा दिया। डाक्टर ने कहा 'मेरे नजदीक तो साहबजादे ने कहीं ठोकर नहीं खाई है। मियां ने हंसकर कहा आप लाख सुखन संज (शे'र समझनेवाले) और हाली के हमवतन सही फिर भी जाए उस्ताद खालीस्त। सुनिए उसकी पहली गलती तो यह है कि उसने खिले हुए फूल कहा है। कली जब चटककर खिल जाती है तो उसे फूल कहा जाता है। खिलावट तो फूल का अंग जात है। इसलिए खिले हुए फूल कहना हश्वो-जवायद (व्यर्थ) में दाखिल है। दूसरी गलती यह है कि उसने कली को बेखिली कली कहा है। हालांकि कली को तो इसीलिए कली कहते हैं कि वह अभी चटककर खिली नहीं है और बेखिलापन उसकी अंग जात है। डाक्टर साहब ने कहा बेशक आपका ख्याल दुरुस्त है। फूल और कली के साथ किसी सिफत की कोई जरूरत नहीं। इसके बाद मियां ने इरशाद फरमाया—अच्छा एक और शे'र के भी मानी बता दो तो मैं तुम्हारी शे'र फहमी को मान जाऊंगा—

आ रहे हैं लाश के वो साथ-साथ
अब हमारी कब्र कितनी दूर है।

शे'र सुनकर मैं उलझन में पड़ गया। दाना मिसरा में कोई रब्त ही नजर नहीं आया और सोचने लगा। दस-पन्द्रह मिनट सोचने के बाद मैं खुशी से उछल गया। बिस्तर से उठ बैठा। मैंने कहा, "शायर के जनाज़े में उसका दोस्त शरीक है। शायर को यह खयाल सताने लगता है कि उसके दोस्त को पैदल चलने में तकलीफ हो रही होगी। इसलिए वह उकताकर पूछ रहा है कि अब हमारी कब्र किस कदर फासले पर रह गई है। मियां ने सुनकर मुझे सीने से लगा लिया। डाक्टर साहब ने भी बहुत दाद दी और इस बात का स्वीकारा कि उन्हें यह शे'र निरर्थक लग रहा था। मियां ने कहा, 'तुम्हें इस शे'र में फन के नुक्ताए-नजर से कोई ऐब तो नजर नहीं आ रहा है?' मैं बेचारा फन से वाकिफ ही कब था। मैंने कहा, 'कोई ऐब नहीं है।' मियां ने फरमाया, 'इसके पहले मिसरे में ताकीद है।' और फिर मिसालें देकर समझाया कि ताकीद क्या चीज होती है।

डाक्टर ने कहा, 'खां साहब आप साहबजादे को शायरी से बाज तो नहीं रख सकते। लेकिन यह बात जरूर समझा दीजिए कि पढ़ाई खत्म करने से पहले इस मशगले पर ज्यादा वक्त सर्फ न किया जाए।'

मियां ने फरमाया, 'मैं तालीम से भी आगे की बात सोच रहा हूं। यानी शायरी वह चीज है जो शायर को इस बात की इजाजत ही नहीं देती कि वह शे'र कहने और शायराना जिंदगी बसर करने के अलावा दुनिया का कोई और काम भी कर सके। यह वह कला है कि शायर के दिल में दौलत को इस कदर हकीर कर देती है कि वह उसकी तरफ आंख उठाकर भी नहीं देखता। नतीजा यह कि वह मुफलिसी का शिकार होकर रह जाता है।' इतना कहकर उनकी आंखों में आंसू भर आए। उन्होंने मेरी तरफ निगाह करके दुआ के लिए हाथ बुलन्द फरमाए कि ए अल्लाह मेरे गरीब को तबाही[1] से बचाना और उसपर ऐसी करम की निगाह रखना कि रोजगार की खातिर इसे दूसरों का मुंह न देखना पड़े।

१ मियां आपकी दुआ कबूल नहीं हुई। आपको खबर नहीं कि आपकी आंखों का तारा गरीब वतनाए-गुरबत (विदेश) में ठोकरें खा रहा है। वह पाकिस्तान आकर एक मामूली-सी तनख्वाह पर जिंदगी बसर कर रहा था। लेकिन इस जुर्म पर मुलाजमत और दूसरे जरियों से महरूम कर दिया गया कि वह १ स्वाभिमानी है २ किसी की सत्ता के सामने सर नहीं झुकाता ३ अपनी आत्मा और कलम को बेचता नहीं ४ उसे अपनी जन्मभूमि से नफरत नहीं है और ५ उसका सबसे बड़ा कुसूर जिससे बगावत की बू आती है यह है कि वह फकत पाकिस्तानियों और हिंदुस्तानियों ही को नहीं सारी दुनिया के बाशिंदों को एकता की जंजीर में जकड़कर एक दृढ़ इकाई और एक विश्व राज्य बनाने का शैतानी सपना देखता रहता है।

८

पहला मुशायरा

यह शायद १९१० या १९११ की बात है कि मैं अपने बाप के हमराह हजरत मौलाना रजा फिरंगी महली के मुशायरे में पहली बार शरीक हुआ और दंग होकर रह गया।

आइए, मैं आपको मुशायरे में ले चलूं ताकि आप सुन देख लें कि शफ्फाफ चांदनी बिछी हुई है, चांदनी पर कालीन हैं। गावतकिये दीवारों से लगे हुए हैं। इधर उधर साफ-सुथरे उगालदान, नेचों में हार लिपटे हुक्के, शालबाफ से मढ़ी हुई छोटी छोटी कोरी हांडियां, हांडियों में चांदी के वरक की सुगंधित गिलौरियां और इलायची दान, तम्बाकू और कवाम की डिब्बियां रखी हुई हैं। शायर ज्यादातर अंगरखे और कमतर शेरवानियां पहने अपने-अपने मतबे के लिहाज से दोजानू बैठे हुए हैं। सबके सरों पर टोपियां हैं। श्रोताओं में से कोई भी नंगे सर नहीं है। आपस में आहिस्ता-आहिस्ता बातें हो रही हैं, गिलौरियां खाई और हुक्के पिए जा रहे हैं। और जो शायर मुशायरे के फर्श पर कदम रखता है वह हाजिरीन को झुक झुककर सलाम कर रहा है। हाजिरीन उसके मतबे के मुताबिक नीमखेज या सरसरी जवाबी सलामों से उसका स्वागत कर रहे हैं। लीजिए अब मीरे मुशायरा के सामने शमअ आ गई है और मौलाना रजा की गजल से मुशायरे का आगाज हो रहा है और दाद से छत गूंजने लगी है। किसकी मजाल है कि गजल पढ़ने के दौरान कोई मिसरा न उठाए, हुक्का पी ले, पान खा ले, आपस में सरगोशी करने लगे या कोई इधर से उठकर उधर बैठ जाने की जसारत कर सके।

मीरे मुशायरा के बाद शमअ घूम रही है। नौमश्क नौजवानों की सफों में और कमी बेशी के साथ सबको दाद मिल रही है और मामूली शे'रों के सरों पर भी माशा अल्लाह के सेहरे बांधे जा रहे हैं। लीजिए नौमश्कों में अब मेरी बारी आ गई। अरे गजब हो गया। शमअ सामने रखी हुई है, रोबे महफिल से मैं कांप रहा हूं। शायरों की सफों से आवाज आ रही है—बिस्मिल्लाह साहबजादे बिस्मिल्लाह! लेकिन साहबजादे का दम निकला हुआ है। क्या मजाल कि मुंह से एक हर्फ भी निकल सके। अब मेरे बाप मुझसे फरमा रहे हैं, पढ़ते क्यों नहीं? पठान का बेटा तो बारह बरस की उम्र ही से रण में तलवार चलाने लगता है। और एक तुम हो कि तुमसे गजल नहीं पढ़ी जा रही है। अब मिर्जा मुहम्मद हादी साहब रुसवा अपनी जगह से उठकर मेरे पहलू में आ गए हैं और मेरी पीठ ठोंककर फरमा रहे हैं— साहबजादे आप तो शायर, शायर के बेटे, शायर के पोते और शायर के परपोते हैं, पढ़िए और गरज कर पढ़िए। अब बड़ी हिम्मत करके मैं मतला (गजल का पहला शे'र) पढ़

रहा हू। मतला पर दाद मिल रही है ! और दाद के नशे म शे र पढ रहा हू

ऐ नसीमे सुबह के झोका यह तुमने क्या किया
मेरे मस्ते-ख्वाब की ज़ुल्फें परेशा हो गइ ।

इस शे र पर मतला से ज्यादा दाद पा रहा हू। और वल्वले के साथ दूसरा शे'र सुना रहा हू—

मेरी आखें जानती हैं करने अफरात खुशी[1]
खदाज़न[2] देखा किसी को और गिरिया[1] हो गइ।

अब दाद का गलगला ज्यादा बुलद हो रहा है और 'सु हान अल्लाह, माशा अल्लाह स मुशायरा गूज रहा है। मिर्जा मुहम्मद हादी रुसवा, हज़रत सफी स कह रहे हैं देखे आपने इस शे र के तवर, यह उम्र और इतनी गहरी बात !" और अब मैं आखिरी शे र पढ रहा हू—

हाय मेरी मुश्किलो तुमने भी क्या धोका दिया
ऐन दिलचस्पी का आलम था कि आसा हो गइ।

देखिए छतें उड रही हैं और धुए पार हो रह है इस शे र की दाद से और उस्ताद फरमा रहे है— अल्लाह नज़रे-बद स बचाए।

मुशायरे स दाद का बडा जाम पीकर झूमता झामता घर आया। खुशी के मारे दर तक नीद नही आई। और सो गया तो ख्वाब म रात भर यह देखता रहा कि परिया भीच भीचकर मुझे गले लगा रही हैं।

सुबह उठत ही नहाया और नाश्त से फारिग होकर जब अपने बाप की ख्वाबगाह के बरामदे स होकर गुजरने लगा तो बाप की आवाज़ आई, "इधर आइए जनाब ! दम निकल गया इस आवाजे गजब से। जब मैं लरजता हुआ उनकी ख्वाबगाह म गया तो उन्होंने बडी भारी आवाज म इरशाद फरमाया, देखिए साहब यह मेरी दिली तम ना है कि आप इस दुनिया म फूलें फलें, आपकी दौलत मेरी दौलत से बढ जाए आपका मरतबा मुझस हज़ार गुना ऊचा हो जाए आप जि दगी के हर शोबे (क्षेत्र) म मुझसे आगे बढ जाए मगर कान खोलकर सुन लीजिए कि मैं इसे बरदाश्त नही कर सकता कि खा साहब आप मुझसे शायरी म भी बढ जाए। रात के मुशायरे म आपको मुझसे ज्यादा दाद मिली। अब आपका मेरे साथ मुशायरे जाना ब द—कतई बद। गजब खुदा का, बाप से ज्यादा बेटे को दाद मिले। मैं यह उल्टी गगा बहन का मौका नही दन का—सुना खा साहब आपन !

मेरे बाप मीर को गालिब पर तरजीह देते थे। हल्की फुल्की ज़बान म

१ अधिक उल्लास की वजह रोने लगी। २ मुस्कराना

शेर कहते और दाग के इस शेर पर अमल करते थे

वह न हैं उस जबान-उर्दू
जिसमें न हो रंग फारसी का।

एक रोज मैंने उनकी खिदमत में अपनी एक गजल इस्लाह के लिए पेश की जिसमें जा-बेजा फारसी तरकीबें थीं और एक मिसरा था

हमारी जिन्दगी यानी वफाए राजदां तक है

उन्होंने त्योरियों पर बल डालकर फरमाया सुब्हान अल्लाह यानी वफाए राजदां तक है। इस यानी की दाद नहीं दी जा सकती। मुझे इस बात का यकीन खौफ है कि तुम कुछ दिन में "गुमारे-मुजहाए मरगाने-चुत मुमिरा" पसंद आया (गालिब) तक आ जाओगे। ना साहब मैं तुम्हें इस्लाह नहीं दूंगा और तुम्हें अजीज साहब के सुपुर्द कर दूंगा। वह भी यानी वफाए राजदां और गुमारे सुनहा के बरतने वालों में से है। दोनों में खूब निबाह हो जाएगा। उन्होंने अजीज साहब को बुलाकर मुझे उनका शागिर्द बना लिया और शागिर्दी उस्तादी का यह सिलसिला छः बरस के अंदर ही टूट गया।

इसमें कोई शक नहीं कि अजीज साहब बहुत ही अच्छे उस्ताद और बहुत नानी बुजुर्ग थे। जहां तक जबान की सेहत और लहजे की नजाबत का ताल्लुक है उनकी जात से मुझे बहुत ज्यादा फायदा हासिल हुआ। जब मुझ पर साफ तौर पर यह महसूस होने लगा कि मेरे चिंतन की राह उनसे मुख्तलिफ है और हम दोनों की कल्पना एक ही सम्त में सफर नहीं कर रही है और उनकी इस्लाहों से शेरों का लफ्जी रंगो रोगन तो जरूर उभर आता है लेकिन मानवीयत (भावार्थ) धुंधली होकर रह जाती है तो मैंने इस्लाह लेना छोड़ दिया।

लेकिन इससे मेरे और उनके ताल्लुकात में किसी किस्म की तल्खी राह नहीं पा सकी। मैं हमेशा उनके रूबरू सर झुकाता और वह हमेशा मेरे सर पर हाथ फेरते रहे।

६

अलीगढ मे

एम० ए० ओ० कालिज मे मेरा दाखिला[1]

मेरा शायद १९१२ म वहा के स्कूल म दाखिला हुआ था और मुमताज हाउस के न० ४२ कमरे म जगह दी गई थी। इस कमरे म काकोरी के दो सगे भाई मावितअली और सामिनअली पहले से मौजूद थ। मेरे आने स तिकोन बन गई। इन दोनो भाइयो के चले जाने के बाद, रामपुर के दो सगे भाई बरकतुल्लाहखा और मुहम्मनुल्लाहखा आ गए। हमारा वह दो सगे भाइयो और एक दूसरे खानदान के तालिबे इल्म वाला कमरा बोर्डिंग हाउस के मद प्रोक्टर मजहर अलीम फरीदाबादी के कमरे से मिला हुआ था। हर चद मजहर अलीम खा महरबान उस्ताद थे मगर उनकी एक बुरी आदत के बायस हमारे दरम्यान टकावत पैदा हो गई थी। वह मुहम्मनुल्लाह खा अब्दुल जलील खा और मुझसे नाखुश रहा करते थे।

हमारे जमाने म कालिज के डाक्टर थे शफायतुल्लाह साहब जिन्ह हमारी शरीर पार्टी न यह धमकी देकर हमवार कर लिया था कि अगर आप हम लोगो को हमारे मुतालिबे पर फर्जी बीमारी की छुट्टिया नही दिलाएगे और हमारे परहजी खाना म कबाब पराठे और मुर्गे मुसल्लम तजवीज नही करेंगे तो हम आपका नाम हलाकतुल्लाह रखकर इस नाम की इस कदर शोहरत देंगे कि मुआइने के वक्त आप जिस बोर्डिंग हाउस म भी दाखिल होंगे वहा के दरो-दीवार 'हलाकतुल्लाह हलाकतुल्लाह' के नारो स गूजने लगेंगे।

---

१ यानी मुहम्मडन एग्लो ओरियटल कालिज। यह मुसलमानो को गैर [illegible] देनेवाला गुलामान अग्रजी नाम उस कालिज के बानी उन सय्यद अहमद खा ([illegible] सर का हिन्दुस्तान-दुश्मन खिताब अपना आशिया बना चुका था) न अपना [illegible] तीशाए जबू से तराशा था जिससे हुब्ब-वतन के पहाड काटे जाते [illegible] और [illegible] परवर्ज की तरफ जूए शीर (दूध की नदी) लाई जाती है। दरअसल [illegible] दी गई थी इस गरज से कि १ मुसलमानो को १८५७ की जग आजादी म [illegible] यह साबित कर दिया जाए कि मुसलमान का दिल हुब्ब-वतनी [illegible] आलूदा नही है। २ मुसलमान को पेट पालने की खातिर सिर्फ इस [illegible] वह बाबू या डिप्टी कलक्टर बनकर वर्ना बाबू बन सके [illegible] इतना डूब जाए कि अग्रजी ही म सोचे और अग्रजी ही में [illegible] अख्तियार करके अपना जवान अन्द, रवायत (परम्परा) [illegible] जलील और महज सब कि अपने बाप दादा की अज्मत [illegible] कि ब्रिटिश हुकूमत की जडें जम गई। इसम [illegible] बयान हुई।

इसी तरह हमारी मजबूत पार्टी ने डाकखानेवालों को भी इस कदर डरा दिया था कि जब अलीगढ से बाहर सैर करने जाना चाहते थे तो वे हमारे घरों से बुलावे के फर्ज़ी तार हमारे नाम भेज दिया करते थे।

अपनी पार्टी के तमाम मेम्बरों के नाम मुझे याद नहीं रह हैं। पटने के सैयद अलीअब्बास सैयद मुबारकअली रामपुर के, मुहसनउल्लाह खां अलीगढ के पास के, अब्दुल जलील खां के नाम भूले नहीं है और यह भी याद है कि इस पद्रह-बीस लडको की टोली के सरदार अब्दुल जलील खां और उनके नायब थे मुहसनउल्लाह खां।

एक बार जब हम पाचो लडके यानी अब्बासअली मुहसनउल्लाह, अब्दुल जलील और मैं सालाना इम्तहान में पास हो गए तो हम लोगो में यह मिस्कौट हुई कि पास होने की खुशी में आगरे जाकर दिवाली देखें।

लेकिन इस अय्याशी के वास्ते रुपया कहा से आए? और छुट्टी कैसे मिले? यह बडा टेढा सवाल था। अब्बासअली ने मशविरा दिया कि हम सब अपने अपने बापो को खत लिखकर पास हो जाने की खुशखबरी सुनाए और नये कोर्स की किताबो की गलत सलत और लम्बी चौडी फहरिस्त भेजकर पाच-पाच सौ रुपये मगवाए। यह तजवीज सबो ने बहुत पसन्द की।

मुझे खत लिखे जब छ सात रोज हो गए तो एक दिन देखा कि दारोगा उम्मीदअली चले आ रहे हैं। उन्हे देखते ही मेरा माथा ठनका। हो न हो दाल में कुछ काला जरूर है। मैंने सलाम किया सबकी खैरियत पूछी और उनके आने का सबब दरियाफ्त किया। उन्होने कहा— खा साहब मनीआर्डर कर रहे थे, मगर बडे भैया ने कहा कि रकम किसी के हाथ हेडमास्टर के पास भेज दी जाए। मैं सुन के होकर रह गया लेकिन चेहरे से परेशानी जाहिर नहीं होने दी और मुहसनउल्लाह के पास जाकर जो इस वक्त जलील के कमरे में गए हुए थे सारा माजरा बयान कर दिया। मुहसन थोडी देर गौर करने के बाद आईना देखने लगे। मैंने कहा—'माशा अल्लाह! मैं मुसीबत में घिरा हुआ हू और तुम आईना देख रहे हो। उन्होने मुस्कराकर कहा 'तुम्हारी मुश्किल हल करने के लिए ही आईना देख रहा हू।' मैंने कहा 'यह क्या बकवास कर रहे हो?' उन्होंने कहा तुम तो चुगद हो। मेरी बात समझे ही नहीं रहे हो। मैं आईने में यह देख रहा हू कि मैं अंग्रेजो की तरह गोरा चिट्टा हू और तुम्हारी खुशकिस्मती से मेरी आखें भी अंग्रेजो की तरह कजी हैं। उन्होंने कहा तुम भी कितनी मोटी अक्ल के आदमी हो—जाओ कमरे से मेरा काला सूट मेरा बूट टाई और हैट ले आओ मगर इस तरह कि कोई देख न पाए। मैंने पूछा— क्या? उन्होंने होठ पर अगुली रखकर कहा फजूल वक्त जाया न करो। जो बातें मैंने कही हैं जल्दी से ले आ। मैं उनका सब सामान ले आया। उन्होने जल्दी-जल्दी सूट पहना और सर पर हैट लगाकर कहा आओ मेरे साथ। मैं सहमा-सा गया और उनके साथ हो

लिया। वह सीधे हेड मास्टर के कमरे के बरामद म दाखिल हो गए और हेड मास्टर क चपरासी स कहा, 'हम इस वक्त एक मजाक करने आए हैं। अभी हेड मास्टर के आन म आधा घटा बाकी है। तुम मुझको इजाजत दो कि मैं हेड मास्टर की कुर्सी पर बठ जाऊ और जब शबीर एक आदमी को अपने साथ लेकर यहा आए तो उस दरवाजे पर रोककर मेरे पास आओ। फिर कमरे से बाहर निकलकर उस आदमी से कहो, चलिए साहब बहादुर के पास।' मुहसन न चपरासी क हाथ पर पाच रुपय रख दिए और वह हेड मास्टर की कुर्सी पर जा बठे। मैं दौडता हुआ मुमताज हाउस गया और दारोगा साहब को लेकर आ गया। चपरासी ने हिदायत के मुताबिक अन्दर जाकर इत्तला दी और बाहर निकलकर दारोगा साहब स कहा, चलो साहब बहादुर के पास।

दारोगा साहब न हेड मास्टर को सलाम किया और जेब से किताबो की फेहरिस्त और पाच सौ के नोट निकालकर हेड मास्टर की मेज पर रख दिए और पूछा 'हुजूर! इस रकम म कोई कमी-बेशी तो नही होगी?' हेड मास्टर न कहा वेल, यह रकम एकदम बराबर है। अच्छा, खान साहब स हमारा सलाम बोलना—अब आप जाइए।'

दारोगा उम्मीद अली सलाम करक मेरे साथ बाहर निकल आए।

अलीगढ म बडी धूम धाम से हर साल नुमायश हुआ करती थी। एक रात को जब हम पशावरी पराठे कबाब और खारजे की चटनी खाकर निकले त हमारी चडाल चौकडी एक चाकू छुरी बेचनेवाले की दुकान के सामने जा खडी हुई। नुमायश की तज रोशनी म छुरिया और चाकू एसे जगमग हो रह थे कि मेरा जी चाहा मैं उन्ह चूमकर सीने म लगा ल। मैंने पठान दुकानदार से पूछा तो उसने कहा एक रुपया चार आना। मुहसन ने कहा, नहा दस आना। पठान बोला नाइ एक रुपया चार आना। खुशी चाहे टेक (Take), खुशी चाहे तो न टेक।

इन आवाजो को सुनकर कालिज क दूसरे लडके भी उसी तरफ आ गए और थट के थट लग गए दुकान के सामने। मुहसन ने कहा दस आना, दस आना।' पठान ने फिर वही जवाब दिया, एक रुपया चार आना। खुशी चाहे टेक, खुशी चाहे न टेक। यह सुनकर मुहसन चिढ गए और तमाम लडको स इशारा करके कहा 'गाजियो, बढो, टूट पडो और लूट लो माले गनी मत को। यह दावते-आम सुनकर टूट पडे लडके छुरिया चाकुओ पर। पठान झपटा। लडको ने उसे दबोच लिया और लुटने लगी दुकान धडा धड। पठान न पुलिस! पुलिस! पुलिस! चिल्लाना शुरू कर दिया। पुलिसवाले लपट पडे। हमने छुरिया तान ली। व ठिठक गए। इतने म एक शामत का मारा अंग्रेज पुलिस अफसर मोटर साइकिल पर बठा इधर आ गया। जब उसने मोटर साइकिल स एक पर नीचे उतारकर हमे डाटना शुरू किया तो टूट पडे हम

सब उसपर। और इतना पीटा कि वह बेहोश होकर गिर पड़ा। हम सब के सब माले गनीमत लिए और 'खुशी चाहे टक, खुशी चाहे न टक' के नारे लगाते वहां से भागकर कालिज में आ गए।

एक रोज मेरे एक रूमानी दोस्त और मेरे दोस्त प्रिंस मिर्जा आलमगीर कदर का भाई जहांगीर कदर हमारे पास आया फरियादी बनकर। कहने लगा, शबीर साहब एक फर्स्ट ईयर फूल लडका फजल इलाही है। वह साला अपने हुस्न पर इस कदर मगरूर है कि सीधे मुह बात ही नही करता। पुट्ठे पर हाथ ही नहीं रखने देता। तुम्हारी पार्टी माशाअल्लाह बडी तगडी है। उसे नीचा दिखाओ तो मैं तुम्हारा गुलाम हो जाऊं।

हमारी पार्टी लगर-लगोटे कसकर जहांगीर कदर की मदद के वास्ते आमादा हो गई। इतवार के दिन जहांगीर कदर को दूल्हा बनाकर और हार फूल दुपट्टा नकली दाढी और ढोलक लेकर हम दस-पन्द्रह लडके बरातियों की तरह कच्ची पाक पहुचकर फजल इलाही के कमरे में मुबारकबाद मुबारकबाद मुबारकबाद के नारों के साथ दनदनाते घुस पडे। फजल इलाही ने, जिसके मुताल्लिक 'सारी दुनिया एक तरफ फजल इलाही एक तरफ' का गलगला हर तरफ बुलन्द था, तेवरियों पर बल डालकर कहा 'मैंने तो आप लोगों को नहीं बुलाया था?' जलील ने कहा 'दुल्हनें भी किसीको बुलाया करती हैं जनाब? हम जहांगीर कदर दूल्हा से तुम्हारा निकाह पढाने आए हैं।'

उस लडके ने कोशिश की भाग निकलने की। हमारे साथियों ने उसे पकड लिया, दुपट्टा उसके सर पर डाल दिया। जहांगीर कदर को हार फूल पहनाए, जलील ने जेब से नकली दाढी निकालकर मुह पर लगा ली और काजी बनकर उस लौंडे का जहांगीर कदर से निकाह पढा दिया। साथियों ने ढोलक बजा-बजाकर नीचे स्वरों में शादियाने गाने शुरू कर दिए। बरामदे में मेला-सा लग गया और हर तरफ कहकहे गूजने लगे।

इतने में किसीने यह देखकर कि हेड मास्टर राउड लगाता चला आ रहा है, हमे आगाह कर दिया। हम सब डरे हुए हिरनों की मानिंद भाग खडे हुए—और दूल्हा मियां अभी उठ ही रहे थे कि हेड मास्टर सर पर आ पहुचा। फजल इलाही ने उससे फरियाद की। उसने जहांगीर कदर से पूछा 'तुम कौन हो?' जहांगीर कदर की जबान से घबराहट में निकल गया "Sir I am bridegroom (जनाब मैं दूल्हा हूं।)" हेड मास्टर ने 'वेल मिस्टर ब्राइडग्रूम वेल मिस्टर ब्राइडग्रूम' कह-कहकर उस बेंत पर धर लिया।

बराती तो साफ बचकर निकल गए और बेचारे ब्राइडग्रूम साहब पिट गए। इस वाकये के एक हफ्ते के अदर हम तीनों लडकों यानी मुहसनुल्लाह खां, अब्दुल जलील खा और आग चलकर हजरते-जोश मलीहाबादी बननेवाले शबीर हसन खां को भी स्कूल से निकाल दिया गया—

बहुत बे-आबरू होकर तेरे कूचे से हम निकले।

मेरी जवानी तक का हिन्दुस्तान

मेरे हालात के साथ साथ मेरे उस हिन्दुस्तान के सांस्कृतिक और सामाजिक हालात भी सुन लीजिए, जिसने मुझे प्रभावित किया और साँचे में ढाला था।

तहज़ीबी एतबार से उस वक्त हिन्दुस्तान दोराहे पर खड़ा सोच रहा था कि मशरिकीयत (पूर्वीपन) पर कायम रहे या मगरिबीयत (पश्चिमीपन) की ओर मुड़ जाए। मुल्क उस वक्त 'खालिस मशरिकी' 'नीम मशरिकी' और 'मगरिबी'—तीन गिरोहों में बटा हुआ था।

खालिस मशरिकी गिरोह की अक्सरीयत थी नीम मशरिकी गिरोह की तादाद कम थी और मगरिबी गिरोह अकल्लीयत (थोड़ी गिनती) में था।

खालिस मशरिकी गिरोह के चेहरों पर लम्बी या खशखशी दाढ़ियाँ थीं और सरों पर पटे, पट्टों पर अम्मामे, दस्तारें, शिमले या दोपल्ली और चौकानी टोपियाँ, पाँव में गितले और सलीमशाही जूते, बड़े पाइँचों के पायजामे या औरेबी घुटन्ने, अबायें-कबायें, अंगरखे, दगले, कंधों और कमरों पर बड़े-बड़े रूमाल, चिकन के कुर्ते, रूई की सलूकियाँ और हाथों में खाके शफा की तस्बीहें, उंगुलियों में फिरोजे की अंगूठियाँ, हालों और शामों लगी छड़ें।

नीम-मशरिकी गिरोह दाढ़ी मुड़ाता, शेरवानियाँ, चुस्त पायजामे, पम्प जूते इस्तेमाल करता और जेबों में घड़ियाँ रखता था, जिनकी ज़ंजीरें दोनों जेबों के दरम्यान लटकती रहती थीं।

और मगरिबी गिरोह सूट-बूट और हैट में गर्क रहता था। लेकिन दाढ़ी के साथ मूँछें नहीं मुड़ाता था।

नवाब साहब की बेगम हों या बैरिस्टर साहब की बेटर हाफ (Better Half) दोनों बड़ी सख्ती के साथ पर्दे की पाबन्द थीं। डोली और पालकी के सिवा कोई बीबी घर से बाहर कदम नहीं रखती थी। और तो और औरतों की आवाज़ें और उनका वज़न भी पर्दानशीन था। यानी कोई बीबी इस कदर ज़ोर से नहीं बोलती थी कि मर्दाने तक उसकी आवाज़ जा सके। और जब कोई औरत पालकी में सवार होती थी तो पत्थर का टुकड़ा या सिल पालकी में रख दी जाती थी ताकि कहारों को उसके जिस्म का सही अन्दाज़ा न हो सके। बाँदियाँ तो बीवियाँ, मामाएँ, असीलें और लौंडियाँ तक पर्दे की पाबन्द थीं।

जनाने में आने-जानेवाले बाहर के बच्चों से भी जब कि वे दस-ग्यारह बरस के हो जाते थे पर्दा शुरू कर दिया जाता था। और तो और बाप दादा नाना चाचा फूफा के सामने भी औरतें सरों पर पल्लू डालकर जाया करती थीं और किसी औरत की यह मजाल नहीं थी कि वह अपने बज़ुर्गों की

मौजूदगी में अपने बच्चे को गोद में ले ले।

जनाने मकान की फिजा को पवित्र रखने का यहां तक खयाल किया जाता था कि किसी तरकारीवाली को यह इजाजत नहीं थी कि वह लम्बी लम्बी तरकारियां जैसे लौकी, तुरई केले चचेंडे वगैरह को टुकड़े-टुकड़े किए बगैर सालिम हालत में अन्दर ले जाए इसलिए कि सूरत के लिहाज से इन तरकारियों को 'अश्लील तरकारी' खयाल किया जाता था।

अपने लड़कपन का एक वाकया बयान करता हूं। मलीहाबाद के एक लड़के की शादी में नाच हो रहा था कि बालाखाने से एक औरत झांककर इधर देखने लगी और साहबाने महफिल में से एक साहब ने उसे बन्दूक मार दी। साहबे-खाना देशी के हल्के में खड़े थे कि उन्होंने गोली चलने की आवाज सुनी और दौड़े हुए महफिल में आए। गोली मारनेवाले खां साहब ने उनसे कहा 'भाई आपकी बीवी ऊपर से झांक रही थी। मुझसे यह बेहयाई बरदाश्त नहीं हुई मैंने गोली मार दी।' साहबे-खाना ने उसकी पीठ ठोककर कहा "बहुत अच्छा किया आपने।" वह तुरन्त अन्दर चले गए। थोड़ी देर में एक लाश खींचते हुए आए और कहा भाइयो देख लीजिए मेरी बीवी नहीं लौंडी झांक रही थी। अल्लाह ने मेरी आबरू और मेरी जान दोनों चीजें बचा लीं।

सियासी एतबार से उस वक्त सन्नाटा छाया हुआ था। पौ फटने में बहुत देर थी। रात के दो या तीन बजे का वक्त था। लोगों की अक्सरीयत खर्राटे ले रही थी। कुछ बिस्तरों पर पड़े करवटें ले और कुलमुला रहे थे और बहुत थोड़े लोग तिलक और गांधी के गजर सुनकर बेदार हो गए थे और धीमे स्वरों में आजादी के चर्चे कर रहे थे। भारत माता चौकन्नी होकर और इधर उधर देखकर दिल ही दिल में सोच रही थी—

अज कुजामी आयद ईं आवाजे-दोस्त

(सुन यह दोस्त की आवाज कहां से सुनाई पड़ रही है?)

फिरंगी के कान तक भी ये आवाजें पहुंच रही थीं लेकिन उसका गरूर कह रहा था कि, यह हवा मेरे चिरागों को बुझा सकती नहीं।

लेकिन महात्मा गांधी जिस वक्त लंगोटी बांधकर मैदान में कूद पड़े तो पौ फट गई और हर तरफ से ये आवाजें आने लगीं कि तख्त या तख्ता—आजादी या मौत।

गांधी की आंधी ने दुश्मन के औसान उड़ा दिए। दुश्मन यह सोचकर हाथ मलने लगे कि हमने मुसलमानों के एक फिरके को दूसरे फिरके और हिन्दुओं के एक फिरके को दूसरे फिरके और फिर समूचे हिन्दुओं और मुसलमानों को एक दूसरे से लड़ाने के सिलसिले में जो रुपया पानी की तरह बहा दिया वह बेकार गया और सारे मुसलमान और हिन्दू मिलकर आज हमारे मुकाबले के वास्ते आ गए। यह अहसान निहायत नमकहराम है। क्या इलाज किया जाए इस भयानक फितने का?

आखिरकार हुकूमत ने एक मसूदा तयार कर लिया। पुलिस और फौज के हल्के म बिगुल बजा दिया। एक तरफ जेला के दरवाजे खोल दिए गए लाठिया बरसन और गालिया चलन लगी और दूसरी तरफ पकड बुलवा लिया गया हिन्दुओ और मुसलमाना के दीनी रहनुमाओ यानी महामहोपाध्याया और शम्सुल उलेमाओ को जिन्ह हिंदू मुस्लिम फिसाद बरपा कर देने के लिए वरमा म घर बठे वजीफे मिल रह थे और बुरी तरह फटकारा गया उह कि उन्होने ऐसी गफलत क्या बरती कि हिंदू मुस्लिम इत्तहाद का फितना बरपा हो गया।

और इसके साथ-साथ पुकारा गया उन तमाम नवाबा राईट आनरेबला, खानबहादुरा, रायबहादुरा रईसा, ताजरा, सेठा, सूदखोरा जमीदारा जागीरदारा तालुकेदारा और देशी रियासता के राजे-नवाबा को जिन्ह हुकूमत साडा की तरह पाले थी कि ए पिट्ठओ! काग्रेस की तरफ अपनी तोपा के मुह मोड दो और आजादी के दीवाना पर अपन कुत्ते छोड दो।

अब क्या था, हर तरफ पकड धकड का तूफान बरपा हुआ जेलें भरी जाने लगी मूल्किया खत्म कर दी गई और हर तरफ से गुलगुले बुलन्द होन लग कि खाक म मिलाकर रख दो अग्रेज बहादुर के गद्दारा को। यहा तक कि आगे चलकर जलियानवाला बाग्र की जमीन खून म डूब गइ और तडप-तडपकर ठण्डी होन लगी लाश देशभक्ता की।

११

राष्ट्रीय आंदोलन से लगाव

यह घटना शायद १९१८ की है कि सबसे पहले मुहम्मद मुस्तकीम ने मुझे गांधीजी की शख्सीयत और तहरीके-आज़ादी की अहमीयत से आगाह करके कांग्रेस के सालाना इजलास में शरीक होने के वास्ते अहमदाबाद भेजा था। शाम के वक्त अहमदाबाद पहुंचा। एक कैम्प में जाकर ठहर गया। थका-मांदा था, खाना खाकर सो गया। पिछले पहर यह सपना देख ही रहा था कि मैं तख्त-सुलेमान पर बैठा उड़ रहा हूं कि मेरा कैम्प तानों से गूंजने लगा। आंख खुल गई, घड़ी देखी। सवा चार का वक्त था। उठकर बाहर आ गया।

देखा कि मेरे कैम्पों के शहर पर सलोनी-सी गुलाबी रोशनी बरस रही है और सैकड़ों सुंदर गुजराती लड़कियां पतली-पतली कमरों में सुर्ख पटि्टयां बांधे और हाथों में शमए उठाए कौमी तराने गा रही हैं और पूरी दुनिया छम छम नाच रही है।

मैं सुबह होते मौलाना अबुलकलाम आज़ाद के पास पहुंचा। उन्होंने हंसकर कहा, "[illegible] में जो [illegible] आपने सुनाया था, आज तक उसका मज़ा ले रहा हूं।"

महात्मा गांधी से पहली मुलाकात

मौलाना आज़ाद के साथ गांधीजी से मिला। उनकी सूरत ने मेरे सौन्दर्य-बोध के मुंह पर तमाचा-सा थप्पड़ मार दिया। मेरे दिल में उस वक्त यह ख्याल आया कि इस कदर टूटे हुए जिस्म और इस कदर [illegible] सूरत का आदमी दुनिया में कर ही क्या सकता है? हिन्दुस्तान की आज़ादी और गांधी? मसूर का मुंह और मसूर की दाल? निराशा ने मुझे घेर लिया।

लेकिन जब विभिन्न समस्याओं पर उन्होंने अपना बयान दिया तो उनकी राय और उनके [illegible] की परिपक्वता और दृढ़ता ने यकीन दिला दिया कि हिन्दुस्तान को जिस मर्दे-मैदान का इंतज़ार था वह आ गया है। अब हमारे दिन बहुर जाएंगे। गांधीजी के पास पंडित मोतीलाल की [illegible] [illegible] बैठी थी। उस वक्त तक मैंने उनका [illegible] किया न था। मेरा दिल बार-बार उसी ओर इस सोच में पड़ गया कि अगर [illegible] दूसरे के साथ उनकी शादी हो जाती तो कौन सी कयामत आ जाती। हम सब इन्सान हैं। आज़ादी के बाद भी हम कुत्तों की तरह लड़ेंगे और एक दूसरे को भंभोड़ते रहेंगे।

लंदन में मौलाना मुहम्मद अली, मौलाना शौकत अली, मौलाना आज़ाद, [illegible] और पंडित नेहरू भी थे। नेहरू ने मुझे गले लगा लिया और मुझ

वह ज़माना याद आ गया जब मैं लड़कपन में अपने बाप के साथ उनके बाप के मकान में ठहरा और वहां सबसे पहले उन्हें देखा था। उस वक्त वह भी क़यामत थे और मैं भी।

इसके बाद हम सब पंडाल जाने के लिए बाहर आए। अल्लाह-अल्लाह वो हिन्दू मुस्लिम इत्तहाद का वह जोश खरोश वह गोमती-गंगा की मौजें दोश-बदोश। आंखों में वे इरादे वे हौंसले गरदनें वे गुरूर बाज़ुओं के गरजते शब्द वे गुज़राती वालंटियर लड़कियां के जोशीले गीत वह पीत की रीत वह उमंगों का ज़ोर वह तरंगों का शोर, वह ज़िंदगी की सजधज वह नारों की गूंज-गरज, वह तमन्नाओं के तूफ़ान वे लौ देते अरमान—ऐसा मालूम हो रहा था कि हिंदुस्तान की ज़मीन आसमानों की तरफ़ उमड़ रही है। हर तरफ़ एक बिजली है कि लपक रही है। फिरंगी खड़े सीना कूट रहे हैं हुकूमत के ग़ुरूर के शीशे छनाछन टूट रहे हैं। तूफ़ान बनकर आ रहा है स्वराज और हिंदुस्तान के नंगे सर नौजवानों के कंधों की तरफ़ बढ़ता चला आ रहा है बरतानिया का ताज।

कांग्रेस पंडाल में कदम रखा लोगों के जोशो-खरोश को देखा और खून मेरे बदन में तीन करोड़ मील प्रतिक्षण की रफ़्तार में गरदिश करने लगा।

खिलाफ़त कमेटी का इजलास

रात के वक्त जब खिलाफ़त कमेटी के इजलास में शरीक होने के लिए पंडाल के पीछे से गुज़रने लगा (जहां रोशनी और आमद-रफ़्त कम थी) तो मैंने एक वालंटियर लड़की को दीवानावार बांहों में लिया और मेरे बांहों में लेते ही पंडाल से आवाज़ बुलंद हुई—नसरे मिन अल्लाह व फ़त्ह क़रीब।

मैंने इस नारे को बहुत अच्छा शगुन समझा। भागी-भागी खिलाफ़त के पंडाल में आ गया। देखा कि मौलाना हसरत मोहानी और महात्मा गांधी के दरम्यान गर्मा-गर्मी हो रही है। एक तरफ़ गांधीजी और उनके दूसरे साथी इस बात पर अड़े हैं कि अभी ब्रिटिश राज के भीतर स्वराज की मांग की जाए और दूसरी तरफ़ फक्कड़ मौलाना हसरत मोहानी हैं जो मुकम्मिल आज़ादी का प्रस्ताव पास कराना चाह रहे हैं।

हज़रत हसरत मोहानी को सबने लाख-लाख समझाया। लेकिन वह नहीं माने और सीधे स्टेज की ओर चल पड़े अपना मुकम्मिल आज़ादी का प्रस्ताव लेकर। स्टेज ऊंचा था और हसरत ठिंगने कद के आदमी थे। मैंने सहारा देकर उन्हें स्टेज पर पहुंचा दिया और जब उन्होंने अपना प्रस्ताव पेश किया तो पंडाल में हंगामा बरपा हो गया। मैं इस हंगामे से उतरकर उस वालंटियर लड़की के पास पहुंच गया जो पंडाल के पीछे मेरा इंतज़ार कर रही थी।

जब मैं अहमदाबाद में लौटने लगा तो छोटे नाना (जिनका ज़िक्र आगे आएगा) ने कहा भाई बशीर हसन खां मुझे आज मेरे शरीफ़ की ज़ियारत

करा दो। ऐसे मौके रोज रोज नहीं आएंगे। मैंने उनकी बात मंजूर कर ली। अजमेर से दो चार स्टेशन पहले ही डिस्टेंट सिगनल डाउन न होने से गाड़ी एक जगह रुक गई। मैंने देखा कि एक बला की हसीन लड़की सामने खड़ी हुई है। उसके हुस्न ने मजबूर कर दिया कि उसे पास से जाकर देखूं। मैं गाड़ी से उतरकर उसके नजदीक पहुंच गया और इस कदर मसहूर हुआ कि गाड़ी रेंगने लगी। छोटे दादा ने गला फाड़ फाड़कर आवाज दी।

मैंने पुकारकर कहा आप जाए, अजमेर के वेटिंग रूम में ठहर जाएं। मैं दूसरी गाड़ी से आ जाऊंगा। दूसरी गाड़ी से शाम के वक्त अजमेर पहुंच गया। जब खाना खाकर लेटने लगे तो छोटे दादा ने कहा भाई शबीर हसन खां जाओ जियारत कर आए। मैंने कहा आप जाए। मैं ख्वाजा साहब का मेहमान हूं और जब तक खुद मेजबान बुलाने नहीं आएंगे मैं नहीं जाऊंगा। छोटे दादा ने मुझे इस तरह घूरकर देखा जैसे मैं कुफ्र बक रहा हूं और मुंह बनाकर दरगाह चले गए।

दस्तूर के मुताबिक कोई चार बजे मेरी आंख खुली। नहा धोकर शेरवानी पहनी और चाहा कि जुगनू को जगाकर टहलने निकल जाऊं। लेकिन दस्तूर के खिलाफ नींद का एक ऐसा गहरा झोंका आया कि जूता और शेरवानी उतारे बगैर मैं चारपाई पर लेटा और सो गया। इसी आलम में यह सपना देखा कि एक मर्दे-बुजुर्ग मेरे सिरहाने खड़े बड़ी दिलदारी से मुसकरा रहे हैं। मैंने नाम पूछा तो उन्होंने सस्नेह कहा मेरा नाम है मुईनुद्दीन और मेजबान की हैसियत से आपको बुलाने आया हूं। शर्त आपकी पूरी हो गई। अब तो आइएगा ना ?

मेरी आंख खुल गई। छोटे दादा को जगाकर सपना सुनाया। उन्हें हैरत हुई। कहने लगे भाई शबीर हसन खां आप तो छुपे रुस्तम निकले। इसके बाद हम दोनों दरगाह चले गए।

अजमेर से पलटकर जब लखनऊ पहुंचा तो गलगला सुना कि टगोर आए हैं। उनसे मिलने गया। उन्होंने मुझे सर से पांव तक देखने के बाद अंग्रेजी में पूछा क्या यह बात सच है कि मैं एक नौजवान शायर के चेहरे को देख रहा हूं ?' मैंने सर झुकाकर अंग्रेजी में जवाब दिया 'शायद'। उन्होंने मेरा नाम पूछा। जब मैंने अपना तखल्लुस बताया तो उन्होंने बड़े तपाक से हाथ मिलाया और कहा यह अजीब इत्तफाक है कि कल ही सरोजिनी नायडू ने आपकी एक नज्म तलूए महर (सूर्योदय) का अनुवाद सुनाया और आज आपसे मुलाकात हो गई। आपकी नज्म लाजवाब है।

इसके बाद उन्होंने बताया कि मेरे बाप फारसी के बड़े स्कॉलर थे और दीवान हाफिज उनके सिरहाने रखा रहता था।

जब मैं रुखसत होने लगा तो उन्होंने कहा 'क्या यह मुमकिन नहीं कि आप शान्ति निकेतन आकर कुछ रोज के लिए मेरे साथ रहें और हाफिज की

स्पिरिट से मुझे बखूबी आगाह कर दें ?" मैंने बडी खुशी के साथ उनकी दावत कबूल कर ली और जुगनू खिदमतगार को लेकर वहा पहुच गया और पढने के लिए बहुत सी किताबे भी साथ ले गया।

वहा की जिन्दगी बडी सादा थी। लेकिन गोश्त वहा नही खाया जा सकता था। इसकी तकलीफ जरूर थी। फिर भी जुगनू चोरी छिपे गोश्त का इतजाम कर दिया करता था।

लडको और लडकियो के मेलजोल के मामले मे टगोर कितने विशाल हृदय थे इसका अदाजा इस घटना से किया जा सकता है कि एक दिन किसी बूढे प्रोफेसर ने आकर जब एक लडकी और एक लडके के बीच हद से ज्यादा सम्बन्धो की शिकायत की तो उन्होने उससे पूछा, 'यह सूरत जब्र से पैदा हुई है ?' जब उस प्रोफेसर ने बताया कि इसमे जब्र को कोई दखल नही, तो टगोर ने कहकहा मारकर कहा तो फिर इसमे एतराज की बात ही क्या है कुदरत के तकाजो पर बन्द बाधना मानव-स्वभाव के खिलाफ ना इसाफी ही नही, बगावत भी है। (यह जान सुनकर मैं भी लडकियो के साथ खुलकर मिलने जुलने लगा।)

मैं चाहे सूफीवाद के दायरे से निकलकर भौतिक चिंतन की ओर आहिस्तगी से बढ रहा था पर इसके बावजूद टगोर की शायरी मुझे बहुत प्रभावित किया करती थी। मैं उनके अनुवाद पढ-पढकर सर धुनता था। अब भी मेरे दिल मे यह चोर है कि कभी कभी सूफियाना शायरी पर मैं झूम उठता हू। कारण इसका शायद यह है कि शायर किसी मजिल मे भी खुश्क और खुरदरा फल्सफी नही बन सकता। अगर मैं बगाली जबान से वाकिफ होता तो टगोर की शायरी को बगालियो की तरह समझ सकता। लेकिन मुझे इसका बेहद अफसोस है कि मैंने उनकी शायरी को अपेक्षा अनुवादो के माध्यम से पढा और बगालियो की तरह समझ नही सका।

टगोर विशाल हृदय विनोदप्रिय भले हमसे ज्यादा बतकल्लुफ, भावुक और हुस्नपरस्त इसान थे।

लेकिन एक चीज उनमे ऐसी थी जो मेरे दिल मे खटका करती थी और वह थी उनकी दिखावे की आदत। मैंने हमेशा इस बात को बुरी नजर से देखा कि जब कोई विदेशी उनसे मिलने आता था तो उसके आने से पहले वह बन सवरकर एक खास मुकाम पर बैठ जाते थे। धूपदान उनके पीछे सुलगा दिया जाता था और वह रूपवती कन्याओ को अपने इर्द गिर्द खडा करके या इटरव्यू दिया करते थे कि आनेवाले को यह गुमान होने लगे कि मैं किसी रहस्यमय देवता को देख रहा हू।

एक सपना

यह १९२२ का जिक्र है कि एक दिन शाम के वक्त जब मैं 'कस्रे-अम्बर' में बैठा हुआ सामने की फूली हुई लालिमा की तरफ़ निगाह कर रहा था तो मेरी बीवी ने मुझसे कहा, "दिन रात तुम्हें कहीं जाना की धुन लगी रहती है। भूल से भी अपने गाँव ग्राम की खबर नहीं लेते। ख्वाजा हसन को तुमने मिल्कियतदार बना दिया है। वह ऐसा दुंद मचाए हुए हैं कि अल्लाह दे और बन्दा ले। दोनों हाथों से लूट रहे हैं तुम्हारी रियाया को। हर तरफ़ त्राहि-त्राहि मची हुई है। गाँव-ग्राम का न हिसाब है न किताब और जब तुम हिसाब माँगते हो, वह बालों से तोते उड़ाने लगते हैं और जबानी हिसाब बनाकर उल्टे कुछ तुम्हारे ही जिम्मे निकाल देते हैं। तुम्हें दस हजार देकर बीस हजार अपनी जेब में रख लेते हैं। यह कागज़ की नाव आखिर कब तक चलेगी?" मैंने कहा, 'अशरफजहाँ, अब मैं खुद ही काम करूँगा।' उन्होंने तुनककर कहा, "अरे, तुम इस काबिल होते तो फिर रोना क्या होता? तुम तो अपनी जायदाद का एक बड़ा हिस्सा और लाख डेढ़ लाख रुपये नकद आँखें बन्द करके अपने बड़े भैया की नज़र कर चुके हो। जो कुछ बचा खुचा रह गया है उसे भी किसी की भेंट चढ़ा दोगे। ढाक के तीन पात रह जाएँगे। लड़कों का ब्याह हो सकेगा न लड़के की पढ़ाई।"

मैंने कहा, "अशरफजहाँ, इतना दिल छोटा न करो। मेरे पास जो कुछ बच रहा है वह भी खुदा के फज़ल से इस कदर है कि हम-तुम बड़े आराम के साथ ज़िन्दगी बसर कर सकते हैं।" उन्होंने बिगड़कर कहा, "सदा अपने ही बारे में सोचते हो। अरे यह तो सोचो कि हमारे बच्चों का हश्र क्या होगा? मैं पूछती हूँ क्या हमारे बच्चे अपने बाप दादों का भ्रम कायम रख सकेंगे?"

बीवी की ये बातें सुनकर मैं सन्नाटे में आ गया। दिल ने कहा, कहती तो ठीक है। वह पहला दिन था कि यह सोचने लगा अपनी आमदनी और अपनी जायदाद कैसे बढ़ाऊँ? जब खाक कुछ समझ में न आया तो दिल उदास हो गया और चेहरे पर बड़ी बेकसी बरसने लगी।

दूसरे कमरे में आकर अपने बच्चों के भविष्य पर गौर करने लगा। इतने में खुदा जाने यकायक क्या लहर आई कि मैं नात[1] कहने लगा।

> है कि तिर जलाल से हिल गई बज़्मे काफ़िरी
> रेशाए-ख़ाफ़ बन गया रश्मे-बुतान आज़री।

नात कहकर खाना खाया बिस्तर पर लेटा और लिहाफ ओढ़कर सो

[1] वह कविता जो हज़रत मुहम्मद की स्तुति में गाई जाती है।

गया। नात सर में गूंजने लगी। बीवी के खर्राटों ने मेरे पपोटे बोझल कर दिए। फारान की हवाओं ने लोरी दी और दो चार करवटें बदलकर सो गया।

पिछले पहर एक अनोखा सपना देखा—सच्चा सपना या मेरी कल्पनाओं का जाल। मैं क्या फैसला करूं? यह दुनिया बड़ी विचित्र और रहस्यमय है।

हां तो, यह सपना देखा कि एक चमकदार चेहरे के बुजुर्ग मेरे सामने खड़े हैं और चांद उनकी परिक्रमा कर रहा है। मैंने उनकी तरफ निगाह उठाई, आंखें चुंधिया गईं। बार बार आंखें मलीं, गौर से उन्हें देखा। पल-भर में हाफिजा जाग उठा। मैं पहचानकर उनके कदमों पर गिर गया और मुंह मलने लगा उनके जूते पर। उन्होंने हाथों का सहारा देकर मुझे उठा लिया। मैंने रोते हुए पूछा, क्या आप वही मेरे रसूल हैं जिन्होंने अपना दीदार लड़कपन में मुझे दिखाया था। यह सुनकर वह मुसकराए और इरशाद फरमाया, 'हां मैं वही तुम्हारे पहले ख्वाब का मुहम्मद हूं। यह सुनते ही मैं उनके कदमों पर गिरकर और उनके जूते से मुंह रगड़ रगड़कर रोने लगा।

मेरे मुहम्मद ने फरमाया 'उठ खड़े हो।' मैं हाथ बांधकर उनके रूबरू खड़ा हो गया। उन्होंने कहा 'तुम हंसने के लिए बने हो, रोते क्यों हो?' और मेरी दाहिनी की जानिब इशारा करके हुक्म दिया कि तुम उस शख्स के पास चले जाओ। मैंने उधर निगाह उठाई तो देखा कि एक बादशाह सर झुकाए और हाथ बांधे खड़ा हुआ है। मैंने कहा 'ए मेरे रसूल यह कौन है?' उन्होंने इरशाद फरमाया निजामे दक्कन है। तुम्हें दस बरस तक उसके जेरे साया रहना है।

यह सुनकर मेरा दिल इस तरह धड़कने लगा कि उसकी धड़कनों में आंख खुल गई और रोंगटे रोंगटे मेरी हिचकियां बंध गईं।

जी भरकर रो चुका तो बिस्तर से उठा। मुंह हाथ धोने लगा। मुंह पर दो चार छपक्के जोर जोर से मारे तो हवास बजा हो गए। हवास बजा होते ही एक असीम आश्चर्य ने मुझे आ घेरा। सर पकड़कर सोचने लगा कि मैंने ऐसी ऊसर जमीन पर मकान बनाया है, जहां दूर तक बाग नहीं है। और तो और अभी तक इस मकान को फूलों के गमलों से भी नहीं सजाया। इसके बावजूद एक निराली खुशबू मेरा दिमाग किए हुए है और खुशबू भी ऐसी कि इत्र और फूल भी उसका मुकाबला नहीं कर सकते। आखिर यह तिलिस्म क्या है? यह ख्वाब के असर का जादू है या सचमुच की खुशबू है? यह ख्याल करके मैंने बीवी को जगाया कि देखूं वह भी खुशबू महसूस करती हैं कि नहीं।

बीवी आंखें मलती हुई उठीं पूछा 'कहीं जा रहे हो?'

मैंने कहा और क्या नौकर हो इस बात के हैं। जल्दी से पान [illegible] बना दो। बीवी ने उठकर कुल्लिया का पानदान खोला और [illegible] चूने की चमची उठाई, बिगड़कर मुझे देखा और पूछा, '[illegible]

निजाम की नौकरी

घमभीरु बीवी मेरे पीछे पड़ गई कि तुम को रसूल अल्लाह ने हुक्म दिया है दक्न जाने का, जाओ और जल्दी जाओ।

बीवी बेचारी को तो मैंने खट से घमभीरु कह दिया लेकिन अपने गरेबान में मुंह डालकर यह बात नहीं सोची कि उस वक्त मैं भी कौन सा बुक़रात-आज़म था। मैं खुद इस बशारत के इम्तहान के लिए हैदराबाद जाना चाहता था। यानी बीवी के दिल में ही नहीं मेरे दिल में भी चोर था जो रंग लाए बगैर न रह सका।

यह स्पष्ट कर देना भी ज़रूरी है कि दक्न का सफर खाली रोज़ी ही का मसला नहीं था बल्कि मेरी एक रोमानी गुत्थी भी ऐसी थी जो हैदराबाद जाए बग़ैर खुल ही नहीं सकती थी।

हैदराबाद जाने की बात मेरे दिल में ठन चुकी थी मगर सोचता था कि वहां मुझे पूछेगा कौन? न एम० ए० हूं न सनदल फाज़िल। ले-देकर मेरी सिर्फ एक किताब रूहे-अदब छपकर लोकप्रिय हो चुकी थी। मगर एक टुटपुंजू किताब से होता क्या है? व्यक्तित्व तो बनता है एक जुग बीत जाने और सालहा-साल खूने जिगर थूकने के बाद।

खैर उस्मानिया यूनिवर्सिटी के प्रोफेसर वहीदुद्दीन साहब सलीम से पत्र-व्यवहार करके और महाराजा किशनप्रसाद के नाम हज़रत इक़बाल, मौलाना अब्दुल माजिद दरियाबादी, हज़रत अकबर इलाहाबादी और मौलाना सुलैमान नदवी से सिफारिशी खत हासिल करके मैं १९२४ के शुरू में हैदराबाद पहुंच गया।

वहां मैं सबसे पहले महाराजा किशनप्रसाद से मिला। मुझे देखते ही उन्होंने कहा, जोश साहब, आपका मजमूए-कलाम 'रूहे-अदब' देखकर मैंने तमन्ना की थी कि अल्लाह इस दरवेश सिफत रईसज़ादे से मिलाए। सो मेरी यह तमन्ना आज पूरी हो गई। मैंने वे सिफारिशी खत पेश किए। उन्हें पढ़कर वह कुछ सोचने लगे और मुझे अलग ले जाकर कहा, 'जोश साहब यह बात अपने तक रखिएगा कि सरकार आजकल मुझसे नाराज़ हैं। अगर आप मेरे ज़माने में तशरीफ लाते तो मैं उसी दिन आपका इंतज़ाम कर देता। बहरहाल मैं फायनांस मिनिस्टर अकबर हैदरी के नाम अभी खत लिख देता हूं। वह मुझे बहुत मानते हैं। मुझे उम्मीद है कि वह आपकी खिदमत में कोताही नहीं करेंगे। यह कहकर ही कोई तीन सफे का लम्बा चौड़ा खत लिखकर मेरे हवाले कर दिया और उसी वक्त फोन करके उन्होंने हैदरी से मेरी ज़बरदस्त सिफारिश भी की। साथ ही सर रास मसऊद को भी फोन पर हिदायत कर दी कि

यह मुझे अपने साथ डाक्टर हैन्री से मिला दें। राय मसऊद मुझे हैन्री के पास ले गए और वहां कि हमारा कौम में यह एक उभरता हुआ शायर है। हमारा फर्ज है कि हम इसकी होसला अफ़ज़ाई करें। आनरेबल सर हमदर्द नवाब ने भी इसकी जबरदस्त सिफारिश की है और महाराजा ने भी यह ख़त आपको भेजा है। हैन्री साहब ने ख़त पढ़कर कहा दाबे मुलाहिज़ा महाराजा मुझे पहले भी कर चुके हैं। फिर मेरी तरफ मुंह करके हैन्री साहब ने कहा "आप आइन्दा जुमेरात के दिन सुबह दस बजे मेरे पास आ जाइएगा मैं आपको सरकार से मिला दूंगा।"[1]

अभी जुमेरात में दो दिन बाकी थे कि हैन्री साहब ने मुझे बुला भेजा। राय मसऊद भी वहां मौजूद थे। निहायत तपाक से हाथ मिलाए और इधर-उधर की बातें करके उन्होंने मुझे उस इम्तहान का बदल दिया जो शायरों ने उनके खिताब तक की मुबारकबाद के तौर पर बहैसियत उनकी खिदमत में पेश किए थे। मैं यह इम्तहान पढ़ चुका तो हैन्री ने कहा, "आज साहब आप भी एक कृता कह दें।"

एक तरफ तो फ़ज़्ल 'बना' की कृता सुनकर मैं भन्ना गया और दूसरी तरफ चूंकि मैं किसी हुकूमत से बेज़ार था मेरे चेहरे का रंग बदल गया।

हैन्री साहब ने मुझसे पूछा कि आप अचानक इस कदर सीरियस क्यों हो गए। मैंने कहा आप बुरा न मानें तो यह कि फिरंगी जिस शख्स को खिताब देता है उस पर मां की गाली पड़ जाती है। यह सुनकर राय मसऊद और हैन्री चिराग़-पा होकर खड़े हो गए मुझे तनहा छोड़कर दूसरे कमरे में चले गए और मैं अपने ठिकाने पर लौट आया।

जब यह बात सुनी तो नवाब मेहदीयारजंग मेरे पास आए और कहा कि मैं आपको अपने वालिद अमादुल मुल्क के पास ले जाना चाहता हूं। मेरे वालिद सिफारिश के मामले में इस कदर सख्त है कि जब मैं कम्ब्रिज से इम्तहान पास करके आया था तो उन्होंने मेरी सिफारिश तक करने से इनकार कर दिया था। बहरहाल मैं आपको उनके पास लिए चलता हूं हरचंद मुश्किल से दो फीसदी उम्मीद है। लेकिन अगर उन्होंने सिफारिश कर दी तो हैदरी साहब की लाख सिफारिशों पर भारी होगी।

उनके साथ वहां पहुंचा तो देखा कि एक अस्सी पचासी बरस के बुजुर्ग बरामदे की बड़ी सी आराम कुर्सी पर दराज़ है और उनके चेहरे पर विद्वत्ता और दृढ़ चरित्र की आभा बरस रही है। मेहदी साहब ने परिचय दिया। दिल चस्पी की एक धारा भी उनके चेहरे पर नहां दौड़ी। मेरे दिल पर जबरदस्त

१ हैन्री साहब के वादे से मुझे बड़ा खुशी हुई थी। मगर वह जो कहावत है कि बकरी ने दूध दिया सो वह भी मींगनी भरा। मुझे उनके लहजे से बड़ी तकलीफ हुई थी। वह बकरिया की तरह मैं मैं कर रहे थे और मैं दिल ही दिल में कह रहा था कि अल्लाह ने रोज़गार की सूरत निकाली मगर एक बकरी की मारफ़त।

चाट लगी। लेकिन पी गया। मेरी अहमियत जाहिर करने के लिए मेहदी साहब न कहा, "अच्छा, यह जोश साहब हुसामुल्दौला तहव्वरजंग नवाब फकीर मुहम्मद खा 'गवय्या' के पोते है।' यह सुनकर वह चौंक पड़े और कहने लगे 'मुमाली हिन्दुस्तान का ऐसा कौन सा वाशिंदा है जो इनके दादा के नाम स वाकिफ न हो। लेकिन इनकी जात म भी कोई जौहर है ?" मेहदी साहब ने कहा 'यह बहुत अच्छे शायर हैं। आप इजाजत दें तो जोश साहब कुछ सुनाए।"

उन्होंने कहा 'अच्छा।" मेहदी साहब ने मुझस कहा, जोश साहब, इरशाद। और जब मैंने मुसद्दस के तीन चार बन्द सुनाए तो वह उठकर बैठ गए और कहने लगे, 'इस नौजवान म तो अनीस की रूह बोल रही है—यह उम्र और इस कदर पुख्तगी! मैं तो समझता था कि आजकल के नौजवानो की तरह यह भी आय-बाय शाय कहते होंगे। मगर इनके कलाम म रवानी भी है और मानी भी। मेहदी, खत लिखने का कागज लाओ।" मेहदी की बाछें खिल गईं। जल्दी से अन्दर जाकर कागज और कलम ले आए। आराम कुर्सी के दोनो हत्था पर एक तख्ता रख लिया। नवाब अमादुल मुल्क ने पूरे एक सफे का सिफारिशी खत लिखा और कहा कि मेहदी, तुम यह खत सर अमीनजग के हवाले करके मेरी तरफ स यह कहना कि सरकार के हुजूर पेश कर दें।

नवाब अमादुल मुल्क के मकान से गेस्ट-हाउस आया। छोटे दादा ने तार दिया। तार खोलकर पढा तो मालूम हुआ कि मेरी बीवी परसो शाम की गाडी स हैदराबाद आ रही हैं। मैं हैरान हो गया कि आखिर यह माजरा क्या है। मुलाजमत तो दरकनार, मैंने तो अभी तक निजाम को देखा भी नही और बीवी हैं कि चली आ रही हैं।

तीसरे दिन मेरी बीवी दोनो बच्चो और अपने मामू को साथ लिए हैदराबाद आ गई और गेस्ट-हाउस पहुचते ही बिगडकर बोली, 'मैं यहा इसलिए आई हू कि तुम्हारे दोनो बच्चे तुम्हारे हवाले कर दू और खुद अपनी हीरे की अगूठी चूसकर खा लू और इस दुनिया स सिधार जाऊ।' यह सुनते ही मेरे होश उड गए और घबराकर पूछा 'अशरफजहा, खुदा के वास्ते जल्दी बताओ कि आखिर बात क्या है।' उन्होंने रोते हुए कहा, 'मामू को बुलाकर पूछ लो।"

मामू न जेब स एक तार निकाला। मैंने तार पढा तो मालूम हुआ कि किसी अल्लाह के बन्दे न उनके पास यह तार भेजा है कि तुम्हारे शौहर दूसरी शादी कर रहे हैं। तुरन्त हैदराबाद पहुच जाइए। मैंने कहा "अशरफजहा, यह तार बिलकुल झूठा है। बीवी न कहा कि अगर यह तार झूठा और तुम सच्चे हो तो अपने बच्चो के बाजू पकडकर कसम खा लो कि तुम दूसरा निकाह नही कर रहे हो। जब मैंने बडे लडके के माथे कसम खा ली तो उनका चेहरा बहाल हुआ।

इतने म छोटे दादा हसते हुए आए और मेरी बीवी के दिल पर अपनी

घरवाली का मिजाज ठिकाने की खातिर कहा 'भाई ज़मीर हसन यह तो बीवी, यह तार मैंने दिया था।' मैंने बुरा मानकर कहा, 'छोटे दादा, आपको हरगिज ऐसा नहीं करना चाहिए था।' उन्होंने कहा 'मेरे भाई बुरा न मानो। मुझसे यह कब हो सकता था कि तुम्हारा घर बिगड़े और मैं बैठा तमाशा देखता रहूँ।' मैंने कहा 'आप कैसी बातें कर रहे हैं मेरा घर बिगड़ कब रहा था?' उन्होंने कहा 'वह शौक वाली बात याद करो जो एक लड़की का पयाम लेकर तुम्हारे पास आए थे।' बीवी ने बिगड़कर मुझे देखा और कहा 'लो अब तो बात खुल गई। हाय तुम कैसे बाप हो कि तुमने अपने दोनों बच्चों की बाहें पकड़कर झूठी कसम खा ली।'

मैंने झल्लाकर कहा, 'अपने बच्चों की झूठी कसम खानेवाले कमाई पर मैं हज़ार लानत भेजता हूँ। अब पूरी बात मुझसे सुन लो। यहाँ एक बहुत बड़े जागीरदार हैं। उनकी साहबज़ादी ने कहीं जाते मुझे कहीं देख लिया और वह मुझपर आशिक हो गई। अपनी खादिमा के हाथ खत भेजा कि मेरी माँ ने मेरे बाप को इस बात पर राज़ी कर लिया है कि वह आपसे मेरी शादी कर दें। कल अब्बा के मुसाहिब शौक साहब आएँगे आपके पास। चुनांचे दूसरे रोज ही शौक साहब ने आकर मुझसे यह कहा कि अगर आप साहबज़ादी से निकाह करने पर आमादा हों तो आपके रहने के लिए एक कोठी और एक कार का इन्तज़ाम कर दिया जाएगा। आपके घर का तमाम खर्च जागीर से अलग होगा और पन्द्रह सौ रुपये महीना जेब खर्च भी आपको दिया जाएगा।' बीवी ने बड़ी घबराहट के साथ बात काटकर पूछा 'और फिर तुमने क्या जवाब दिया?' मैंने कहा कि मैंने यह जवाब दिया कि शौक साहब मेरी शादी हो चुकी है। मैं दो बच्चों का बाप हूँ। हम मियाँ-बीवी को एक दूसरे से बेहद मुहब्बत है और मैं गवारा नहीं कर सकता कि उनपर सौत लाऊँ। इसके बाद छोटे दादा से कहा 'क्या साहब, मैंने आपसे यही बात कही थी या कुछ और?' छोटे दादा ने कहा 'नहीं यही बात कही थी।' मैंने कहा 'जब आपको यह मालूम हो चुका था तो आपने मेरी बीवी को तार क्या दे दिया?' छोटे दादा ने कहा 'मेरे भाई आदमी को बदलते देर नहीं लगती। मैंने सोचा कि तुम्हारी बीवी को बुलाकर तुम पर मुसल्लत कर दूँ।'

यह बात सुनकर मेरी बीवी के दिल का काँटा निकल गया। कहने लगी कि उस भड़ुवे शौक को अब कभी अपने घर में न आने देना। अल्ला की गाज टूटे उस निगोड़े पर। मेरा लाख का घर खाक करने आया था मुआ।

एक रोज मैं इस बात पर गौर कर रहा था कि नवाब असादुल मलिक के खत को भी लगभग एक महीना गुजर चुका है। लेकिन निज़ाम ने अब तक मुझे तलब नहीं किया है। शायद वह तीर भी खता कर गया कि उसी आन दरवाज़े पर मोटर आ गई झन झन करती, और बरामदे में तालियाँ बजने लगीं ठन ठन।

बाहर आया तो देखा कादिर नवाज़जंग खड़े हैं। मुझे देखते ही उन्होंने कहा 'मुबारक हो जोश साहब, सरकार ने आपको याद फरमाया है। अभी तैयार हो जाइए।'

किंग कोठी की काई लगी काली-काली दीवारों और उसके शाहाना फाटक के बोसीदा पर्तों पर इबरत से निगाह डालता हुआ जब महल-सरा के अंदर पहुँचा तो यह हसरतनाक तमाशा देखा कि वहाँ सब्ज़े का फर्श है न क्यारियाँ फूलों के पौधे हैं न सरू व चिनार—सूखा रूखा सेहन है और उस बुझे-बुझे सेहन में हज़ारों चीज़ें निहायत बेतरतीबी के साथ इधर उधर बिखरी पड़ी हैं। सामने एक निहायत छोटा-सा तीन सीढ़ियों का बरामदा है। बरामदे में एक बे पालिश छोटी सी कुर्सी पर एक अधेड़ और खुश्क चेहरे का दुबला पतला आदमी मैले और पैवंद लगे कपड़े पहने अकड़ा हुआ बैठा है और उसकी कपड़े की बोसीदा तुर्की टोपी के किनारों पर मैल की एक चौड़ी तह जमी हुई है। उसके सामने तीस चालीस रईस और अहलकार दस्तारों बक्लास लगाए ऊँधी मुर्गाबियों की मानिंद हाथ जोड़े सर झुकाए खड़े हुए हैं और उनके पीछे बहुत से चीड़ के नाकारा बक्स पड़े हुए हैं।

मेरी नज़र कबूल करके उन्होंने अपने दस्त-बस्ता हाज़िरीन से कहा— इन्हें पहचानते (पहचानते) हो? अमादुलमुल्क ने लिखा है कि यह फकीर मुहम्मद खाँ गोया के पोते हैं। अगर अवध की सल्तनत बरबाद न हो जाती तो यह दकन क्या आते? आधे मुसलमानों को अवध संभाल लेता, आधे मुसलमानों को दकन।'

इसके बाद निज़ाम ने अपने उस्ताद हज़रत जलील मानिकपुरी को मुखातिब करके कहा 'उस्ताद इनके खानदान से तुम तो खूब वाकिफ होगे।' उस्ताद ने हाथ जोड़कर कहा 'खुदावंद इनके वालिद नवाब बशीर अहमद खाँ ने उस वक्त मेरी इमदाद की थी जबकि मेरे उस्ताद अमीर मीनाई के इन्तकाल के बाद कोई मेरा सरपरस्त बाकी नहीं रहा था।' जलील साहब की इस शराफत पर मेरी आँखें डबडबा गईं। निज़ाम ने कहा 'उस्ताद तुम और जोश दोनों बड़े शरीफ आदमी हो। तुमने सबके सामने यह बात बखुशी कह दी कि उनके वालिद ने तुम्हारी मदद की थी। और तुम्हारा यह एतराफ सुनकर जोश साहब की आँखों में आँसू आ गए। मुझे तुम दोनों की यह बात बहुत पसंद आई।' फिर मुझसे मुखातिब होकर निज़ाम ने कहा 'अमादुल मुल्क ने यह भी लिखा है कि नौजवान होने के बावजूद तुम्हारी शायरी में उस्तादों की-सी पुख्तगी पाई जाती है। अपनी कोई चीज़ सुनाओ।'

मैंने मतला सुनाया—

मिला जो मौका तो रोक दूँगा जलाल रोज़े हिसाब तेरा
पढ़ूँगा रहमत का वह कसीदा कि हँस पड़ेगा अताब तेरा।

निज़ाम के चेहरे पर पसंदीदगी का रंग दौड़ गया।

कहा और जब मैंने यह शेर पढ़ा—

> जड़ पहाड़ों की टूट जाती, फ़क़्त तो क्या अगर शोर उठता
> अगर मैं गिरा पर न शोर उठता तमाम जहाँ गमज़ार तेरा।

तो निज़ाम ने झूमकर कहा, "बहुत अच्छा! बहुत अच्छा! बहुत अच्छा!" और तमाम हाज़िरीन ज़ोर-ज़ोर से दाद देने लगे। मेरा मक़ता के इख़्तिताम (अंत) पर निज़ाम ने कहा, "उस्ताद जलील इतने तेवर बना रहे हैं कि बूढ़े होकर यह तुम्हारे दर्जे में हो जाएँगे।"

इसके बाद उन्होंने पूछा, "जोश, तुम्हारी शादी हो चुकी है?" मैंने कहा, "मेरी शादी हो चुकी है और मेरी बीवी यहाँ आ भी चुकी है।" "यहाँ आ चुकी है?" उन्होंने हैरत से कहा और फ़रमाया, "तुम्हारी मुलाज़िमत से पहले वह यहाँ क्या चली आई? अगर तुमको मुलाज़िमत न मिल सकी तो उनका यहाँ आना बेकार हो जाएगा।"

मैंने कहा, "सरकार, मेरी बीवी को इस बात का यक़ीन है कि ऐसा हो ही नहीं सकता कि मुझे यहाँ मुलाज़िमत न मिले।"

निज़ाम ने पूछा, "तुम्हारी बीवी को इस बात का यक़ीन क्यों था?" मैं चुप हो गया। सोचने लगा कि उस ख़्वाब का माजरा कहूँ या न कहूँ।

मेरे इस असमंजस को देखकर निज़ाम ने कहा, "बोलो जी, बोलते क्यों नहीं?"

इस मौक़े पर नवाब मेहदीयार जंग हाथ जोड़कर खड़े हो गए और चूँकि मैं उनसे अपना ख़्वाब बयान कर चुका था, उन्होंने कहा, "ख़ुदावंद की इजाज़त हो तो फ़िदवी इसका सबब बयान कर दे।" और जब मेहदी साहब ने मेरा तमाम ख़्वाब बयान कर दिया तो निज़ाम की आँखों में आँसू भर आए और कहा, "तो यह बोला कि सरकार दोआलम ने जोश को मेरे सुपुर्द फ़रमाया है।" वह अपने दोनों हाथ अपने सीने पर रखकर झुक गए और तमाम दरबार पर गहरी ख़ामोशी छा गई।

एक हफ़्ते के बाद उस्मानिया यूनिवर्सिटी के शोबाए दारुल तरजुमा के नाज़िम (अनुवाद विभाग के निदेशक) इनायतुल्ला साहब ने, जो मौलवी ज़का उल्लाह साहब के फ़रज़ंद और अकबर हैदरी व राय मसऊद के परस्तार होने के कारण मेरे बदख़्वाह बन चुके थे, मुझे बुलाकर कहा, "जोश साहब, मुबारक हो! यह लीजिए शाही फ़रमान। सरकार ने पालिटिकल इकानामी के अनुवादक की हैसियत से आपका तक़र्रुर (नियुक्ति) फ़रमाया है।"

मैंने कहा कि पालिटिकल इकानामी से मेरा कोई ताल्लुक़ नहीं। उन्होंने ख़ुश होकर कहा, "तो फिर आप इनकार लिख दें।" मैंने फ़रमान के हाशिया पर यह लिख दिया कि सरकारे वाला-तबार का बेहद शुक्रिया। लेकिन चूँकि पालिटिकल इकानामी मेरा सब्जेक्ट नहीं रही है, इसलिए मुझे अफ़सोस है कि मैं इस काम को अच्छी तरह नहीं कर सकूँगा। अलबत्ता अगर अंग्रेज़ी

अरब के तरजुमे का काम मेरे सुपुर्द किया जाए तो उसे बड़ी खूबी के साथ अंजाम दे सकूंगा।

इनायतुल्ला ने कहा कि अंग्रेजी अदब तो अंग्रेजी ही में पढ़ाया जाता है, इसलिए उसके तरजुमे की जरूरत ही नहीं है। आप यह इबारत काट दें। मैंने कहा, क्या मजायका है, रहने दीजिए। काटूंगा तो बदनुमाई पैदा होगी।

इनायतुल्ला ने कहा 'नाजिमे शोबा की हैसियत से मेरा यह फर्ज है कि मैं आपकी इबारत के नीचे यह नोट लिख दूं कि अंग्रेजी अदब सीधा अंग्रेज़ी ही में पढ़ाया जाता है, उसका तरजुमा बेकार होगा, आपको कोई एतराज तो नहीं होगा?' मैंने कहा—'बड़े शौक से लिख दें, आप।

उसके चौथे पांचवें दिन इनायतुल्ला खुद मेरे पास आए और कहने लगे, 'जोश साहब, मुबारक हो। सरकार ने अंग्रेजी अदब के मुतरज्जम की हैसियत से आपका तकर्रुर फरमा दिया है। यह लीजिए फरमान और लिख दीजिए इसपर अपनी मंजूरी।

फरमान में लिखा हुआ था कि हरचंद इस नये ओहदे की जरूरत नहीं है लेकिन अभी जोश मलीहाबादी का मुतरज्जम अंग्रेजी अदब के ओहदे पर फौरन तकर्रुर किया जाए और जब उन्हें तरक्की मिल जाए तो इस ओहदे को तोड़ दिया जाए। मैंने शुक्रिये के साथ इस फरमान पर दस्तखत कर दिए।

शुक्रिये की नजर लेकर पहुंचा। एक नजर अपनी तरफ से और दो बीवी-बच्चों की तरफ से पेश की। निज़ाम ने कहा 'अभी क्या है मैं तुम्हें इतना दूंगा कि घर में रखने की जगह बाकी नहीं रहेगी। कै बीवियां हैं तुम्हारी?" मैंने कहा 'मेरी तो सिर्फ एक ही बीवी है।' उन्होंने कहा, 'मैंने तो सुना है कि अवध के ताल्लुकेदारान के बहुत-सी बीवियां होती हैं।' मैंने कहा सरकारे वाला, पहली बात तो यह है कि हम मियां-बीवी एक दूसरे से बेहद मुहब्बत करते हैं और दूसरी बात यह है कि मेरी बीवी भी मेरी ही तरह पठान नस्ल की हैं और फिर वह बेचारी कई बरस से दिल के दौरे के रोग से मुब्तला हैं। अगर मैं दूसरी शादी कर लूंगा तो उनकी पठनौली और उनका रोग दोनों मिलकर उन्हें हलाक कर डालेंगे।

निज़ाम ने रोग का हाल सुना तो पूछा, कब से है?" मैंने कहा 'चार पांच बरस से है। पूछा 'किन किनका इलाज करा चुके हो? मैंने उन डाक्टरों के नाम बता दिए। फिर सवाल किया, अब तक इलाज पर किस कदर रुपया बरबाद कर चुके हो? मैंने कहा कम से कम पंद्रह-बीस हज़ार तो उजाड़ चुका हूं लेकिन मर्ज है कि जाने का नाम ही नहीं लेता।' निज़ाम ने सीधे होकर बड़े गर्व के साथ कहा कि मैं डाक्टरी और तिब्ब में इस कदर दस्तगाह (दक्षता) रखता हूं कि हरचंद मैं बाकायदा मतब नहीं करता, लेकिन

बड़े डाक्टरों और तबीबों के ल्बा नही खुलते हैं मेरे सामने।' यह कहकर वह अन्दर गए और दो चार मिनट के बाद आकर चोबदार को आवाज दी कि ले ये पाँच रुपये ईसा मियाँ के बाजार के दवाखाने से गावजबां और खमीरा मरवरीद ले आ। जब दोनों दवाएँ आ गई तो उन्होंने मेरे हवाले करते हुए इरशाद फरमाया कि ये दवाएँ सुबह और शाम अपनी बीबी को खिलाऊँ-पिलाऊँ। किसी दिन नागा न होने दूँ। और ऐन मर्ग[1] के दिन आकर बताऊँ कि मेरी बीबी कैसी है।

पन्द्रह-बीस रोज के बाद ऐन मर्ग के दिन किंग कोठी गया। दो नज़रें पेश कीं। अशरफियों को देखकर उनके चेहरे पर सुर्खी दौड़ गई। पूछा यह दूसरी नज़र किसकी तरफ से है? मैंने कहा कि मेरी बीबी की तरफ से। उन्होंने कहा बताओ मेरी दवाओं का असर?" मैंने सफेद झूठ से काम लेकर कहा, सरकार दवाओं ने तो जादू का असर किया। ऐसा मालूम होता है कि उन्हें कभी रोग था ही नहीं। यह सुनते ही उनके चेहरे और उनके तमाम बदन में खुशी की लहर दौड़ गई और चोबदार को हुक्म दिया कि फलां-फलां डाक्टरों और तबीबों को फौरन हाज़िर कर दो।

जब तमाम नामी तबीब और डाक्टर हाज़िर होकर नज़रें पेश कर चुके तो उन्होंने हुक्म दिया कि तमाम तबीब मेरे दाहिने तरफ और तमाम डाक्टर मेरे बाईं तरफ सफें बाँधकर खड़े हो जाएँ। जब हुक्म की तामील हो गई तो कोतवाल शहर वेंकटराम रेड्डी को उन सफों के दरम्यान खड़ा कर लिया गया।

ऐन उस वक्त जबकि हकीम और डाक्टर उनकी तरफ इस उम्मीद के साथ देख रहे थे कि आज हम सब पर कोई न कोई नवाज़िश जरूर की जाएगी निज़ाम ने कड़ककर उनसे कहा देखो यह जोश मलीहाबादी तुम्हारे सामने खड़े हुए हैं। यह बेचारे अपनी बीबी के इलाज में पन्द्रह-बीस हज़ार रुपये तुम बदमाश मसखरों पर चढ़ा चुके हैं। लेकिन तुम इन्हें तन्दुरुस्त नहीं कर सके। मैंने दो दवाएँ दीं और बीस दिन के अन्दर उनकी बीबी का मर्ज़ गायब हो गया। अब ऐ सालो अगर तुम मेरे सामने हज़ारत का दावा करोगे तो मैं तुम्हारी और फकत यही नहीं मैं तुम सबकी मर्द चला दूँगा और उस रेल में बैठकर धड़ाधड़ करता मनमाड तक चला आऊँगा।

निज़ाम की ज़बान से ये अश्लील गालियाँ सुनकर उन सबके रोंगटे खड़े हो गए। उनके गलमुच्छे और लम्बी-लम्बी दाढ़ियाँ हवा में फुरफुराने लगीं। डाक्टरों की घनी मूछों की घड़ी चोंचों पर भरा नाचने लगा जिन्न के धीरे उनके सरों पर कावा-काव करने लगे और उनकी सूखी पसलियों में नीले लाल-लाल मुँह के बन्दर छलाँगें लगाते नज़र आने लगे।

उनका यह हाल देखकर ऐसा मालूम हुआ कि जैसे बाद बहुत भारी पत्थर किसी पहाड़ से टूटकर नदिया में आ गिरा हो और स्थिर पानी में

१ दकन में अरबी महीने बरजमान का पन्ना तारीख का नाम पन्न है।

यकायक भूचाल आ गया हो।

दारुल तरजुमा—यह मुकाम दफ्तर कम और नामल तफरीह ज्यादा था। हम तमाम लोग (सयद अब्दुल मादूदी के अलावा) रोज़ हाशिमी साहब फरीदाबादी के कमरे में जमा होकर गप्पें उड़ाते और शायरी किया करते थे। मैंने वहाँ तकरीबन डेढ़ बरस काम किया और जब अल्लामा अब्दुल्ला साहब तबातबाई को पेंशन मिल गई तो नवाब अकबरयार जंग की कोशिश से मुझे तरक्की मिल गई। मेरा ओहदा तोड़ लिया गया और मैं अल्लामा तबातबाई की जगह मशीर-अदब के ओहदे पर काम करने लगा। मेरी यह बड़ी लम्बी नमकहरामी होगी अगर मैं यह स्वीकार न करूँ कि अनुवाद विभाग में रहने से मुझे बेहद इल्मी फायदा हुआ। खासतौर पर अल्लामा अमादी अल्लामा तबातबाई और मिर्ज़ा मुहम्मद हादी रुसवा की संगत में मैंने बहुत कुछ सीखा और मुझमें अध्ययन की सही लगन पैदा हुई। शब्दों के सही उच्चारण और उपयुक्त प्रयोग का जो पौधा मेरे बाप और मेरी दादी ने मेरे वजूद की सरज़मीं पर लगाया था अगर तबातबाई मिर्ज़ा मुहम्मद हादी और अमादी की दस बरस की सोहबत का मौका मुझे न मिलता, वह कभी न फूलता फलता।

मिर्ज़ा मुहम्मद हादी साहब मेरे पड़ोसी थे। मैं दकन आकर फिर उनसे पढ़ने लगा और इस बार फारसी के साथ उनसे अंग्रेज़ी अदब और फिलसफे (दर्शन) का भी बाक़ायदा सबक़ लेना शुरू कर दिया। हरचंद १९१८ से मैं शराब के लुत्फ से आगाह हो चुका था इसलिए कभी-कभी किसी दावत में तो पी लेता था लेकिन तनख्वाह से खरीदकर कभी नहीं पीता था। इसलिए मुझे यह फुरसत थी कि रोज़ रात को ग्यारह-बारह बजे तक पढ़ा करता था।

हैदराबाद से निकाले जाना

हैदराबाद के सर पर जागीरदारी और महन्ताई का गिद्ध टूग मार रहा था। हर तरफ दरबारी साज़िशों के जाल बिछे हुए थे। निज़ाम के मुसाहिब हरचंद लिखे पढ़े नहीं थे लेकिन इस कदर बड़े जग-ज्वारी मक्कार मौरूसी मिरासी खानदानी खुशामदखोर मक्कार भानामार और ताहमकार, बातों बातों में इस कदर ताबे मसरात और नखरे के इस दर्जा मिज़ाज-शनास थे कि उन्हें अंगुलियों पर नचाते चापलूसी के तवा पर रोटियाँ पकाते अपने को उभारते हरीफों को गिराते और मातहतों की गालियाँ खाते और शरबत की तरह पी जाते बातों के तीर उड़ाते और उन तीरों को अपने आक़ा की भवों पर निठाते और उनसे अनोखी मचा के नारे लगवाते थे।

जिस तरह सांपवाले बांसुरियों पर नाग को नचाते हैं, इस तरह यह मसखरे भी अपने नर्म लहजे की गाड़ियों में अपनी आवाज़ के घूमते हुए मसखरे ढंग के पहिए लगाते और अपनी गलत बात को सच कर देने की खातिर अपने सधे हुए चेहरों के मुँह में लगाम लगाकर अपनी मंज़िले मकसूद की जानिब दौड़ाते और निज़ाम को अपने रास्ते पर चलाते थे। बड़े हाकिमों और जागीरदारों से अगर बिगड़ जाते तो सरकार उन्हें पिटवाकर निकलवा देते और उनके घरों में झाड़ू फिरवा दिया करते थे।

उनकी ज़बानें ऐसी रेंगती हुई नागिन थीं जिनसे और तो और शाहज़ादे तक महफूज़ नहीं थे।

मैंने 'गल्त-बख्शी' के नाम से निज़ाम के खिलाफ एक नज़्म कही थी जिसका ज़िक्र आगे आएगा। दरअसल वही नज़्म मेरे वहाँ से निकाले जाने का सबब बन गई। लेकिन इस नज़्म की पुश्त पर जो और असबाब भी काम कर रहे थे उनका किसी को इल्म नहीं है। इसलिए मुनासिब मालूम होता है कि उन असबाब को भी बयान कर दूँ।

मुझ कमबख्त घर फूँक तमाशा देखनेवाले की यह आदत है चाहे उसे हुनर समझा जाए या ऐब, कि मैं अवाम के कदमों पर सर झुका देने को इंतहाई शराफत और सत्ताधारियों के तख्त के रूबरू गर्दन ज़रा भी नीची करने को कमीनगी समझता हूँ और मीर तकी मीर की मानिंद—

सर कसू से फ़िद नहीं आता
हैफ बंदे हुए खुदा न हुए

का नारा लगाता रहता हूँ।

अपनी इस आदत के साथ जब मैं निज़ाम के रूबरू सरापा इंकसार (संदेह विनम्रता) बनकर जाता, उन्हें सरकार कहता और उनकी ज़बान से अपने

मुखातिब 'तुम सुनता था तो मेरे दिल पर ऐसी चोट लगती थी कि तिलमिला उठता था। जबान से तो कुछ नहीं कहता था लेकिन मेरे चेहरे का बदला हुआ रंग और मेरे चोट खाए दिमाग की बरकी लहरें निजाम के दिल पर इस तरह असर किया करती थीं जिस तरह मदान में सोनेवाले पर शबनम गिरती है और उसे कुछ भी खबर नहीं होती कि मेरे सर में यह धमक क्या हो रही है ?

अपने पाश-पाश गरूर के साथ जब घर आता था तो बीवी के सामने अपनी इस बदइज्जती का रोना रोया करता था और वह भी इस असावधानी के साथ कि नौकर चाकर सब सुन लिया करते थे।

मुझे मुतलिक यह मालूम नहीं था कि निजाम की खुफिया पुलिस का घर-घर में इस तरह जाल फैला हुआ है कि कोई उसकी जद से बचकर निकल ही नहीं सकता। सिर्फ घर के नौकर चाकर या मामायें ही नहीं सौदा बेचने-वालियां तक खुफिया पुलिस में भर्ती थीं।

मुझे इस बात का पता क्योंकर चला, वह भी सुन लीजिए। एक रोज नवाब कादिरयार जंग बड़ा खौफनाक चेहरा बनाए मेरे पास आए और कहा जोश साहब आप अपने महल में जिस बात का रोना रोया करते हैं सरकार-वाला तक वह बात पहुंच गई है और मुझे इस बात की बड़ी खुशी और इन्तहाई हैरत है कि यह बात सुनकर सरकार ने मुसकराकर इरशाद फरमाया कि जोश बड़ा मगरूर आदमी है। मुलाजमत कर रहा है मगर उसके दिमाग से बूए-अमारत अभी तक नहीं निकली। सुनता हूं वह गुस्से से भी गुस्ताखियां किया करता है। लेकिन क्या करूं सरवरे-कायनात (हजरत मुहम्मद) ने इस शख्स को मेरे सुपुर्द फरमाया है।

निजाम की सालगिरह वगैरह पर तमाम शायर कसीदे पेश किया करते थे, लेकिन मैंने कभी कसीदा नहीं कहा। एक सालगिरह के मौके पर एक रिसाले के सम्पादक ने मेरी एक बहारिया नज्म कसीदा बनाकर छाप दी जिसका यह मतला था—

उठी वह घटा रंग सामानिया कर[1]
गोहरबारिया कर गुलअफशानिया कर।

इस नज्म में सालगिरह की जानिब कोई जरा सा भी इशारा या निजाम की तारीफ़ में कोई एक शेर भी नहीं था। लेकिन मेरे इस मक्ता पर शाही अताब नाजल हो गया—

कभी 'जोश' के जोश की मदह[2] फरमा
कभी गुलरुखां की सनाख्वानिया कर।[3]

निजाम इस धोखे में पड गए कि इस वक्त का रुख उनकी तरफ है और दूसरे ही दिन फरमान निकाला गया कि मालूम होता है यह कसीदा जोश ने

१ फूल बरसा २ तारीफ प्रशंसा ३ कभी सुन्दर चेहरेवाला का प्रशस्तिगान कर।

किसी खास वक्त (शराब के नशे में) कहा है। उन्हें चाहिए कि वह ऐसे अवसरों पर सरकार की याद न किया करें। अगर वह आइन्दा ऐसा करेंगे तो अच्छा नहीं होगा।

इस घटना के थोड़े ही दिनों बाद एक रोज नवाब महदीयारजंग बहादुर घबराए हुए मेरे पास आए और कहा "बड़ा गजब हो गया। शेख लियाकत ने सरकार-आली तक यह खबर पहुंचा दी है कि आपको शाहजादी से गहरा ताल्लुक है और उन्होंने यह भी कहा है कि महल में जिस वक्त शाहजादी जाग रही थी और जोश उनके पास थे, उस कमरे के पास में मैंने खुद सुना था कि शाहजादी ने बड़े प्यार के लहजे में उनसे फरमाया था कि अगर तुम इस वक्त नशे में हो तो मैं तुम्हें मार डालूंगी।

निजाम के दिल में ये सब बातें मालूम और ना मालूम तरीके से अभी उठ ही रही थीं कि मैंने वह नज्म, जिसका जिक्र कर चुका हूं, जागीरदारों और वजीरों की भरी महफिल में सुना दी और तमाम महफिल पर एक दहशतनाक सन्नाटा छा गया। नवाब निजामतजंग वजीरे सियासत ने मेरे कान में कहा—कुल्हाड़ी मार ली आपने अपने पांव पर? एक मुलाजिम सरकारे-आली की हैसियत से ऐसी नज्म आपको कहना ही नहीं चाहिए थी और कह भी दी थी तो फिर यह चाहिए था कि इसे सात पर्दों में छिपाकर रखते। हद कर दी आपने नाआकबत अंदेशी की। खैर मैं तो इसपर कोई कार्रवाई नहीं करूंगा। खुफिया पुलिसवाले ने यह नज्म लिख ली है। यकीन रखिए कल तक यह किंग कोठी पहुंच जाएगी। उस नज्म के चन्द शेर सुन लीजिए। (यह नज्म मेरे किसी संकलन में छप चुकी है।)

इलाही अगर है यही रोजगार
कि सीने रहें अहले दिल के फिगार[1]
रजालत[2] को हासिल हो सरदारियां
शराफत करे कफश बरदारियां[3]
सरे-बज्म जुहल[4] आए अहले-नजर
बशक्ल गुलामान जरीं कमर[5]
हुनर हो और इस दर्जा बेआबरू
तुफू बर तू ए चर्खे-गरदां तुफू[6]

दूसरे ही दिन वह नज्म निजाम तक पहुंच गई। कोई दूसरा ऐसी जबरदस्त गुस्ताखाना नज्म लिखता तो बीवी बच्चों समेत कोल्हू में पेर दिया जाता। लेकिन उनकी शराफत देखिए कि उन्होंने बड़े खुफियातौर पर मेरे हमनिवाला और हमप्याला दोस्त आगाजानी नायब कोतवाल को मेरे पास भेजा कि वह

१ घायल २ कमीना ३ जूते सीधे करें ४ मूर्ख भट्टाचार्य ५ सुनहरे व्यक्ति कमरों में सुनहरी पेटियां बांधे गुलामों की तरह खड़े हों ६ ऐ आसमान तुझपर लानत है लानत है।

मुझे अपने हमराह किंग कोठी ले आए। आगा ने मुझसे कहा, 'मुझे इस बात पर बड़ी हैरत है कि हरचंद आपने इस कदर सख्त नज्म कही है, फिर भी निज़ाम आपके खिलाफ किसी किस्म की कारवाई पसंद नहीं फरमाते हैं। और उन्होंने यह इरशाद फरमाया है कि अगर जोश मुझसे माफी तलब करके इस बात का वादा कर लें कि वह आइन्दा मेरे खिलाफ कुछ नहीं कहेंगे तो मैं उन्हें दिल से माफ कर दूंगा। इसलिए अभी अभी मेरे साथ चलिए।" मैंने कहा आगा माफी मांगने पर मैं तैयार नहीं हूं।' वह यह सुनकर दंग रह गए। मुझसे कुछ नहीं कहा, जनाने दरवाज़े पर जाकर आवाज़ दी, भाभी जरा एक बात सुन लीजिए। जब मेरी बीवी पट की आड़ में आकर खड़ी हो गई तो उन्होंने कहा भाभी आपके शौहर नामदार सरकार से माफी मांगने पर तैयार नहीं हैं। बीवी ने आगा से कहा, 'ज़रा उन्हें बुला लीजिए।' आगा ने मुझे पुकारा। मैं पहुंच गया और बीवी ने बड़े तड़ते के साथ डांटकर मुझसे कहा— अरे क्या तुम्हारा दिमाग चल गया है। आधी से ज्यादा जायदाद तबाह करके यहां आए हो। और अभी छः महीने भी नहीं हुए हैं कि इस आधी जायदाद को भी मलीहाबाद जाकर तीन बरस के लिए ख्वाजाहसन के ठेके पर दे आए हो और वह सारा रुपया भी बाला-बाला बम्बई जाकर बरबाद कर आए हो। माफी नहीं मांगोगे तो क्या चने भाड़ते फिरोगे? फिर यह भी तो सोचो कि लड़के-लड़कियों का लिखाना-पढ़ाना और उनकी शादियां करना है। जाओ, इसी घड़ी जाओ और सरकार से माफी मांग लो। नहीं तो मुझसे बुरा कोई नहीं होगा। सुन रहे हो तुम?'

मैंने कहा 'अशरफजहां यह बात सच है कि हम तुम से डरते हैं। मगर यह भी सुन लो कि इस कदर नहीं डरते हैं कि भीगी बिल्ली बन जाएं और माफी मांग आएं। यह सुनकर बीवी हक्का बक्का होकर रह गई। देर तक मुझे घूरा और फिर आंखें झुका लीं। आगाजानी यह कहते हुए चले गए कि जो शख्स खुदकुशी पर तुल जाए उसे कोई रोक नहीं सकता।

आगा के चले जाने के बाद मैंने डर के मारे घर में कदम नहीं रखा और दूसरे दिन जल्दी जल्दी इस्तीफा लिखकर अपने महकमे के सेक्रेटरी नवाब जुल्कद्र जंग के पास चला गया।

जुल्कद्र ने कहा कि जोश साहब आप यह क्या कर रहे हैं! जज़बात में न बहिए अक्ल से काम लीजिए जाइए सरकार से माफी मांग लीजिए। आपको मालूम नहीं कि मुलाज़िम की खाल को मोटा होना चाहिए। सरकार मुझे गालियां तक दे चुके हैं यह आपसे कह रहा हूं लेकिन मैं पी गया इस्तीफा नहीं दिया। आपकी बात तो कतई इससे उल्टी है। आपने खुद सरकार पर तान-तान की है और इसके बावजूद उल्टे इस्तीफा दे रहे हैं।

देर तक वह मुझे समझाते रहे देर तक तकरार होती रही और जब मैं नहीं माना तो उन्होंने गुस्से में आकर मेरा इस्तीफा किंग कोठी रवाना कर दिया।

मेरा इस्तीफा जंगल की आग के मानिंद निज़ाम तक पहुँच गया और निज़ाम चीख-चीखकर कहने लगे, "बड़ा ग़ज़ब हुआ। जोश मुझसे जीते जा रहे हैं। जोश मुझसे जीते जा रहे हैं।" नवाब सर अमीनजंग ने कहा, "हुजूर से कौन जीत सकता है? कहाँ जोश और कहाँ शाहंशाहे-दकन? जोश के मानिंद के तो सैकड़ों शायर लखनऊ की गलियों में जूतियाँ चटखाते फिरते हैं।" निज़ाम ने कहा, "अमीन, तुम बात की नज़ाकत को नहीं समझ रहे हो। मज़ा तो तब था कि उनके इस्तीफे से पेश्तर ही मैं उन्हें बरतरफ़ कर देता। लेकिन इस आलम में जब वह खुद इस्तीफा दे रहे हैं बात उलट गई है और मैं हारा जा रहा हूँ।"

नवाब अमीनजंग ने दस्त बस्ता अर्ज़ किया, "हुजूरे आलम इस इस्तीफे को खाना-ज़ाद के हवाले फरमा दें, फिदवी अभी मामले को पलट देगा।" निज़ाम ने मेरा इस्तीफा उनकी तरफ फेंक दिया। अमीनजंग ने उसे उठाकर फौरन चाक कर दिया और हवा में उसके पुर्ज़े उड़ाकर कहा, "सरकारे-आला, अब इस इस्तीफे का वजूद ही बाकी नहीं रहा है। अब सरकार फरमान जारी कर दें।" निज़ाम का चेहरा दमक उठा और कहने लगे, "अमीन, तुमने मुझे जिता दिया। हमारे सेक्रेटरी को ऐसा ही ताबिल (काबिल) होना चाहिए। लिखो फरमान कि जोश मलीहाबादी को मुमालिके महरूसा सरकारे आली से खारिज किया जाता है। पन्द्रह दिन के अन्दर-अन्दर वह रवाना हो जाए और ताहुक्मे सानी यहाँ कदम न रखें।"

फरमान लेकर आगाजानी मेरे पास आए और कहने लगे, "इस फरमान को समझे भी?" मैंने कहा कि इसमें समझने की क्या बात है। उन्होंने कहा कि मैं सरकारे आला का मिज़ाज पहचानता हूँ। इसलिए फरमान के दो नुक्ते बताने आया हूँ। पहला नुक्ता तो यह है कि सरकार जब किसी पर इताब फरमाते हैं तो उसे चौबीस घंटे के अन्दर निकाल देते हैं। आपको चौबीस घंटे के एवज़ पूरे पन्द्रह दिन की मोहलत दी गई है और वह इस मकसद से कि आप सूरते हाल को ठंडे दिल से समझकर माफी माँग लें और यह फरमान वापस ले लिया जाएगा। दूसरा नुक्ता यह है कि इसमें ताहुक्मे सानी लिखकर आपकी वापसी को नामुमकिन नहीं बनाया गया है। इसलिए अब भी कुछ नहीं गया है। अभी मेरे साथ सरकार की खिदमत में हाज़िर होकर माफी माँग लीजिए। अगर इसी वक्त यह फरमान मंसूख न कर दिया जाए तो मेरी नाक काट लीजिएगा।

मैंने आगाजानी को गले लगाकर उनका माथा चूम लिया और कहा, "आप वाकई मेरे पक्के दोस्त हैं, लेकिन मैं किसी तरह माफी तलब नहीं करूँगा।"

आगा ने सर पकड़कर कहा, "भाई, राजहठ, बालहठ, त्रियाहठ तो सुनी थी। आज मालूम हुआ कि चौथी हठ भी होती है जिसे शायरहठ कहना

मैने अन्दर जाकर बीवी से कहा, 'अब सामान बाधो। हम यहा पद्रह दिन क्या पडे रहे, तीन चार दिन म ही क्या न चले जाए ?" बीवी ने कहा, 'यह तो सोचा जाओगे कसे ? जाने का दमदरूह भी है ? तुम्हारे बहन-बहनाई उनके बच्चे हम लोग छोटे दादा और दोनो नौकर। इतने आदमियो का किराया भाडा कहा से आएगा। फिर तुम्हारी यह जिद भी है कि हम अपनी मोटर और दोनो कुत्ते भी साथ ले जाएगे और उन्ह यहा की गलियो म मारा-मारा नही फिरने देंगे। इन सबके लिए रुपया कहा स आएगा ? इसी दिन के लिए मैं तुमसे कहा करती थी कि रोज दावतें न करो, गोल के गोल आदमियो को रोज शराबें न पिलाओ इतने अल्लले-तलल्ले न करो। अब बताओ क्या करोगे और कसे जाओगे ?'

बीवी की बातें सुनकर मैं चकरा गया। मैंने कहा 'फिर अशरफजहा क्या किया जाए ?' उन्होंने कहा, जाओ और शाहजादे और महाराजा (किशन प्रसाद) स कर्ज मागो।' मैंने कहा 'मैं कर्ज मागने नही जाऊगा। यह तो इन दोनो का फर्ज था कि किसीको मेरे पास भेजकर पुछवाते कि हम इस मौका पर आपकी क्या इमदाद कर सकते हैं। जब उन्होंने अपना फर्ज अदा नही किया तो मैं बेगरती लादकर उनके पास क्या जाऊ।' बीवी ने कहा हा सच कहते हो। लेकिन मैं पूछती हू कि अब सुबीता क्या किया जाए ?' गरज यह कि एक एक करके दिन गुजरने लगे और जाने की तारीख करीब से करीबतर आने लगी और कोई तदबीर समझ म नही आई।

एक रोज इसी बेचारगी के आलम म सर झुकाए बैठा था कि हकीम आजाद असारी न आकर कहा कुछ खयाल भी है कि यहा से जाने म अब फकत चार दिन बाकी रह गए हैं ?' मैंने कहा 'आजाद साहब अब इसके सिवा कोई चारा नही है कि मैं निकलने के दिन बडे इत्मीनान से अपने फाटक के सामने आराम-कुर्सी पर बैठ जाऊ और निजाम की ना फरमानी के जुर्म म अपने को गिरफ्तार कराके जेल चला जाऊ। लेकिन मेरे बाल-बच्चे क्या करेंगे ?'

आजाद ने कहा, गिरफ्तार हो आपके दुश्मन। मैं ऐसी तदबीर निकालकर आया हू जो पट पड ही नहीं सकती। आपको इस बात का इल्म नही कि खानदान-आसफिया की यह एक पुरानी रवायत है कि शाही मातूबो का आजीवन वजीफा दिया जाता है। आप भी मातूब हैं आपको भी वजीफा दिया जाएगा। इसलिए आप अल्लाह का नाम लेकर इस मजमून की दरख्वास्त लेकर अकबर हैदरी के पास जाए कि आपको खजानाए-सरकारे-आली से पाच हजार रुपय की रकम बतौर कर्ज द दी जाए और उस रकम को वजीफे म स किस्तो म काट लिया जाए।

मैंने कहा 'तदबीर तो आपकी माकूल है, लेकिन क्या मुह लेकर हैदरी के पास जाऊ। उन्हे तो खिताब के मामले म जलील कर चुका हू।' आजाद ने कहा "इसमे क्या होता है ? आप हैदरी स तो कर्ज नही माग रहे हैं। कर्ज

तो सरकारी खजाने से मिलेगा।" मैंने कहा, "बहुत अच्छा। मैं तैयार हूं। लेकिन दरख्वास्त लिखना तो मुझे आता नहीं।" आजाद ने अपनी जेब से टाईपशुदा दरख्वास्त निकालकर मेरे हवाले कर दी और कहा, "इसी ख्याल से मैं आप के पास लेकर आया था कि दरख्वास्त लिखना आपके बस का रोग नहीं।"

अपने मिजाज के खिलाफ लाखों कोड़े मार मारकर मैं हैदरी के पास गया। उन्होंने बड़ी नर्मी के साथ पूछा, जोश साहब मैं आपकी क्या खिदमत कर सकता हूं? मैंने कहा आप मुझ पर दो इनायतें कर सकते हैं। पहली इनायत तो यह होगी कि आप मेरी इस कर्ज की दरख्वास्त को कबूल फरमा लें। यह मुमकिन न हो तो फिर यह दूसरी इनायत करें कि मुझे नाफरमानी के जुर्म में गिरफ्तार कराकर जेल भिजवा दें।

उन्होंने मेरी दरख्वास्त अपने हाथ में लेते हुए कहा आप गिरफ्तारी की बात न कहें। अगर आपको गिरफ्तार कर लिया तो लिटरेचर की हिस्ट्री हैदराबाद को कभी माफ नहीं कर सकेगी।

दरख्वास्त पढ़कर वह दाढ़ी खुजलाने लगे। मैंने कहा हैदरी साहब आप अपने दिमाग पर बोझ न डालें। मैं हर मुसीबत के लिए बखुशी तैयार हूं। उन्होंने कहा जोश साहब यह फायनेंस का मामला है। इसमें पांच छः महीने लगेंगे। मैंने कहा 'मुझे तो सिर्फ चार दिन की फुरसत है।'

वह सर झुकाकर सोचने लगे। अपनी खशख्शी दाढ़ी खुजलाई ऐनक साफ करके दोबारा लगाई और आखिरकार गर्दन के एक फैसलाकुन झटके के साथ मेरी दरख्वास्त मंजूर करके उसपर दस्तखत कर दिए। दूसरे ही दिन मुझे पांच हजार मिल गए।

जाता है आसमां लिए कूचे से यार के
आता है जी भरा दरो दीवार देखकर।

कैसे बताऊं कि हैदराबाद से रवानगी के वक्त मेरे दिल का क्या आलम था। एक तरफ गमे दौरां (दुनिया का गम) और एक तरफ गमे जानां (प्रेयसी का गम)। मेरे रोजगार की शमअ बुझकर धुआं दे रही थी और मेरे इश्क का चांद गहनाकर उदासी बरसा रहा था। बीवी रेल के डब्बे में उदास बैठी थी और महबूबा वेटिंग रूम में पछाड़ें खा रही थी और मेरा यह आलम था कि बार बार बीवी की नजर बचाकर वेटिंग रूम जाता महबूबा को गले लगाकर रोता और आंसू पोंछकर बाहर जाता और सय्यद अली अख्तर सय्यद अबुलखैर मौदूदी और सय्यद अबुलआला मौदूदी से जो मुझे रुखसत करने आए थे बात करने लगता था।

मैं इसी आलम में था कि नवाब जुल्कद्रजंग आ गए और एक कागज मेरी तरफ बढ़ाकर कहा 'यह मेरे नाम का शाही फरमान है इसे पढ़ लीजिए। फरमान अक्षरशः याद नहीं लेकिन मतलब यह था कि जोश मलीहाबादी आज हिन्दुस्तान जा रहे हैं। उनसे कह दो कि वह अपना कलम को मेरे खिलाफ

इस्तेमाल न करें। अगर माफी पर तैयार हो तो अब भी गुंजाइश बाकी है।' मैंने कहा, 'नवाब साहब, आला हजरत की खिदमत में मेरा शुक्रिया अदा करके कह दीजिए कि मैं उनकी हिदायत पर अमल करूँगा, लेकिन माफी तलब करने पर आमादा नहीं हूँ।' इतने में रेल रेंगने लगी। मैं दौड़कर सवार हो गया। सबको सलाम किया। मेरी महबूबा खिड़की में से निकल आई। उसने आँसुओं से डबडबाई आँखों के साथ मुझे रुखसती सलाम किया। सलाम करके लड़खड़ा गई। मैंने आँखों ही आँखों में उसे गले लगा लिया और गाड़ी की रफ्तार तेज हो गई।

१५

दर-ब-दर

झांसी पहुंचकर मैंने बीवी को अपने इरादे से आगाह किया तो उन्होंने कहा, 'अच्छा यह भी करके देख लो।' वह बड़ी उदासी के साथ मलीहाबाद की तरफ रवाना हो गई और मैं रियासत दतिया जाने के लिए झांसी स्टेशन पर उतर गया।

दतिया पहुंचकर काजी सर अजीजुद्दीन को मैंने अपनी सारी दास्तान सुना दी। उन्होंने कहा— 'जोश साहब आप शख्सी हुकूमत का बोझ उठाने के लिए बने ही नहीं। अल्लाहताला ने आपको बहुत बड़ा जौहर अता फरमाया कि आप आगरे को अपना हेड-क्वार्टर बनाकर वहां से एक हफ्तेवार अखबार निकालना शुरू कर दें। पर्चे का नाम रखिए 'सल्तनत'। आगरे में आपको रहने की दुशवारी इसलिए नहीं होगी कि वहां आपके नाना का आलीशान महल मौजूद है।

मैंने कहा 'काजी साहब राय तो बहुत अच्छी है, मगर किस बूते पर अखबार निकालूं?' उन्होंने कहा, "आप रियासत दतिया के बूते पर अखबार निकालें। फिलहाल रियासत आपको साढ़े चार सौ रुपये हफ्ता के हिसाब से सोलह सौ रुपये महीना देगी और अगले साल के बजट में यह रकम दुगनी कर दी जाएगी। मंजूर है आपको?' अंधा क्या चाहे दो आंखें। मैंने उनकी इस तजवीज को फौरन मंजूर कर लिया। उन्होंने कहा 'आप अल्लाह का नाम लेकर यह काम शुरू कर दीजिए। मैं दूसरी रियासतों से भी आपको इमदाद दिला दूंगा।' काजी साहब की इस बात से मेरा दिल बाग-बाग हो गया और मैं रात को आराम से सो गया। सुबह जब उनके साथ नाश्ता करने बैठा तो उन्होंने पूछा, 'जोश साहब आपके अखबार की पालिसी क्या होगी?' मैंने कहा— 'आप फरमाएं।' उन्होंने कहा 'प्रो ब्रिटिश!' मेरा चेहरा मलगजा सा होकर रह गया। काजी भांप गए। उन्होंने बड़े वलवले के साथ मेज पर घूंसा मारकर कहा 'जोश साहब ब्रिटिश एम्पायर एक नेमत है और बहुत बड़ी नेमत। अगर हुकूमत बरतानिया कायम बाकी न रही तो मेरी यह बात कान खोलकर सुन लीजिए कि हिंदू हमें कच्चा चबा डालेगा। वह आपका जीना दूभर कर देगा। गाय आप की गलियों में चरा करेंगी। आप गाय पर हाथ उठाएंगे तो कम से कम आपका हाथ तोड़ डाला जाएगा और यह भी मुमकिन है कि आप कत्ल कर डाले जाएं।। हिंदू आपका खून में होगा मरेगा। आपके एम० ए० लड़कों पर हिंदू मंदिर की तनख्वाह ली जाएगी। फरमाइए, क्या आप इसपर तैयार हैं?' मैंने कहा 'काजी साहब आप मेरे बुजुर्ग हैं और यह भी मानता हूं कि आप मुझे फूलता फलता देखना चाहते हैं। मैं आपका इस हमदर्दी का

गुन्जिया अदा नहा कर सकता। लेकिन इस क्या करू कि मुझे अंग्रेजी हुकूमत से नफ़रत है। मेरी बात काटकर उन्होंने कहा 'आप अपने दोस्त जवाहरलाल के बहकाव में आ गए। देखिए यह आपकी रोजी और तमाम मुसलमानों की भलाई का सवाल है आप फ़ैसले में जल्दी न कीजिए।'

लेकिन जब उनके बार-बार समझाने के बाद भी मैं फिरंगी की हिमायत के लिए आमादा न हुआ तो उन्होंने मायूस होकर कहा, अगर आप ब्रिटिश हुकूमत की मुखालिफत करेंगे तो मुझे अफसोस है कि रियासत आपका हाथ नहीं बटा सकेगी। और अगर मैं रियासत से आपकी इमदाद करूगा तो मेरी प्राइमीमिनिस्टरी ही खत्म हो जाएगी।'

मैंने कहा, काजी साहब, मैं आपका बेहद शुक्रगुजार हू। आपने तो दिल से यह चाहा था कि मेरी जिंदगी सुधर जाए लेकिन मेरे मिजाज ने सारा खेल बिगाडकर रख दिया। खता आपकी नहीं मेरी है।

धौलपुर आया तो धौलपुर के सबसे बडे जागीरदार और अपने सगे मामू की हवेली के एवज अपने पुराने दोस्त सरदार रूपसिंह के यहा ठहरा।

मैंने अपनी रूदाद सुनाई और कहा महाराजा के पास आया हू। शायद वह कोई मुलाजमत दे दें। रूपसिंह ने कहा, 'महाराजा बडा पापी है। मुझे उससे कोई उम्मीद नहीं। जब तक तुम्हारी कोई सूरत न निकले तुम मेरे ही साथ रहो। मलीहाबाद जाकर भाभी को बुला लाओ। नवाब साहब (मेरे मामू) के बाडे की हवेली में उन्हें ठहराओ। जब तक कोई बंदोबस्त न हो जाए मैं पाच सौ रुपये महीना तुमको देता रहूगा। जब अच्छे दिन आए तो अदा कर देना।'

मैंने कहा, "मैं तुम्हारा बहुत शुक्रगुजार हू कि मेरे बिना कहे तुम मेरी इमदाद पर आमादा हो गए। रूपसिंह ने मेरी बात काटकर कहा, यह कौन-सी अनोखी बात है? क्या हम दोनों पुराने दोस्त नहीं हैं? क्या हममें कोई ग़ैरियत है? मैं राजपूत हू तुम पठान। तुम मुसल्मान राजपूत हो मैं हिन्दू पठान।

मैंने कहा 'भाई रूपसिंह मैं सोचकर जवाब दूगा। रूपसिंह ने कहा, सोचकर जवाब देनेवाले की ऐसी-तैसी। अभी-अभी जवाब दो वरना छाती पर चढकर गला दबा दूगा। मैंने हसकर कहा ऐसी हौल-जौल काहे की। जरा सोच तो लेने दो। यह सुनते ही रूपसिंह ने जस्त लगाई। मुझे फर्श पर गिरा लिया और जोर-जोर से मेरा गला दबा-दबाकर कहने लगे कि मंजूर है कि नहीं या मार डालू? मैंने कहा "मंजूर, मंजूर ऐ जालिम मंजूर। मेरी आखों में मुहब्बत के आसू बहने लगे। मैंने तार देकर बीवी को धौलपुर बुला लिया। वह छोटे दादा और सखावत व जफर को साथ लेकर आ गई। मैं भी रूपसिंह के बाडे से उठकर मामू के बाडे आ गया और उनकी खाली हवेली में रहने लगा। कई बार महाराजा धौलपुर से मिला। हर बार उन्होंने मुलाजमत का

१५

दर-ब-दर

झासी पहुचकर मैंने बीवी को अपने इरादे से आगाह किया तो उन्होंने कहा 'अच्छा यह भी करके देख लो।' वह बडी उदासी के साथ मलीहाबाद की तरफ रवाना हो गई और मैं रियासत दतिया जाने के लिए थासी स्टेशन पर उतर गया।

दतिया पहुचकर काजी सर अजीजुद्दीन को मैंने अपनी सारी दास्तान सुना दी। उन्होंने कहा—"जोश साहब, आप शख्सी हुकूमत का बोझ उठाने के लिए बने ही नही। अल्लाहताला ने आपको बहुत बडा जौहर अता फरमाया कि आप आगरे को अपना हेड-क्वाटर बनाकर वहा से एक हफ्तवार अखबार निकालना शुरू कर दें। पर्चे का नाम रखिए 'सल्तनत'। आगरे म आपको रहने की दुशवारी इसलिए नही होगी कि वहा आपके नाना का आलीशान महल मौजूद है।

मैंने कहा काजी साहब राय तो बहुत अच्छी है मगर किस बूते पर अखबार निकालू ?" उन्होंने कहा आप रियासत दतिया के बूते पर अखबार निकालें। फिलहाल रियासत आपको साढे चार सौ रुपये हफ्ता के हिसाब से सोलह सौ रुपये महीना देगी और अगले साल के बजट म यह रकम दुगनी कर दी जाएगी। मजूर है आपको ? अधा क्या चाहे दो आखें। मैंने उनकी इस तजवीज को फौरन मजूर कर लिया। उन्होंने कहा आप अल्लाह का नाम लेकर यह काम शुरू कर दीजिए। मैं दूसरी रियासतो से भी आपको इमदाद दिला दूगा।' काजी साहब की इस बात से मेरा दिल बाग बाग हो गया और मैं रात को आराम से सो गया। सुबह जब उनके साथ नाश्ता करने बैठा तो उन्होंने पूछा, जोश साहब आपके अखबार की पालिसी क्या होगी ? ' मैंने कहा—'आप फरमाए। उन्होंने कहा प्रो ब्रिटिश!" मेरा चेहरा मलगजा सा होकर रह गया। काजी भाप गए। उन्होंने बडे वलवले के साथ मेज पर घूसा मार कर कहा जोश साहब ब्रिटिश एम्पायर एक नेमत है और बहुत बडी नेमत। अगर हुकूमत खुदा-न खास्ता बाकी न रही तो मेरी यह बात कान खोलकर सुन लीजिए कि हिंदू हम कच्चा चबा डालेगा। वह आपका जीना दूभर कर देगा। गाय आप की सेतिया चर लगी। आप गाय पर हाथ उठाएगे तो कम से कम आपका हाथ तोड डाला जाएगा और यह भी मुमकिन है कि आप कत्ल कर डाले जाए।। हिंदू आपके खून से होली खेलेगा। आपके एम० ए० लडको पर हिन्दू मैट्रिक को तरजीह दी जाएगी। फरमाइए, क्या आप इसपर तयार हैं ? मैंने कहा 'काजी साहब, आप मेरे बजुर्ग है और यह भी मानता हू कि आप मुझे फूलता फलता देखना चाहते हैं। मैं आपकी इस हमदर्दी का

दुनिया अन्त नहीं कर सकता। लेकिन इसे क्या करूं कि मुझे अंग्रेजी हुकूमत से नफरत है।" मेरी बात काटकर उन्होंने कहा, 'आप अपने दोस्त जवाहरलाल के बहकाव में आ गए। देखिए यह आपकी रोजी और तमाम मुसलमानों की भलाई का सवाल है, आप फसले में जल्दी न कीजिए।"

लेकिन जब उनके बार-बार समझाने के बाद भी मैं फिरंगी की हिमायत के लिए आमादा न हुआ तो उन्होंने मायूस होकर कहा, 'अगर आप ब्रिटिश हुकूमत की मुखालिफत करेंगे तो मुझे अफसोस है कि रियासत आपका हाथ नहीं बटा सकेगी। और अगर मैं रियासत से आपकी इमदाद करूंगा तो मेरी प्राइममिनिस्टरी ही खत्म हो जाएगी।'

मैंने कहा, "काजी साहब मैं आपका बेहद शुक्रगुजार हूं। आपने तो दिल से यह चाहा था कि मेरी जिन्दगी सुधर जाए लेकिन मेरे मिजाज ने सारा खेल बिगाड़कर रख दिया। खता आपकी नहीं मेरी है।"

धौलपुर आया तो धौलपुर के सबसे बड़े जागीरदार और अपने सगे मामू की हवेली के एवज अपने पुराने दोस्त सरदार रूपसिंह के यहां ठहरा।

मैंने अपनी रूदाद सुनाई और कहा, "महाराजा के पास आया हूं। शायद वह कोई मुलाजमत दे दें।" रूपसिंह ने कहा "महाराजा बड़ा पापी है। मुझे उसमें कोई उम्मीद नहीं। जब तक तुम्हारी कोई सूरत न निकले, तुम मेरे ही साथ रहो। मलीहाबाद जाकर भाभी को बुला लाओ। नवाब साहब (मेरे मामू) के बाड़े की हवेली में उन्हें ठहराओ। जब तक कोई बंदोबस्त न हो जाए मैं पांच सौ रुपये महीना तुमको देता रहूंगा। जब अच्छे दिन आएं तो अदा कर देना।'

मैंने कहा 'मैं तुम्हारा बेहद शुक्रगुजार हूं कि मेरे बिना कहे तुम मेरी इमदाद पर आमादा हो गए।" रूपसिंह ने मेरी बात काटकर कहा "यह कौन-सी अनोखी बात है? क्या हम दोनों पुराने दोस्त नहीं हैं? क्या हममें कोई गैरियत है? मैं राजपूत हूं तुम पठान। तुम मुसलमान राजपूत हो मैं हिन्दू पठान।

मैंने कहा 'भाई रूपसिंह मैं सोचकर जवाब दूंगा।' रूपसिंह ने कहा, सोचकर जवाब देनेवाले की ऐसी-तैसी। अभी-अभी जवाब दो वरना छाती पर चढ़कर गला दबा दूंगा।" मैंने हंसकर कहा "इसी होल-जोल काहे का। जरा सांस तो लेने दो।" यह सुनते ही रूपसिंह ने जस्त लगाई। मुझे फर्श पर गिरा लिया और जोर-जोर से मेरा गला दबा-दबाकर कहने लगे कि मंजूर है कि नहीं या मार डालूं? मैंने कहा 'मंजूर, मंजूर ऐ जालिम मंजूर।' मेरी आंखों से शुक्रिए के आंसू बहने लगे। मैंने तार देकर बीवी को धौलपुर बुला लिया। वह छोटे दामाद और सखावत व जफर को साथ लेकर आ गई। मैं भी रूपसिंह के बाड़े से उठकर मामू के बाड़े आ गया और उनकी खाली हवेली में रहने लगा। कई बार महाराजा धौलपुर से मिला। हर बार उन्होंने मुलाजमत का

१६

रिसाला 'कलीम'

दिल्ली पहुचा तो मिसेज नायडू बरस पडी, कहने लगी, "जरा उसका नाम तो बताइए, जिसने आपको यह खबर दी कि सरोजनी मर चुकी है।' मैंने हैरान होकर पूछा, 'यह आप क्या कह रही है?" उन्होंने कहा 'यह मैं इसलिए कह रही हू कि अगर आप मुझे जिंदा समझते तो सीधे मेरे पास आकर अपनी विपदा कहते। अपनी बात जारी रखते हुए उन्होंने कहा कि अगर आप मुझे न लिखते तो यह पता ही न चलता कि आप धौलपुर म अपने किसी दोस्त रूपसिंह के पास ठहरे हुए हैं।

मैंने क्षमा-याचना के लिए लब खोले ही थे कि उन्होंने कहा, मैं आपके टम्प्रामेंट (मिजाज) से वाकिफ हू, कुछ न कहिए। मेरे सोने के कमरे म जाइए। तकिए के नीचे एक बड़ा सा लिफाफा रखा हुआ है, उसे खोले बगैर अपनी जेब म रख लीजिए। जरा संभाल कर रखिएगा ताकि गिर न जाए। अब आपका काम यह होगा कि दिल्ली से एक नीम अदबी और नीम सियासी रिसाला निकालेंगे और किसी रियासत की तरफ मुडकर भी नही देखेंगे। मैं इश्तहार भी दिला दूगी।

मैं रिसाले का नाम नामे बुलद रखना चाहता था। मेरे दोस्त जुल्फिकार अली बुखारी ने राय दी कि यह नाम मुश्किल है मैं रिसाले का नाम कलीम रखू। मैंने यह राय मान ली।

रिसाला निकालना तिजारती मामला है। मेरी सात पीढ़ी भी तिजारत से वाकिफ न थी। इसलिए शुरू शुरू ही म बहुत सा रुपया बरबाद हो गया। इसके साथ मेरे दिल्ली के दोस्तो ने मुझे घेर लिया। रोज बोतलें खुलने और दावतें उडने लगी। कातिबो, कागजवालो, ब्लाकसाजो ने और छापखाने वालो ने भी यह समझकर कि मैं घामड आदमी हू मुझे दोनो हाथो से लूटना शुरू कर दिया जिसका नतीजा यह निकला कि अभी दूसरा पर्चा छपा नही था कि तमाम रुपया तर भर हो गया। शर्म आई कि मिसेज नायडू से यह बात कहू और सोचने लगा कि अब क्या किया जाए। अभी कोई बात समझ म नही आई थी कि बीमार पड गया। बुखार इस कदर तेज आया कि हवास गुम हो गए और नजला इस कदर शदीद हुआ कि तमाम सीना रुधकर रह गया। सास भी रुक रुककर आने लगी और मैं समझा कि अब बच नहीं सकूगा।

मैं फतहपुरी के ब्राऊन होटल म ठहरा हुआ था। एक पर्चे पर मैंने मिसेज नायडू और जवाहरलाल का नाम लिखा और कराहता हुआ नीचे आया। मनेजर को वह पर्चा देकर कहा अगर मैं मर जाऊ तो फौरन इन लोगो को खबर कर दीजिएगा। मनेजर बहुत घबराया। वह दौडा हुआ गया और डाक्टर

सयद नासिर अब्बास को जिनका मतब वहां से दस कदम पर था अपने साथ ले आया। डाक्टर साहब पहले से मुझे जानते थे। मेरे सीने का मुआइना किया और मतब जाकर अपने आदमी के हाथ दवाएं भेज दीं।

दवाएं पीकर अभी लेटा हुआ अपनी बेकसी पर गौर और अपनी मौत की आमद का इंतजार कर रहा था कि आहट महसूस हुई। पंडित शिवनारायण, जिनका छापाखाना होटल से मिला हुआ था और जिन्हें मतलबी फरीदाबादी मुझसे मिला चुके थे कमरे में दाखिल हुए। मैंने कहा 'आइए शिवनारायण साहब अफसोस कि मैं उठ नहीं सकता। आप मेरे सिरहाने बैठ जाएं। मिजाज पुर्सी के बाद उन्होंने कहा जोश साहब मुझे अन्दाजा हो गया है कि आप रिसाला नहीं निकाल सकते। मैं कारोबारी आदमी हूं मेरा अपना छापाखाना है इसलिए अगर आप पसन्द करें तो मैं आपका पचास फीसदी हिस्सेदार हो जाऊं। कलम आपका चन्दा और रुपया मैं लगाऊंगा। जब तक रिसाला चलने न लगे पांच सौ रुपये महीना आपको पेशगी देता रहूंगा। मुझे और क्या चाहिए था उनकी यह तजवीज फौरन मंजूर कर ली।

दो चार दिन के अंदर पं० शिवनारायण ने होटल के सामने ही दो कमरों और खुले सेहन का फ्लैट दफ्तर और मेरी रिहायश के वास्ते किराये पर ले लिया। मैं होटल से वहां उठ आया।

कुछ रोज के बाद जब मैंने उनसे कहा कि मैं अपनी बीवी को भी यहां ले आना चाहता हूं तो उन्होंने करोलबाग में एक कोठी किराये पर लेकर उसे फर्नीचर से आरास्ता कर दिया। मैं धौलपुर जाकर बीवी को ले आया जिससे यह कोठी आबाद हो गई। कलीम अच्छा खासा चलने लगा माकूल आमदनी होने लगी। मेरी नज्मों के दो मजमूए भी छप गए। हैदराबाद से अताबी वजीफा भी जारी हो गया और जिन्दगी चैन से गुजरने लगी।

साल दो साल आराम से गुजरने के बाद मेरी जिंदगी फिर एक नयी जानिब मुड़ गई। एक रोज शाम के वक्त शिवनारायण खुश्क चेहरे के साथ आए और कलीम से अपनी दस्तबरदारी का ऐलान करके कह दिया कि कल से आप अपना पर्चा खुद संभालें।

यह सच है कि शिवनारायण ने अपने भाइयों के दबाव में आकर यह बात की थी मगर उनका यह इखलाकी फर्ज था कि वह मुझे कम से कम तीन महीने का नोटिस देते। लेकिन उन्होंने सिर्फ बारह घंटे का नोटिस देकर अलाहदगी अख्तियार कर ली। मैं सीधा अपने पहली मन्मूनअली खां जामई के पास पहुंचा और कलीम का कारोबार उनके सुपुर्द कर दिया। लेकिन जब एक महीने के बाद उन्होंने कलीम की आमदनी के सिर्फ नब्बे रुपये मेरे हवाले किए तो मैं दंग रह गया। मैं मुरव्वत में कुछ कह न सका।

जब और कोई सूरत नजर न आई तो मैंने मिस्टर पणिक्कर को मेल दिया और उन्होंने तार भेजकर मुझे पटियाला बुला लिया और महाराजा पटियाला

भूपेंद्रसिंह से मिलवाकर मेरा वजीफा मुकरर करा दिया। अब दिल्ली आकर मैंने महमूदअली खा से रिसाला निकाल लिया और करोलबाग से दरियागंज उठ आया। एक कोठी 'आदित्य भवन' किराये पर लेकर खुद रिसाला निकालने लगा। हकीम आजाद अंसारी मेरा हाथ बटाने लगे और हैरत है कि मेरी बीवी भी क्लीम के कारोबार में मेरी मदद करने लगी। क्लीम साज सज्जा और विषय वस्तु दोनों हैसियतों से दिन दूनी रात चौगुनी तरक्की करने लगा।

मैंने उसी जमाने में अपनी चचेरी बहन के बेटे अल्ताफ अहमद खा से अपनी बेटी सईदा की धूम धाम से शादी भी कर दी।

क्लीम की तरक्की ने मेरे बहुत से दुश्मन भी पैदा कर दिए थे। ऐसा क्या न होता? फिरंगी हुकूमत से बगावत सरमाएदारी का विरोध समाजवाद का प्रचार और कांग्रेस की तरफदारी। नतीजा यह कि कांग्रेस के गुलामी परस्त मुखालिफीन मुस्लिम लीग के 'खिताब-याफ्ता मुजाहिदीन और हुकूमत के टुकड़ों और वजीफों पर पलनेवाले हुक्काम और उलमाए-कराम लंगर-लंगोट बांधकर अखाड़े में उतर आए। उधर पलटनें थी और इधर मैं अकेला।

आए दिन मेरे खिलाफ कुफ्र के फतवे निकला करते और कत्ल की धमकियों के गुमनाम खत आया करते थे। खुफिया पुलिस साये की मानिंद मेरे पीछे लगी रहती थी। बीवी चिल्लाती रहती थी कि अंधेरे मुह अंधेरे टहलना छोड़ दो। न जाने कौन अंधेरे में पीछे से आकर छुरी मार दे। लेकिन मैं हर रोज तारों की छांव में एक मोटा सा डंडा लेकर जमुना के किनारे बड़े इत्मीनान से टहला करता था कि आखिर मैं भी आफरीदी पठान हूं मरूंगा तो चार को मारकर मरूंगा।

१७

फिरंगी राजनीति के दो रुख

साढ़े तीन या चार बरस तक 'कलीम' को कामयाबी से चलाकर और एक ऐसे रोमानी रोग में फँसकर जिसने मेरे हवास छीन लिए, मैं दिल्ली की ज़िन्दगी तजकर मलीहाबाद चला गया। चूँकि मैं रिसाले के काम का नहीं रहा था, मैंने अपने दामाद जनाब अहमद को मैनेजर बना लिया। लेकिन जब देखा कि वह बिल्कुल निखट्टू है तो मैंने 'कलीम' बन्द करके मजाज़ अली मरहूम और सिब्तेहसन की दरख्वास्त पर उसे उन लोगों के रिसाले 'नया अदब' में मिला दिया जो अब 'कलीम व नया अदब' के नाम के साथ लखनऊ से निकलने लगा।

कहते हैं कि वक्त सबसे बड़ा मरहम है। मलीहाबाद आकर [illegible]-सात महीने के बाद मेरे दिल का ज़ख्म बड़ी हद तक भर गया।

बीवी तुल गई आमों के बाग लगवाने पर और ऐसी तुल गई कि खाना-पीना दूभर कर दिया। हर आन यह रट लग गई कि बाग लगवाओ और जब तक बागों में कलम न लग जाए कलम न उठाओ। मैंने उसी ज़माने में एक तवील ड्रामाई नज़्म 'हर्फ़े आखिर' शुरू की थी। उन्होंने वह नज़्म भी नहीं कहने दी।

तंग आकर मैंने मातादीन पटवारी को बुलाया। उसने कहा, "मझले भैया, अब कानून बदल गया है। आप किसी काश्तकार को बेदखल करके उससे ज़मीन नहीं निकाल सकते। और जब ज़मीन नहीं निकल सकेगी तो बाग कैसे लगेगा?"

मातादीन की बात सुनकर मैं बाग-बाग हो गया कि चलो एक मुसीबत कट गई। मैं खुशी खुशी बीवी के पास गया और झूठ मूठ का गमगीन चेहरा बनाकर पटवारी की बात दोहरा दी। लेकिन बीवी निराश नहीं हुई। मुझे और पटवारी को साथ लेकर गाँव गई। थाने के सामने काश्तकारों को जमा करके पटवारी से कहा, "पूछो काश्तकारों से कि मझले भैया ने क्या तुम पर कभी जुल्म ढाया है? तुम पर लगान वसूली करने में कभी सख्ती की है, तुमसे कभी बेगार लिया है?" और जब मातादीन ने ये तमाम सवाल किए तो हर तरफ से आवाज़ आने लगी—नाही नाही नाही कभू नाही। फिर बीवी ने कहा, "मातादीन, पूछो अगर भैया बाग लगवाने के लिए तुमसे थोड़ी थोड़ी ज़मीन माँगें तो क्या तुम नहीं दोगे?" सारी रियाया ने एकज़बान होकर कहा—दीबा दीबा अभू-अभू दीबा भले भले दीबा।

इसके बाद मातादीन ने इस्तीफ़े निकाले और काश्तकारों ने धड़ाधड़ अँगूठे लगाना शुरू कर दिए। जब तमाम इस्तीफ़े मुकम्मिल हो गए तो बीवी ने मुझसे

कहा अब तुम इनका शुक्रिया अदा कर दो। जब मैं शुक्रिया अदा करने खड़ा हुआ तो तमाम काश्तकार रोने लगे—भया हम तो तुम्हारी पनही हैं, अस न करो (भया हम तुम्हारी जूती हैं ऐसा न करो)।

बीबी ने मिठाई तकसीम की और रिआया ने मयल्ल भया की जय के नारे लगाए। दो-तीन महीने के अन्दर आम के बाग लग गए और बीबी निहाल हो गइ।

यह सच है कि मलीहाबाद म बहद शान्ति थी सूर्योदय और सूर्यास्त के दृश्य, जमीनाराज के मैदान की खालिस हवाएं और की खुशबू कोयल की कू-कू और पपीहे की पीहू थी और लिखने पढ़ने की फुरसत। लेकिन जब शाम को शराब पान की इबादत शुरू करता था तो दोस्तों को आखें ढूढने लगती थी और चूकि—

जाहिद की नमाज हो कि मकश की शराब
दाना का मजा है बाजमाअत साकी।

इस तनहाई से तग आकर मैं शायद १९४१ म फिर लखनऊ आकर रहने लगा। एक रोज जब मैं अपनी बनारसी बाग के फाटक के सामनेवाली कोठी म बठा लखनऊ के गवनर की तकरीर रेडियो पर सुन रहा था जिसम हिन्दुस्तानियों से अपील की गई थी कि वे इसानियत के मुस्तकबिल को बचाने की खातिर जग म ब्रिटेन की मदद पर कमरबस्ता हो जाए उस वक्त मैंने अपनी नज्म ईस्ट इडिया कम्पनी के फरजदा से खिताब' पद्रह मिनट म कह डाली थी।

इस नज्म का छपना था कि आग लग गई। लोग जुलूस बना-बनाकर निकले और उस गली-गली गाते फिरने लगे। आगे-आगे वे लोग होते थे और पीछे-पीछे पुलिस।

मेरी यह नज्म जब बलिन रेडियो से ब्राडकास्ट हुई तो मेरी सख्त निगरानी होने लगी और मेरी कोठी से मिली हुई दूसरी कोठी म एक सी० आइ० डी० इन्सपेक्टर मेरी निगरानी के वास्ते आकर रहने लगा। एक दिन सह पहर के वक्त पुलिस ने मेरी कोठी पर धावा बोल दिया और एक हिन्दू इसपेक्टर की सरकरदगी म दस-पद्रह कास्टेबल आ धमके मेरी खाना तलाशी के लिए। इन्स्पेक्टर से मैंने कहा जनाब मेरा घर खुला हुआ है। आप शौक से एक एक कोना छान डालें। इसपेक्टर न सरगोशी के अदाज म कहा, मैं आपको ऐसी उम्दा नज्म लिखने पर मुबारकबाद देता हू। मैं आपके घर की तलाशी नहीं लूगा और सिर्फ जाब्ता की कारवाई करके चला जाऊगा। मैंने कहा पुलिस म रहकर आप इस कदर शरीफ हैं बडे ताज्जुब की बात है। उसने कहा मैं अपने बच्चों का पेट पालने के लिए मजबूरन नौकरी करता हू। मगर मैंने जमीर नहीं बेचा है मेरा दिल आप लोगों के साथ है। वह एक मेज पर सर मुबारक जान की खानापूरी के वास्ते कुछ लिखने लगा। इसपेक्टर की मशगूलियत से फायदा उठाकर एक मुसलमान हेड कास्टेबल न मेरी टाइमपीस

उठाकर जब मैं रख ली। सारी उम्र की मैंने शायरी कर भुला दिया।

जाब्ता की कारवाई मुकम्मिल करके जब इस्पेक्टर रुखसत हो गया मैंने उसकी शुक्रिया अदा किया। हिंदू की शराफत और मुसलमान की कमीनगी देखकर मुझे पसीना आ गया—

> कोई हद है या नहीं इस एहतराम-आदमीयत की
> बदी करता है दुश्मन और हम शर्माए जाते हैं।

मैंने इस घटना पर एक नज्म कहकर छपवा दी जो छपते ही जब्त कर ली गई। चूंकि वह नज्म मेरे किसी संग्रह में नहीं है इसलिए यहां नकल किए देता हूं—

> जिससे उम्मीदों में बिजली आग अरमानों में है
> ऐ हुकूमत क्या वह शै इस मेज के खानों में है?
> बंद पानी में सफीने खे रही है किसलिए?
> तू मिरे घर की तलाशी ले रही है किसलिए?
> घर में दरवेशों के क्या रखा हुआ है बदनिहाद।
> आ मिरे दिल की तलाशी ले कि बर आए मुराद
> जिसके अन्दर दहशतें पुरहौल तूफानों की है
> जिसमें गलता आंधियां-अंधे बयाबानों की है
> जिसके अन्दर नाग हैं ऐ दुश्मने हिंदोस्ता
> गार जिसमें हावते है कौंधती है बिजलियां
> छूटती हैं जिससे नजें अप्सरी-औरंग[1] की
> जिसमें है गूंजी हुई आवाज तबले जंग की
> जिसके अंदर आग है दुनिया पे छा जाए वो आग
> नारे दोजख[2] का पसीना जिससे आ जाए वह आग।
> कौन जिसमें देखती है मुंह उस आईने को देख
> मेरे घर को देखती क्या है मिरे सीने को देख।

इसके बाद मैंने आगाई साहब के इमामबाड़े में एक मुसद्दस पढ़ा हुसैन और इनकलाब के नाम से जिसे सुनने के लिए पूरा अदबी लखनऊ टूट पड़ा था इमामबाड़े में तिल धरने को भी जगह न थी। लखनऊ के तमाम शायर तमाम उस्ताद यहां तक कि मौलाना सफी भी तशरीफ लाए और मजलिस में सिर्फ शिया ही नहीं अहले सुन्नत और हिंदू भी शरीक हुए थे।

चूंकि इस मुसद्दस में रोने-पीटने पर जोर देने के बजाय हुसैन के चरित्र और बलिदान पर अमल करने की बात बिल्कुल पहली बार कही गई थी इसलिए अहले मजलिस ने आमतौर पर और अहले सियासत ने खासतौर पर बार-बार खड़े होकर इस जोशो खरोश के साथ दाद दी थी कि उनकी आवाजों के थपेड़ों से मंच में जुम्बिश पैदा हो गई और ऐसा मालूम हो रहा था कि श्रोता

१ बादशाह २ नरक की आग

अपने अपने गरेबान फाड़कर मैदाने जंग में कूद पड़ेंगे।

हुकूमत के कान तक यह गलगला पहुंचा तो उसने शिया खान साहबों, खान बहादुरों और रईसों को तलब करके यह हिदायत की कि वे फ़ौरन कोई तदबीर निकालें कि इस मुसद्दस का असर दूर हो जाए। अपने आका का हुक्म सुनकर उन्होंने मशविरा किया और वे तमाम लखनऊ के मशहूर बड़े मुज्तहिद सय्यद नासिरहुसैन साहब किब्ला की खिदमत में हाजिर हुए और उनसे कहा कि अहले मजलिस ने आमतौर पर और बानीए मजलिस हकीम साहब आलम ने खासतौर पर हमारे दीन की तौहीन की है और मजरे हुसैन पर जोश जमें शराबी को बिठाकर मंबर की तजलील की है। इसलिए आप उस मजलिस के बातिल होने का फतवा सादर फरमा दें।

किब्ला व काबा ने मुझे बुलवा भेजा और चायनोशी के बाद अपने दाहिनी तरफ एक मुसल्ला बिछवाकर इरशाद फरमाया कि जोश साहब जहमत न हो तो मुसल्ले पर बैठकर अपना वह मुसद्दस सुना दें जो आपने आगाई साहब के इमामबाड़े में पढ़ा था तो हुकूमत के एजेंटों की सफों में एक खलबली और बौखलाहट पैदा हो गई थी। और जब मैं वह मुसद्दस पढ़कर अपनी जगह वापस आ गया तो उन्होंने सरकारपरस्तों की टोली की तरफ देखकर इरशाद फरमाया कि आप हजरात ने वह हकीम मुबारक सुनी होगी, जिसका मतलब है कि जब तुम सुक्र (नशा) में हो तो नमाज के करीब न फटको। इससे यह बात साबित हो जाती है कि पीनेवालों का हाथ के आलम में नमाज पढ़ने से रोका नहीं गया है और इससे यह नतीजा निकलता है कि अगर कोई शख्स नशे के आलम में नहीं है तो वह मंबर हुसैन पर भी बैठ सकता है और मस्जिद में दाखिल होकर नमाज भी पढ़ सकता है।

यह सुनते ही सरकारपरस्तों का रंग फक हो गया।

इस मुसद्दस का अंग्रेजी अनुवाद जब मिस्टर मारिस मशारे-गवर्नर के मुलाहिज़े में गुज़रा तो उन्होंने मुझे बुला भेजा और बड़े मुरब्बियाना अंदाज में कहा, मैंने जब आपकी नज्म हुसैन और इनकलाब का अनुवाद पढ़ा तो आपके बारे में यह राय कायम की कि आप हक के परस्तार और बातिल के दुश्मन हैं। और अब मैं आपसे यह सवाल करता हूं कि मुसोलिनी और हिटलर दोनों इस वक्त यजीद का पाठ अदा कर रहे हैं या नहीं? जब मैंने कहा कि बेशक आप सच कह रहे हैं तो उन्होंने दूसरा सवाल किया कि अगर मैं मैं आपसे दरख्वास्त करूं कि आप इन यजीदों के खिलाफ आल इंडिया रेडियो से हर हफ्ते एक नज्म ब्राडकास्ट करते रहें (जिसके मुआविजे में यू० पी० सरकार आपको आठ सौ रुपये महीना आनरेरियम दिया करेगी) तो आप इस आफर को कबूल नहीं करेंगे?

मैंने कहा मिस्टर मारिस मैं किसी ऑनरेरियम के बगैर आपके इरशाद को मान लेता मगर क्या करूं अपने उसूल से मजबूर हूं। कांग्रेस ने इस जं

मैं आपका हाथ बटाने की जो शर्तें पेश की थीं आपकी हुकूमत ने उन्हें नहीं माना।' मारिस ने मेरी बात काटकर कहा 'मैं आपसे हुकूमत के तआवुन की दरख्वास्त नहीं कर रहा हूँ मैं सिर्फ इतना चाहता हूँ कि आप मुसोलिनी और हिटलर को बेनकाब करें।' मैंने कहा "अगर मैं ऐसा करूँगा तो इसका जो ग्राउ टोटल निकलेगा वह आपकी हुकूमत की मुवाफिकत ही होगा।

मारिस यह सुनकर कुछ देर के लिए तो खामोश हो गए। फिर अपनी ऐनक की ताल साफ करके वह बड़े वलवले के साथ खड़े हो गए। मैं समझा वह मुझपर हमला करेंगे। मैं भी जवाबी हमले के वास्ते खड़ा हो गया।

लेकिन वह मेरे करीब आए और मेरी पीठ ठोककर कहने लगे "वंडरफुल यंगमैन! आपके इनकार ने मेरे दिल में आपकी इज्जत कायम कर दी। आप अपने बाप की मानिंद बड़े आदमी हैं। आपको देखकर मैंने अपनी इस राय में तब्दीली कर ली है कि हिंदुस्तान की जमीन करेक्टर पैदा नहीं करती। अगर आपको कभी मेरी जरूरत पड़े तो मुझे याद कर लीजिएगा।" यह कहकर वह मुझे बरामदे तक रुखसत करने आए और बराबर मुसकराते रहे।

कुछ दिन फिल्मी दुनिया मे

उम्मीद अमठवी और सागर निजामी को साथ लेकर जब मैं एक मुशायरे म शरीक होने बम्बई गया तो उसके दूसरे ही दिन शाम के वक्त शालीमार पिक्चस पूना के मालिक अहमद साहब बन्ने (सज्जाद जहीर) के घर आए (हम लोग वहीं ठहरे हुए थे) और हम लोगो का कलाम सुनने के बाद वह बन्ने मिया को दूसरे कमरे म उठाकर ले गए। देर तक बातें करने के बाद जब रुखसत हो गए तो बन्ने मिया ने मुझसे कहा कि अहमद साहब आपको और सागर साहब को अपने साथ रखना चाहते हैं। आप दोनो पर कोई पाबन्दी नही होगी। सिर्फ गाने लिख दिया कीजिएगा। आपका मुआवज़ा ग्यारह सौ तक और सागर का मुआवज़ा साढे पाच सौ तक हाजिर किया जाएगा। मैंने कहा यह पीने का वक्त है। इस वक्त इन बातो का मौका नही कल जवाब दूगा।' सुबह को सागर ने मुझसे कहा कि अगर आप यह शत लगा दें कि मेरा और सागर का मुआवज़ा बिल्कुल बराबर होगा तो चूकि अहमद साहब की यह तमन्ना है कि आप उनके यहा काम करें इसलिए, वह इस शत को मान लेंगे और मेरी ज़िंदगी बन जाएगी।

मैंने बन्ने से कहा कि मेरी यह शत है कि सागर को मेरे बराबर मुआवज़ा दिया जाए। अगर अहमद साहब इसे कबूल नही करेंगे तो मैं उनकी यह पेशकश नामज़ूर कर दूगा।

अहमद साहब ने न चाहते हुए भी यह शत कबूल कर ली। थोडे दिन के बाद हम लोग पूना आ गए और शकर सेठ रोड के 'ताहिर मजिल' म रहने लगे।

मैंने अपने दिल्ली के रहनेवाले पजाबी दोस्त मलिक हबीब अहमद और अपने दक्नी दोस्त हबीबुल्ला रशदी को भी शालीमार म मुलाज़िम रखवा दिया था। कृश्नचदर को भी अहमद साहब पूना खीच लाए थे बेचारा जवा मग शाम तिवाडी हमीद बट ब्रजभूषण और भारतभूषण भी शालीमार म काम कर रहे थे। मेरे पुराने फौजी दोस्त मजनन खा रामपुरी भी तब्दील होकर पूना आ चुके थे और पूने के नये दोस्त कुदद्स घडीवाले और मुहम्मद नसीह भी ऐसे दिलचस्प निकले कि रात को अक्सर नशिस्तें उनके घर पर हुआ करती थी। एक अच्छी-खासी चडाल चौकडी की सूरत निकल आई थी।

वहा मेरे एक रुखपती दोस्त और भी थे मोलाडीना जो तमाम वक्त शराब पीते और दिल खोलकर लोगो की इमदाद किया करते थे। एक खास सिलसिले म उन्होने मेरी भी मदद की थी, जिसे मैं भूल नही सकूगा।

वहीं सागर साहब का मुरादाबाद की एक साहबजादी से कलमी मुआ-

शबा भी चल रहा था और कुछ रोज़ के बाद वह माहजबीं ताहिर फल्म में दुल्हन बनकर आ गई थी।

पूना का हर दिन ईद और हर रात शबरात थी। हर आठवें दसवें दिन मैं बम्बई जाकर किसी के आस्ताने जमाल पर सजदारेज़ी भी कर आता था। लेकिन अहमद साहब की गलत अमली ने दो-ढाई साल के अन्दर वह सारा तिलिस्म तोड़ दिया। वह चुपचाप पाकिस्तान की तरफ उड़ान कर गए और हम सब लोगों के हाथों के तोते उड़ गए। वह सारा खेल मिट्टी में मिल गया।

पूना छोड़कर मैं बम्बई आ गया और बच्चों के खाली घर में रहने लगा। उस घर के एक कोने में मुमताज़ हुसैन, जो आजकल कराची के किसी कालिज में उर्दू के उस्ताद हैं, भी रहते थे जहां सईद के बच्चों और उनमें रोज़ कोई न कोई झगड़ा हुआ करता था। इसलिए मैं अपने एक बतकल्लुफ मिलनेवाले मिस्टर अब्दुलअज़ीज़ रामपुरी के जकरिया बाल खाली फ्लैट में उठ आया। उस ज़माने में फिल्मी बाज़ार ठंडा पड़ा हुआ था। सागर हर दूसरे तीसरे दिन मेरे पास आते और हम एक-दूसरे से पूछा करते थे कि खां साहब अब होगा क्या?

मैं इसी आलम में एक रोज़ शाम के वक्त शेव कर रहा था कि बाज़ार में यकायक क्यामत का एक हंगामा शुरू हो गया और हर तरफ से मारो मारो की आवाज़ आने लगी। मैं बरामदे में जाकर सोचने लगा कि यह मामला क्या है। इतने में किसी ने ज़ोर ज़ोर से मेरे फ्लैट का दरवाज़ा खटखटाना शुरू कर दिया। मैंने भरी सोडे की बोतल हाथ में लेकर दरवाज़ा खोल दिया। दरवाज़ा खुलते ही एक जानी पहचानी सूरत के हिन्दू ने बड़ी घबराहट के साथ कहा मिस्टर जोश आप यहां से फौरन किसी मुस्लिम मुहल्ले में चले जाएं। किसी ने महात्मा गांधी को गोली मार दी है। हिन्दुओं का ख्याल है कि यह काम किसी मुसल्मान का है। मैं अपने बाल बच्चों और बोतलों को लेकर अपनी बेटी की सहेली रिफअत के मकान में जा भिंडी बाज़ार में या चला गया। वहां पहुंचा तो रेडियो पर जवाहरलाल का यह एलान सुना कि महात्मा गांधी को एक हिन्दू मरहठे गोडसे ने गोली मारकर हलाक कर दिया है। अगर जवाहरलाल इस ऐलान में पांच मिनट की भी देर कर देते तो लाखों मुसलमानों का कत्ल कर दिया जाता। दूसरे दिन मैं अपने फ्लैट में आ गया। ज़िन्दगी तंगदस्ती में गुज़रने लगी। एक दिन मैंने देखा कि बीवी बहुत उदास बैठी है। पूछा क्या बात है। कहने लगी मेरे पास जो रुपया था अब वह मुनकिया भर रहा है। जल्दी कोई मुबीता करो नहीं तो, खुदा न करे, धड़ाधड़ फाके होने लगेंगे।

बीवी की इस उदासी पर मेरा दिल भर आया। दूसरे कमरे में लेटकर सो गया। जब आंख खुली तो देखा कि मेरा दामाद अल्ताफ एक अखबार

लिए आ रहा है। उसन अखबार देकर कहा "मामू, सरकारे हिन्द का अपने रिसाले 'आजकल' क लिए एडीटर की जरूरत है। आपके वास्ते यह बेहतरीन मौका है। आप फौरन दरख्वास्त रवाना कर दें और प० जवाहरलाल नेहरू के पास उसकी नकल भेज द।' मैंने कहा, 'बेटा दरख्वास्त तुम लिख लाओ मैं दस्तखत कर दूगा। दामाद थोडी देर म दरख्वास्त लिखकर आ गया और वह दिल्ली भेज दी गई।

इसके दूसरे-तीसरे दिन इत्तफाक से प० जवाहरलाल नेहरू और मौलाना अबुल कलाम दोनो बम्बई आ गए। मैंने इस एक अच्छा शगुन समझा और सीधा गवनमट हाउस पहुच गया। मालूम हुआ कि पडित जी और मौलाना कही बाहर गए हुए है और एक घटे म पलट आएग।

जी म आया कुवर महाराजसिंह से क्या न मिल लू और खाली बठकर इन्तजार क्यो करू। पर्चे पर अपना नाम लिखकर भेजा। उन्होंने फौरन बुला लिया और पूछा 'खा साहब आप यहा कहा?' मैंने कहा, 'मैं तो आजकल बम्बई ही म रहता हू।' उन्होंने कहा 'और फिर भी मुझसे कभी नही मिले?' मैंने कहा 'मैं इस वक्त पडित जी से मिलने आया था। वह मौजूद नही, इसलिए आपसे मिलने आ गया हू।' मगर फौरन ख्याल आया कि मन बडी बतुकी बात कही है। यह सोचकर मैं झेंप गया। महाराज सिंह बडे जहीन आदमी थ भाप गए और मुसकराकर कहने लगे आप पठानो की यही बात तो मुझे बहुत अच्छी लगती है कि जो बात आपके दिल मे होती है वही झट-से जबान पर आ जाती है। मैंने कहा मैं अपनी बदहवासी की माफी चाहता हू। उन्होंने कहा मैं जिस बात की दिल से कदर करता हू आप उसकी माफी चाह रहे है। उसी वक्त मौलाना आगे आगे और पडित जी पीछे पीछे उनके कमरे म दाखिल हुए। मौलाना न फक्त हाथ मिलाया और पडित जी लपककर मेरे गले लग गए और छूटते ही पूछा— जोश साहब आजकल आप क्या कर रहे है? मैंने कहा, पडित जी आजकल के लिए दरख्वास्त देकर उसका इतजार कर रहा हू। पडित जी ने मुसकराकर कहा, यह 'आजकल' की उलट फेर मेरी समझ म नही आई। मौलाना आजाद न लाल बुझक्कड बनकर कहा मालूम होता है कि जोश साहब ने हमारे सरकारी रिसाले आजकल का जो इश्तहार निकला है उसकी इदारत के वास्ते दरख्वास्त दी होगी। पडित जी ने कहा 'तो फिर छठे रोज आप दिल्ली आ जाए मैं बदोबस्त कर दूगा।

मौलाना आजाद न कहा पडित जी यह महकमा सरदार पटेल का है। आप सोच समझकर जोश साहब को दिल्ली बुलाए। पडित जी न कहा जोश साहब हमारे कधे स कधा मिलाकर ब्रिटिश सरकार स लड चुके है। पटेल को भी यह बात मालूम होगी और अगर नही मालूम होगी तो मैं उन्हें बता दूगा। आप बडे इत्मीनान के साथ दिल्ली आ जाए।

१६

हिजरत

आजकल का सम्पादन संभालने के बाद एक रोज पण्डित जी से मिलने गया, तो उन्होंने पूछा कि अपने महकमे के वज़ीर सरदार पटेल से अब तक मिले कि नहीं। मैंने कहा, 'नहीं, और न मिलने का इरादा ही है।' पंडित जी ने पूछा, 'क्यों?' मैंने अंग्रेज़ी में जवाब दिया कि उनका चेहरा मुजरिमों का सा है।

पंडित जी ने बड़ा ज़बरदस्त कहकहा लगाया और फिर मुझसे कहा, 'नहीं-नहीं, आपको उनसे ज़रूर मिलना चाहिए। मैं फोन पर अभी आपकी मुलाकात तय किए लेता हूं।' उन्होंने फोन किया। जवाब आया कि अभी रवाना कर दीजिए। मैं उनकी कोठी पर पहुंचा। वह धोती बांधे बरामदे में खड़े हुए थे। मैंने हाथ मिलाते ही उनसे कहा, 'सरदार साहब, मुझे आपसे मिलने का एक खास वजह से बड़ा इश्तियाक था।' वह बड़े घाघ आदमी थे। खास वजह सुनकर भांप गए और पूछा, 'आपको मुझसे मिलने का क्या इश्तियाक था?' मैंने कहा, 'इसलिए कि मैं आपकी बहुत-सी बुराइयां सुन चुका हूं।'

वह मुझे कमरे में ले गए। बैठते ही उन्होंने अंग्रेज़ी में कहा, 'आपने यह सुना होगा कि मैं मुसलमानों का दुश्मन हूं। आप जितने भयंकर स्पष्टवादी हैं उतना ही मैं भी [redacted]। इसलिए आपसे साफ-साफ कहता हूं कि मैं आपके-से उन तमाम मुसलमानों की बड़ी इज़्ज़त करता हूं जिनके खानदान बाहर से आकर यहां आबाद हो गए हैं। लेकिन मैं उन मुसलमानों को पसंद नहीं करता जिनका ताल्लुक हिन्दू कौम के शूद्र और नीच जातों से था। मुसलमानों की हुकूमत के असर में आकर उन्होंने इस्लाम कबूल कर लिया था। ये लोग दरअसल बड़े मुतास्सिब, शरीर और फिसादी हैं। और कम गिनती में होने के बावजूद ज़्यादा गिनती के हिन्दुओं को दबाकर रखना चाहते हैं।'

मैंने कहा, 'सरदार साहब, पहली बात तो यह है कि दुनिया के तमाम इन्सान एक नस्ल के हैं। मैं जात-पात का बिल्कुल कायल नहीं। दूसरी बात यह है कि अगर आज से दो-तीन सौ बरस पहले किसी के परदादा का परदादा चमार था तो क्या आपका ख्याल है कि उसकी औलाद में आज तक कोई तब्दीली नहीं हो सकी है? वह आज तक चमार ही चला आ रहा है?' इस बात का वह जवाब देने ही वाले थे कि उनके सेक्रेटरी ने आकर कहा, 'आपने महाराजा पटियाला को यह टाइम दिया था। वे आ गए हैं।'

सरदार की बात। मैं अभी निकला ही था कि मौलाना आज़ाद से मुठभेड़ हो गई। उन्होंने अपनी मोटर रोककर मुझे आवाज़ दी। जब मैं अपनी मोटर से उतरकर उनकी मोटर में बैठ गया, उन्होंने मुझे बड़े ग़ौर से देखकर कहा, 'जोश साहब, आप और सरदार पटेल!' मैंने सर झुका लिया और मैं

सोचने लगा कि हमने अपने मुल्क को इतनी कुर्बानियां देकर क्या यह दिन देखने के लिए आजाद करवाया था कि अंग्रेज के जाते ही उर्दू का बेडा गर्क हो जाए और मुसलमानों के मुंह पर हवाइयां उडने लगें। कान मे दतिया रियासत के वजीरे-आजम काजी अजीजुद्दीन की आवाज आई कि जोश साहब हम न कहते थे कि हिन्दुस्तान आजाद हो गया तो हिन्दू मुसलमानों को तहतेग कर डालेंगे ? इसके साथ ही यह ख्याल भी आया कि पाकिस्तान बनानेवालों ने यह क्यों नहीं सोचा कि जो मुसलमान हिन्दुस्तान में रह जाएंगे उनका हश्र क्या होगा। वे एक एक मुसलमान को पाकिस्तान क्यों नहीं ले गए ? फिर मैंने अपने को इस उम्मीद से तसल्ली दी कि नफरत की उम्र ज्यादा नहीं होती। चार दिन में ये तास्सुबात खत्म हो जाएंगे और सोशलिस्ट हुकूमत कायम हो जाएगी। फिर ये सारी तफरीकें मिट जाएगी और दीनी बिरादरी खत्म होकर इंसानी बिरादरी के दौर की शुरुआत हो जाएगी—

यह एक शब की तडप है सहर तो होने दो
बहिश्त सर पे लिए रोजगार गुजरेगा।
फिजा के दिल में परअफ्शां हैं आरजूए-गुबार
जरूर इधर से कोई शहसवार गुजरेगा।

१९५५ में जब एक मुशायरे के सिलसिले में मैं तीसरी बार पाकिस्तान गया तो हरचंद उससे पहले भी मेरे पुराने दोस्त सयद अबूतालिब नक्वी चीफ कमिश्नर कराची मुझे पाकिस्तान आ जाने की दावत दे चुके थे लेकिन इस मर्तबा तो वह पंजे झाडकर मेरे पीछे पड गए।

मैं पाकिस्तान आने पर बिल्कुल तैयार नहीं था लेकिन साफ इनकार नहीं किया कि नक्वी का दिल न टूट जाए। और यह कहकर टाल दिया कि मैं इस मसले पर गौर करूंगा।

इसी बीच में उन्होंने अपने घर पर मजलिस की। शहर के बडे-बडे लोगों के साथ सिकन्दर मिर्जा को भी बुलाया और सबको मेरा मुसद्दस 'हुसनो इन कलाब' सुनवाया। उन तमाम लोगों ने जिनमें सिकन्दर मिर्जा भी शामिल थे, मुझसे आग्रह किया कि मैं पाकिस्तान का बाशिंदा बन जाऊं। उनकी दावत पर हरचंद मैंने अपने दिल में तो यह कहा कि खुदा की कसम मैं ऐसा हरगिज नहीं करूंगा। लेकिन जबान से यह कहा कि मैं भी यही सोच रहा हूं। अब नक्वी का यह तकियाकलाम हो गया कि जोश साहब, आखिर आप कब तक सोचेंगे ?

इसी बीच में वह एक रोज मट्रोपोल आ गए और मुझसे कहा कि सारे काम छोडकर आज आपके पास इसलिए आया हूं कि आपसे पाकिस्तान आने का इकरार लेकर दम लूं।

मैंने कहा नक्वी साहब, आपको मालूम है कि मुझे आपसे किस कदर मुहब्बत है। अगर आप मेरी जान तक मांगें तो हाजिर कर दूं। लेकिन

नक्वी साहब ने कहा कि देखिए 'लेकिन' के बाद इनकार न कर दीजिएगा। मैं चुप हो गया। वह अपना सोफ़ा छोड़कर मेरे सोफ़े पर आकर बैठ गए और कहने लगे 'फ़रमाइए आप पाकिस्तान कब आ रहे हैं।' अब जी कड़ा और आँखें नीची करके मैंने कहा 'नक्वी साहब जब तक पंडित जवाहरलाल नेहरू ज़िन्दा हैं मैं पाकिस्तान क्योंकर आ सकता हूँ?'

उन्होंने मेरे कंधे पर हाथ रखकर पूछा 'और नेहरू के बाद क्या होगा यह भी कभी सोचा है?' मैंने कहा 'खुदा न करे मैं उनके बाद ज़िन्दा रहूँ।' उन्होंने कहा कि शायर की यह बड़ी कमबख़्ती है कि वह ज़िन्दगी के संगीन मसाइल को भी जज़्बात की तराज़ू में तौला करता है। मैं आपसे पूछता हूँ कि अगर नेहरू साहब आपकी ज़िन्दगी में सिधार गए तो फिर हिन्दुस्तान में आपको चाहने वाला कौन रह जाएगा? आपकी यह नौकरी, आपकी यह फ़राग़त व इज़्ज़त क्या उनके बाद ख़त्म नहीं हो जाएगी? थोड़ी देर के वास्ते यह भी फ़र्ज़ कर लीजिए कि नेहरू के बाद भी हिन्दुस्तान आपको सर आँखों पर बिठाए रहेगा लेकिन यह भी तो सोचिए कि आपके बाद वहाँ आपके बच्चों का क्या हश्र होगा? देखिए जोश साहब आपके बाद हिन्दुस्तान में आपके बच्चे दर दर मारे फिरेंगे और एक आदमी भी उनके सर पर हाथ नहीं रखेगा। यहाँ तक तो मैं आर्थिक पहलू पर बात कर रहा था। अब ज़रा तहज़ीबी पहलू पर भी निगाह डालिए, यह उससे भी ज़्यादा जानलेवा साबित होगा। जोश साहब, आपके बच्चे उर्दू भूल जाएँगे। हिन्दी उनका ओढ़ना बिछौना होगी। वे आपके कलाम का तर्जुमा हिन्दी में पढ़ेंगे। और तहज़ीबी, रवायती और सक़ाफ़ती (सांस्कृतिक) एतबार से आपकी पूरी नस्ल में इस क़दर ज़बरदस्त तब्दीली आ जाएगी कि आपसे उसका किसी क़िस्म का भी ताल्लुक़ बाक़ी नहीं रह जाएगा। अगर आप यहाँ न आ गए तो क्या उसके यह मानी नहीं होंगे कि आप अपनी वक़्ती फ़राग़त व इज़्ज़त की क़ुर्बानगाह पर अपने पूरे ख़ानदान की भेंट चढ़ा देने पर तुले हुए हैं।

उनकी इस तवील जज़्बाती और मंतिक़ी (तर्कपूर्ण) तक़रीर ने मेरा दिल हिला दिया और मेरी आँखें खोल दीं और मैं सोचने लगा कि मेरे बाद मेरे ये नाज़ के पाले बच्चे और मेरी यह शाहाना मिज़ाज रखनेवाली बीवी क्या करेगी। नक्वी साहब से मैंने कहा 'आपने मुझे झंझोड़कर जगा दिया। बेशक मेरी आल औलाद हिन्दुस्तान में पनप नहीं सकेगी। नक्वी साहब मुझे चौबीस घण्टे और दे दीजिए कि मैं इस मसले पर एक बार और ग़ौर कर लूँ। कल इसी वक़्त आपकी ख़िदमत में हाज़िर होकर अपना आख़िरी फ़ैसला सुना दूँगा।'

नक़वी के चले जाने के बाद मैंने नासिर अहमद ख़ाँ से कहा कि तुमने सुन ली नक्वी साहब की सारी तक़रीर अब क्या कहते हो? नासिर ने कहा कि मुझे उनके एक एक हर्फ़ से इत्तफ़ाक़ है। अगर आप यहाँ न आए तो ज़िन्दगी भर

के लिए पछताएंगे। यह कहते ही नासिर मेरे करीब आकर बैठ गए और बड़े वलवले के साथ अंगुली हिलाते हुए कहने लगे 'खां साहब आप कई पुश्तों से मलीहाबाद पर हुकूमत करते चले आ रहे हैं। आपकी रिआया आपके सामने थराती और झुक झुककर सलाम करती है। कल उसी की कोठी रिआया के बच्चे आपके बच्चों पर हुकूमत करेंगे उन्हें धोतियां बंधवाएंगे और उनके सरों पर चोटियां रखाएंगे। अल्लाह करे ये दिन देखने से पहले हम मर जाएं।

सुबह उठकर मैंने इस मसले पर दोबारा गौर किया। नहा धोकर नक्वी साहब के पास गया और उनसे कह दिया कि अब मैं हिजरत पर तैयार हो गया हूं। नक्वी की बाछें खिल गईं दौड़कर मुझे गले लगा लिया और उसी वक्त डिपुटी कमिश्नर को तलब करके हुक्म दिया कि जहांगीर रोड पर जो एक बहुत बड़ा प्लाट खाली है उसे जोश साहब के नाम अलाट कर दीजिए। उसपर उनका सिनेमा हाल और मकान तैयार किया जाएगा। और फलां मुकाम पर पचास एकड़ जमीन भी जोश साहब को अलाट कर दीजिए वहां उनका बाग लगवाया जाएगा।

जब उनके हुक्म की तामील हो गई तो दोनों जमीनों पर मुझे कब्ज़ा दे दिया गया और मेरे चौकीदार झोपड़ियां डालकर वहां रहने लगे।

नक्वी साहब ने कहा आप दिल्ली जाकर इमर्जेंसी सर्टीफिकेट पर अपने बाल बच्चों को यहां ले आइए। आपके आते ही सिनेमा की तामीर का काम शुरू करा दूंगा। साथ ही उन्होंने अपने सक्रेटरी रवानी साहब को बुलाकर मेरे मकान की तलाश के लिए कहा। उन्होंने सिंध मुस्लिम हाउसिंग सोसाइटी में एक अच्छी सी कोठी मेरे हवाले कर दी और मैं दिल्ली परवाज़ कर गया।

दिल्ली पहुंचा, मालूम हुआ पंडित जी बाहर गए हुए हैं दो-तीन दिन में आएंगे। सीधा मौलाना के पास गया। मौलाना किसी अखबार में यह पढ़ चुके थे कि हिन्दुस्तान के एक शायर पर पाकिस्तान डोरे डाल रहा है। उन्होंने छूटते ही मुझसे कहा शायद आप ही वह शायर हैं जिस पर पाकिस्तान डोरे डाल रहा है? मैंने कहा जी हां मौलाना मैं वही शायर हूं।' मैंने अपनी सारी कहानी बयान कर दी, नक्वी साहब की तकरीर के एक एक लफ्ज़ को दोहरा दिया और फिर उनसे पूछा "अब आपकी क्या राय है मौलाना ?"

उन्होंने चन्द सवाल करके जब मामले के हर पहलू को समझ लिया तब कहा, आपका हिजरत कर जाना हरचन्द हमारे वास्ते पशेमानी व सरगरानी का बाइस होगा लेकिन जहां तक आपके बच्चों के मुस्तकबिल का सवाल है, मेरी राय है कि आप हिजरत कर जाएं। नक्वी ने यह सच कहा है कि नेहरू के बाद यहां आपका कोई पूछनेवाला नहीं रहेगा। आप तो आप, खुद मुझे कोई नहीं पूछेगा। मैं हर मामले को मंतिकी तौर पर देखने का आदी हूं।

लेकिन जवाहरलाल शरीफ जजबाती आदमी हैं वह आपकी हिजरत पर किसी तरह आमादा नहीं होंगे।

तीसरे दिन यह सुनकर कि पंडित जी आ रहे हैं मैं पालम के हवाई अड्डे पर पहुच गया। वह उतरे तो मैंने उनसे कहा कि मुझे आपसे एक जरूरी बात कहना है और आज ही। उन्होंने कहा, तो फिर अभी मेरे साथ चलिए। जब उनके घर आकर मैंने अपना कुल माजरा बयान कर दिया और यह भी बता दिया कि मौलाना आजाद की इस बारे में क्या राय है तो चेहरे पर तीव्र पीडा के चिन्ह प्रकट हुए और कहा जोश साहब आपने मुझे बडी मुश्किल में डाल दिया है। अगर हिन्दू की तगदिलाना हुकूमतनी यह सूरत हाल पैदा न कर देती तो आपके दिल में वतन छोडने का कभी खयाल ही पैदा न होता, लेकिन यह मामला बहुत नाजुक है। मुझे सोचने के लिए दो दिन का वक्त दीजिए। मैं खुद भी गौर करूगा और मौलाना से भी राय लूगा।

दो दिन के बाद जब मैं पहुचा तो मैंने उनके दिल माह लेनेवाले चेहरे पर वह शगुफ्तगी देखी जो किसी जेहनी गिरह के सुलझा लेने के बाद पैदा हुआ करती है। उन्होंने बडे उल्लास के साथ निगाह ऊपर उठाई, एक मृदु मुस्कान होठों पर मचलने लगी और उन्होंने कहा जोश साहब आपके मामले का ऐसा अच्छा हल निकाल लिया है कि जिसे आप भी पसद करेंगे। क्यों साहब यही बात है न कि अपने बच्चों का आर्थिक और सांस्कृतिक भविष्य सवारने के लिए पाकिस्तान जाना चाहते हैं? मैंने कहा 'जी हा इसके सिवा और कोई बात नहीं है। उन्होंने कहा तो फिर आप ऐसा करें कि अपने बच्चों को पाकिस्तानी बना दें लेकिन आप यहीं रहें और हर साल पूरे चार महीने पाकिस्तान में रहकर आप उर्दू की खिदमत कर आया करें। भारत सरकार आपको हर साल पूरी तनख्वाह के साथ चार महीने की छुट्टी दे दिया करेगी।

पंडित जी की इस तजवीज पर मैं उछल पडा। मैंने कहा 'यह तजवीज मुझे दिल से मजूर है। इस तरह साप भी मर जाएगा और लाठी भी नहीं टूटेगी। पंडित जी मेरी मजूरी से बेहद खुश होकर मेरे गले लग गए।

दूसरे ही दिन अखबारवालों ने मुझे घेर लिया। मैंने वह तमाम मामला जो मेरे और पंडित जी के दरम्यान हुआ था, बयान कर दिया और तीसरे ही रोज मेरा इटरव्यू हिंदुस्तान के तमाम अग्रेजी और उर्दू अखबारों में छप गया।

पाकिस्तानी शहरीयत

मैं पाकिस्तान आया तो नक्वी साहब ने मेरी खुशी पर पानी फेर दिया। उन्होंने कहा कि यह क्योंकर हो सकता है कि आप पाकिस्तानी बाशिंदे न बनें और यहां जमीन का अलाटमेंट आपके नाम हो जाए। हम आपके बच्चे आप की निस्बत में प्यारे हैं। जब आप ही हमारे न बन सकेंगे तो हमारे वास्ते नामुमकिन हो जाएगा कि हम आपके वास्ते सिनेमा बनवाएं या बाग लगवाएं। इसके अलावा यह सूरत हाल आपको कहीं का भी न रहने देगी। पाकिस्तानी आपको हिंदुस्तानी समझेंगे और हिंदुस्तानी आपसे इसलिए बदगुमां हो जाएंगे कि आपका पूरा खानदान पाकिस्तानी बन चुका है और खुद आप भी चार महीने पाकिस्तान में रहेंगे। जोश साहब दो किश्तियों में पांव रखकर दरिया को पार नहीं किया जा सकता। आपका भ्रम दोनों मुल्कों से उठ जाएगा। मेरे दिल को नकवी की इस बात से बड़ा धक्का लगा। लेकिन चूंकि बात थी बावन तोले पाव रत्ती की इसलिए तर्क के सामने हथियार डाल दिए और मैं पाकिस्तानी बन गया।

मेरे पाकिस्तानी बनते ही एक क्यामत का गुलगुला बरपा हो गया। पूरे पाकिस्तान में और शहर कराची में तो इस कदर वल्वला उठा, गोया क्यामत का सूर[1] फूंक दिया गया है। तमाम छोटे-बड़े उर्दू अंग्रेजी अखबारों के एडीटर खम ठोककर मैदान में आ गए। तमाम अदीब शायर और कानूनसाजों ने अपने-अपने कलमों की तलवारें म्यान से निकालकर मेरे खिलाफ मजमून-कत और कार्टूनों की भरमार कर दी।

हर तरफ मंडियों का-सा एक गुलगुला बुलन्द हो गया कि दोहाई सरकार की मुगल-आजम यानी अबूतालिब नकवी ने जोश को आधा पाकिस्तान काटकर दे दिया। मुख्तलिफ टोलियों में बटे हुए लोग मेरे खिलाफ इकट्ठे हो गए। वहाबियों बरेलियों देवबंदियों कादियानियों सुन्नियों और शीईओं ने अपनी चौदह सौ बरस की नफरतों को यकसर भुला दिया। तबर्रा[2] और मदह सहाबा[2] के दरम्यान तरह मसालहत पड़ गई और मेरे खिलाफ मुत्तहिदा तौर पर ऐलान-जंग फरमा दिया—

मैं चमन में क्या गया गोया दबिस्तां खिल गया।

---

१ इस्लाम के मुताबिक क्यामत के दिन सूर यानी बिगुल बजेगा और तमाम मुर्दे कब्रों से उठ खड़े होंगे।

२ हजरत मुहम्मद को जिन लोगों ने देखा था उनमें हजरत अली के अलावा शिआ बाकी सबकी बुराई करते हैं इसे तबर्रा कहते हैं। सुन्नीसे शिआ का भी तबर्रा कहा जाता है। हजरत मुहम्मद को जिन्होंने देखा उनकी तारीफ करना याना सुन्नी।

मेरा पाकिस्तान आना ऐसा मालूम हुआ गोया चंद ज़बरदस्त डाकू बाज़ों के गिरोह पर टूट पड़ा है या शामत अनुसिया के महल में कूद पड़ा है और तमाम पजारी कन्याएं हाय अल्लाह हाय अल्लाह के नारे लगा लगाकर भाग रही हैं। यह तमाम शोर व तमाम गुलगपाड़ा व तमाम धमाके और ये सारी गुस्ताखियां तब हरकत में आ गईं जब पहुंचा तो यह मकानात काज़ी साहब ने दबाव डालकर ले लिया। जिस वक्त मैंने यह खबर देखी कि मेरे बाग और गिलाफ़ की ज़मीन दबाकर काज़ी साहब एक बड़ी मुसीबत में फिर गए हैं तो मैंने फ़ौरन से बाग और गिलाफ़ का कब्ज़ा वापस कर लिया।

उस ज़माने में चौधरी मुहम्मद अली साहब प्रधान मंत्री थे। राजा साहब की उनसे दोस्ती हो गई। काज़ी ने सिकन्दर मिर्ज़ा के बल बूते पर प्रधान मंत्री से टक्कर ली थी। सिकन्दर मिर्ज़ा ने काज़ी से मुंह मोड़ लिया और काज़ी की गिरफ्तारी अमल में आ गई। उनके पतन ने मेरी कमर तोड़ दी। मैं इधर का रहा न उधर का।

मैंने सोचा हिन्दुस्तान वापस जाऊं मगर ने इजाज़त नहीं दी। मैंने दोस्तों से पूछा कि क्या साहब अब क्या होगा? दोस्तों ने कहा—हिम्मत न हारो।

लोगों ने राय दी कि मैं हुकूमत से आयात निर्यात का लाइसेंस लेकर व्यापार शुरू कर दूं। मुझ गावदी की समझ में यह बात नहीं आई कि मैं तिजारत के अहल न था। मैंने दौड़ना शुरू कर दिया। इस दौड़ धूप में ज़िन्दगी अजीरन हो गई। रोज़ सुबह को घर से निकलता दोपहर को पलटता थोड़ी देर आराम करके फिर बाहर निकल जाता और शाम को वापस आता था।

मेरा आलम उस गाजेवाले के अलम (पताका) का सा हो गया था जो मुहर्रम के ज़माने में उठाया जाता ढोल-ताशा की तरखड़-तरखड़ झम्मम झम्मम की गूंज में हर मकान के चबूतरे पर रखा जाता और इसी तरह दिन भर चक्कर काट काटकर फिर उसी तरखड़ तरखड़ और झम्मम झम्मम के साथ मकान में लाकर रख दिया जाता है। इस दौड़ धूप में खुदा के फ़ज़लो करम से कुछ हाथ तो आया नहीं अलबत्ता डायरेक्टरों सेक्रेटरियों और वज़ीरों के ऐसे दो दो कौड़ी के नखरे ऐसे आढ़े ठस्से और इस क़दर ग़ैरशरीफ़ाना गंदा भीरूपन देखे कि आदमी का वक़ार नज़रों से गिर गया। यह फ़ैसला करना पड़ा कि इस क़ौम में किसी साहबे क़लम की कोई गुंजाइश नहीं है और हर अदीब और शायर को चाहिए कि वह खुदकुशी फ़रमा ले। यह सच है कि बाज़ औक़ात हिन्दू हुक्काम भी नखरे दिखाते हैं लेकिन अल्लाहु अकबर यह मुसलमान जब हेड कान्स्टेबल हो जाता है तो हामान व फ़िरऊन बन जाता है और हुकूमत की गद्दी पर बैठकर ख़िदमतगारों और फेरीवालों के लड़के भी अपने को कैसर व दारा समझने लगते हैं। अल्लाह कमीनों के दर पर लिखनेवाले को न ले जाए। अब मेरी मुसलसल नाकामियों की फ़ेहरिस्त मुलाहिज़ा फ़रमाइए—

१ जहाँगीर रोड का सिनेमा-प्लाट और बाग लगाने की जमीन खुद मैंने वापस कर दी।

२ एक सामाजिक का सिनेमा-प्लाट नीलाम में मेरे नाम छूटा, कीमत अदा न कर सका इसलिए निकल गया।

३ काश्तकारी के लिए हाशिमी साहब डिपुटी कमिश्नर कराची ने पचास एकड़ जमीन दी अल्ताफ गौहर साहब ने उसे जब्त कर लिया।

४ साइकिल रिक्शाओं के परमिट मिले निरस्त हो गया—परमिट हवा में उड़ गए।

५ कोल्ड स्टोरेज की इजाजत मिल गई। रुपया लगानेवाला को बदगुमा दिया गया।

६ वाजिद अली शाह कण्ट्रोलर रूट पर बस देने पर आमादा थे रुपया लगानेवाले को रोक दिया गया।

७ बीड़ी के पत्ता का लाइसेंस मिल रहा था। लाइसेंस देनेवाले के नखरे बरदाश्त न कर सका। उसे बुरा भला कहकर घर आ गया।

८ सिनेमा के साज-सामान का दूसरे दिन परमिट मिल रहा था, वजीर को हटा लिया गया।

९ टेक्सटाइल का इजाजतनामा मिलनेवाला था—वजीर बदल गया।

१० प्रेस लगाने का इजाजतनामा लिखकर तैयार हो गया—दस्तखत करने से पहले वजीर को निकाल दिया गया।

११ मछली की तिजारत का परमिट लिख लिया था—सेक्रेटरी को हटा दिया गया।

१२ पट्रोल पम्प की कोशिश की, असफल रहा।

१३ एक मकान अलाट हुआ था आज तक कब्जा न मिल सका।

१४ ग्राम विकास विभाग में नौकरी की दरख्वास्त दी, मंजूर नहीं हुई।

१५ अपनी किताबें छपवानी चाहीं कोई प्रकाशक तैयार नहीं हुआ।

१६ फिरीयर हॉल के एक बाग में रेस्तोराँ खुलवाने का पक्का वादा किया गया—अफसर का तबादला हो गया।

१७ सिंधी अदबी बोर्ड में एक इल्मी काम लिया उजरत नहीं मिली।

१८ पुनरावास के एक अफसर ने एक मकान की जमीन अलाट कर दी मगर चलते वक्त वह खड़े नहीं हुए। अलाटमेंट का पुर्जा फाड़कर उनके सामने फेंक दिया।

१९ पंजाब के मुख्य मंत्री फजलइलाही साहब एक कारखाने का परमिट दे रहे थे कि उसी रोज फौजी इनकलाब आ गया और उनके मंत्रिमंडल ने दम तोड़ दिया—अलगरज—

जिस जगह हमने बनाया घर सड़क में आ गया।

इन मसलसल नाकामियों से मैं चकरा गया। मायूसी और इहसास गहरा

होता चला गया। तनख़्वाह जो एक हज़ार रुपया माहवार थी वह इस क़दर कम थी कि मेरा घर चल नहीं सकता था। इसलिए आजकल दोस्तों के ज़रिए से उधार पर उधार काम चलने लगा।

मैं ने सोचा कि यह काग़ज़ की नाव कब तक चलेगी। डॉक्टरों ने कहा कि शराब कम कर दो। उनकी सलाह में आकर शराब छोड़ दी। शराब छोड़ने के बाद मेरा उस वक़्त का सा आलम हो गया जिसका ज़िक्र सुना किया जाता है। शराब की जगह मैं दवा पानी के लिए शाम से खाना खा लिया करता था। लेकिन तबीयत में कमी न आती थी। जी बेचैन था। दिमाग़ उठा करता था कि शराब की तलब बढ़ न जाए। दिमाग़ की नसें नागिनों की मानिंद रेंगा करती थीं और आँखों के दायरे में बिच्छू डंक उठाए नज़र आते थे।

गड़गड़ाकर बिस्तर पर लेट जाता और करवट पर करवटें बदलता था लेकिन नींद किसी तरह भी नहीं आती थी और तमाम जिस्म में गुज़री होने लगती थी। घंटा खुर-खुर घुमाया करता था और जिन्दगी की बनी हुई दुम के मानिंद रात रात भर तड़पता रहता था। सुबह जब मैं हजामत बनाने के वास्ते आइने के सामने बैठता तो अपना बदहाली का रोग हुआ तनय वाला मुँह देखा नहीं जाता था। अपनी शक्ल देखकर ऐसा मालूम होता था कि कोई थौनड जिस्म के मसरीन शाह दिल्ली की जामा मस्जिद की सीढ़ियों पर बैठ दांत निकाल निकालकर भीख मांग रहे हैं।

अगर किसी दिन भूले से भी झपकी आ भी जाती थी तो इतने बुरे-बुरे और टूटे टूटे ख़्वाब देखता था कि बार-बार भय से आंख खुल जाया करती और घड़ी की टिक टिक दिल पर घन चलाने लगती थी।

न जाने कितने सनसनाते सील, सपाट सूने रूखे फीके डकारते डसते, फुंकारते भयानक और भभोड़ते ख़्वाब देख डाले उस ज़माने में।

उन्हीं दिनों सुहरावर्दी साहब को प्रधान मंत्री बना दिया गया। मैं इस फ़िक्र में पड़ गया कि लाईसेंस के चक्कर से निकलकर मैंने अकादमी आफ़ लैटर्ज़ का जो मसूदा तैयार किया है उसे सुहरावर्दी साहब की ख़िदमत में पेश करूं। जब मैंने अपने एक दोस्त मन्नन खां एडवोकेट से इसके मुताल्लिक़ मशविरा किया तो उन्होंने कहा कि मेरे एक बहुत अच्छे दोस्त महमूदुल्हक़ उस्मानी सुहरावर्दी साहब के ख़ासुलख़ास आदमी हैं उनसे कहूंगा कि वह आपको सुहरावर्दी साहब से मिला दें। चुनांचे एक रोज़ मन्नन खां उस्मानी साहब को लेकर मेरे घर आ गए और बात तय हो गई। दूसरे ही दिन उस्मानी साहब ने मुझे सुहरावर्दी साहब से मिला दिया। उन्होंने मेरी तजवीज़ को बहुत पसंद किया और वादा फ़रमाया कि मैं अकादमी क़ायम करा दूंगा।

लेकिन मेरी बदक़िस्मती देखिए कि दूसरे ही दिन उस्मानी और सुहरावर्दी में

ऐसा बिगाड़ पैदा हो गया कि उनका आना जाना बन्द, और मैं बे-आसरा होकर रह गया।

इसके बाद सूरत का करना यह हुआ कि बेगम शाइस्ता अकराम कराची आ गई और आफताब अहमद खां प्रधान मंत्री के सचिव बल्कि दायें हाथ बन गए। चूंकि ये लोग मुझे बहुत पहले से जानते थे इसलिए उन्होंने मेरी बड़ी मदद की।

बेगम साहबा सुहरावर्दी की रिश्ते की बहन थीं। उन्होंने मेरी कुछ इस तरह बना बनाकर तारीफ की कि सुहरावर्दी साहब, जो खुद भी एक अदबी आदमी थे, मुझ पर बहुत मेहरबान हो गए और मुझे इजाज़त दे दी कि मैं जब भी चाहूं बिला रोक-टोक उनके पास आ जाया करूं।

आफताब अहमद साहब ने भी सुहरावर्दी पर मेरा सिक्का जमाना और मेरा हाथ बढ़ाना शुरू कर दिया और मेरी तजवीज़ हरकत में आ गई।

इत्तफाक़ से मेरी खुशकिस्मती कहिए कि उसी दौरान जुबेरी साहब शिक्षा सचिव बन गए। वह निहायत पढ़े लिखे और अदब की कदर करने वाले थे मेरी मदद पर तुल गए। अपनी ज़बरदस्त सिफारिश के साथ उन्होंने मेरी तजवीज़ फिनांस (वित्त मंत्रालय) में भेज दी और मुझे मशविरा दिया कि मैं फिनांस सेक्रेटरी मुमताज़ हसन साहब से मिल लूं।

मुमताज़ हसन साहब का नाम सुनकर मैं घबरा गया।

इस घबराने के दो सबब थे। एक यह कि १९४२ में दिल्ली के एक मुशायरे में शरीक होने के सिलसिले में हमारे दरम्यान एक नाखुशगवार वाक्या पेश आ चुका था। इसलिए मैं समझता था कि देश के लाभ के किसी भी काम में मेरा साथ नहीं देंगे। दूसरे मैं सुन चुका था कि मुमताज़ साहब उस सूबे के जानी दुश्मन हैं जिसे यू० पी० कहते हैं। लेकिन मैं उनसे क्योंकर न मिलता। शादी के गुनाह के बाद बाप और नाना बन चुका था, उन सबको पालता क्योंकर? इसलिए अपनी औकात पर लानत भेजता हुआ दफ्तरे माल पहुंचा। कदम दो दो मन के हो गए। ठंडी अंगुलियों से अपना नाम लिखकर पर्चा अन्दर भेज दिया।

चपरासी ने आकर कहा कि इस वक्त एक साहब वहां बैठे हुए हैं। आप पी० ए० के कमरे में इंतज़ार करें। दिल ने कहा और आओ पाकिस्तान। खून के घूंट पिए और पी० ए० के कमरे में जाकर बैठ गया। पी० ए० साहब ने तो खड़े हुए न हाथ मिलाया, मुझे फिरऔन की तरह देखा और काम करने लगे। दिल ने कहा मुबारक हो खां साहब! पाकिस्तान की तरफ से यह इज़्ज़त-अफ़ज़ाई। जी चाहा कि कमरे से बाहर निकल जाऊं। फिर सोचा कि हम तो तारिक की तरह किश्ती जलाकर आए हैं। अब कहां जा सकते हैं?

अभी मुश्किल से छः-सात मिनट इस अंदाज़ में गुज़रे थे कि क्या देखता हूं खुद मुमताज़ हसन साहब मेरे सामने खड़े माफी मांग रहे हैं। इस गर

मामूली शराफत ने मेरे दिल को उनकी तरफ झुका लिया और बदगुमानी के लिए मैं अपने को दिल ही दिल म मलामत करने लगा।

अपने कमरे म ले जाकर उन्होंने मुझसे कहा कि आपकी जकादमी की तजवीज़ बहुत लम्बी चौडी है। अगर आप उसे सिर्फ लुग्त (कोश) तक सीमित कर दें तो फिनास उसकी मजूरी दे देगा। मुझे अपनी इस तजवीज के भिचाव पर अफ्सोस हुआ लेकिन मैं बेचारा कर ही क्या सकता था। नाचार, इसी शक्ल का गनीमत समझा। मैंने उनकी बात मान ली। उर्दू बोर्ड वजूद म आ गया। मेरी कई साल की मेहनत ठिकाने लगी।

बोर्ड बन गया तो अजुमन तरक्कीए उर्दू के सदर मौल्वी अब्दुल्हक को मेम्बर बनने की दावत दी गई। वह मुझे नापसद करते थे। इसलिए उन्होंने जवाब दिया कि अगर मुझे लुग्त का चीफ एडीटर न बनाया गया तो मैं मेम्बरी की दावत को ठुकरा दूगा।

मुमताज़ हसन साहब ने अब्दुल्हक साहब की इस जिद पर कुछ मुह बनाया लेकिन कुछ सोचकर मजूर कर लिया। अब क्या था। अब्दुल्हक चीफ एडीटर हो गए। अजुमने-तरक्कीए उर्दू के दफ्तर म लुग्त का काम होने लगा। मैंने दौड धूप करके बोर्ड के लिए जो इमारत किराये पर ली थी वहा चद क्लर्क रह गए और मैं। मुमताज़ हसन ने मुझे मुशीरे-अदब का ओहदा दे दिया सबसे ज्यादा मेरी तनख्वाह मुकर्रर की। लेकिन अब्दुल्हक ने कोई सवा या डेढ बरस तक मुझसे कोई काम ही नही लिया और मैं दफ्तर म बैठा तनख्वाह लेता, मक्खिया मारता और यह सोचता कि जिस दफ्तर को मैंने कई साल खून पसीना एक करने के बाद कायम कराया था उसी दफ्तर म मैं तुम किस बाग की मूली हो बनाकर रख दिया गया हू। बेकारी और मुफ्त की तनख्वाह दारी से तग आकर मैंने आखिर मुमताज़ साहब को लिखा कि मुझसे लुग्त-नवीसी का काम लिया जाए। जब उन्होंने मुझे इस काम पर लगा लिया तो मौल्वी अब्दुल्हक को इस कदर ताव आ गया कि वह एडीटरी और मेम्बरी दोनो से दस्तबरदारी पर आमादा हो गए।

इसके बाद बोर्ड के सेक्रेटरी शानुल्हक हक्की का मौल्वी अब्दुल्हक और शौकत सब्ज़वारी से सख्त बिगाड हो गया और गमा गम खतो किताबत का सिलसिला छिड गया। मौल्वी साहब के इतकाल के बाद लुग्त का काम बोर्ड के दफ्तर म होने लगा और हक्की साहब और सब्ज़वारी साहब म जाहिरी तौर पर समझौता हो गया। लेकिन दिलो म नफरत बाकी रही और इशा अल्लाह ता कयामत रहेगी (इसलिए कि यू० पी० वालो और दिल्ली वालो की फितरत ही यही है।)

अब हक्की साहब के दिल म मुझसे भी गिरह पडना शुरू हो गई। बर्ताव तो हमारे दरम्यान अज़ीज़ और बुजुर्ग का ही रहा लेकिन चूकि हक्की साहब का दरपर्दा यह मुतालिबा रहता है कि लोग उनके स्वरूप शुक्त रह और मैंने

उनके इस मुतालिबे को खुराक नहीं पहुंचाई। जब वह मुतालिबा मुसलसल भूखा रहने लगा तो वह सोचने लगे कि मुझे किस तरह जक पहुंचा सकते हैं। आखिरकार अल्लाह ने उन्हें वह मौका दे ही दिया।

शायद अगस्त १९६७ में छुट्टी लेकर मैं अपने मलीहाबाद के बाग़ों के फसले के लिए हिन्दुस्तान गया। इस मामले ने इस कदर तूल खींचा कि मुझे वहां चार महीने रहना पड़ा। बाग़ों और मुशायरे के सिलसिले में बम्बई पहुंचा तो ज० अमानी किसी अखबार के नुमाइंदे को लेकर इंटरव्यू के लिए आए और मेरा इंटरव्यू किसी अंग्रेज़ी अखबार में छप गया। छुट्टी खत्म होने पर जब लाहौर पहुंचा तो मुझसे कहा गया कि मेरे बम्बई के निरीह इंटरव्यू को नये-नये मानी पहनाकर यहां के अखबारों ने खूब उछाला और मुझे पाकिस्तान-दुश्मन ठहरा दिया है। मुझे यह सुनकर अफसोस तो जरूर हुआ, लेकिन ताज्जुब बिल्कुल नहीं। जब हदीस और कुरआन को अपने सांचे में ढालने के लिए बादशाहों द्वारा बदल दिया जाता है तो मेरा इंटरव्यू क्या चीज़ है। लाहौर में अखबारों के झूठ का जवाब देकर जब कराची आया तो हक्की साहब ने बड़े गुस्ताखाना अन्दाज में मुझसे पत्र-व्यवहार शुरू कर दिया। आखिर इस शरारतखाना सिलसिले को बन्द कर देने के वास्ते मैंने हक्की को लिख भेजा कि मैं जिस खानदान का सदस्य हूं और जिस मिज़ाज का आदमी हूं उस मिज़ाज का आदमी टूट तो सकता है लेकिन लचक नहीं सकता। अगर आप मेरी रोज़ी पर चोट लगाने की ठान चुके हैं तो—

निगाहे-गम में हालत हो दिल की और तबाह
अगर यही है इरादा तेरा तो बिस्मिल्लाह

मेरा इस तहरीर के जवाब में हक्की ने लिखा कि मेरी नौकरी की मुद्दत अब और नहीं बढ़ेगी। मैं दफ्तर से तालुक तोड़कर घर आ गया और हक्की के घर में घी के चिराग जलने लगे।

लेकिन इस खबर को हक्की साहब ने किसी अखबार में छपने नहीं दिया ताकि उनका पाप न खुलने पाए। जब हिन्दुस्तानी रेडियो ने मेरी बरतरफ़ी का एलान किया तो यहां के अखबारों ने बनी ढिठाई के साथ उसकी तरदीद करते हुए उल्टा उसे झूठा करार दे दिया।

मेरी नौकरी को छूटे अब एक मुद्दत गुजर चुकी है जिस रोज़ मैं हज़रत हक्क के फज़्लो-करम और हक्की साहब के कलमे-फज़ रकम से बरतरफ कर दिया गया था, उस रोज़ पूरे दिन न सही चन्द घंटे तो जरूर परेशानी रही थी। लेकिन मेरी बीवी की हिम्मत और मेरे मज़बूत इरादे ने उस वक्ती परेशानी को शामे-हाल-होने कुटनी की चोट की मानिंद भुला दिया था।

अब चूंकि वह सारा मामला रोने धोनेवाले रो चुके और हंसनेवाले हंस चुके—

एक पुराना वाक़या है खाना वीरानी मेरी।

इसके साथ-साथ चूंकि मैं अपने बुजुर्गों और अपनी इज्जत को गवाह बना कर यह कसम खा चुका हू कि मर जाऊगा लेकिन अब सरकारी मुलाजमत का गुनाह नही करूगा यानी 'खाई सो खाई अब खाऊ तो राम दुहाई', इस मजिल म अपनी पोजीशन साफ करने का इरादा करूगा तो मुझे पूरा यकीन है कि मेरे इस अमल को हुकूमत की खुशामद या मुलाजमत की आरजू नही समझा जाएगा । इसी बिना पर मैं खुल्लम खुल्ला ऐलान कर देना चाहता हू कि १९६७ के आखिर म मेरे खिलाफ जो यह प्रोपगडा फरमाया गया था कि मैं पाकिस्तान का दुश्मन या पाकिस्तान के राष्ट्रपति का मुखतलिफ हू कतई तौर पर गलत और बेबुनियाद था । हैरत है कि इस मोटी सी बात को कोई नही समझ सकता कि मैं पाकिस्तान का दुश्मन होता तो अपनी दौलत अपनी इज्जत अपनी फरागत अपने दोस्त अपने बुजुर्गों की हड्डिया से मुह मोडकर और अपने नाजबरदार जवाहरलाल नेहरू का दिल तोडकर यहा आता क्यो ?

थोडी देर के वास्ते अगर यह भी मान लिया जाए कि मुझे लालच खीच कर यहा लाया था लेकिन जब नक्वी और सिकदर मिर्जा के जवाल के बाद मुझ पर जीना दूभर हो चुका था और मेरी परशानिया का हाल सुनकर जब पडित जी ने मुझसे कहला भेजा था कि मैं पाकिस्तान को छोडकर हिदुस्तान आ जाऊ तो उस वक्त मैंने हिदुस्तान जाने से क्या इनकार कर दिया ?

अब जबकि पाकिस्तान म मैं अपना मकान भी बनवा चुका हू और यही की खाक म दफन हो जान के लिए भी आमादा हू तो किसके मुह म इतने दात हैं कि मुझे पाकिस्तान का दुश्मन कहकर अपनी खबासत और हिमाकत का ऐलान फरमा दे ।

मैं इस सियासी नफरत स भरे जमाने म जब एक मुल्क दूसरे मुल्क का अपने पेट म रख लेने पर तुला बैठा है बल्कि मुल्क ही नही एक सूबा दूसरे सूबे पर छुरी ताने खडा है यह बात किससे कहू कि मैं तमाम मानव जाति का दोस्त हू और यह कहू भी तो यकीन कौन करेगा ? लेकिन मै अपन सच को इस खौफ स दबा नही सकता कि उसे झूठ ख्याल किया जाएगा । इसलिए मैं यह कह देना चाहता हू कि अब एक मुद्दत स मेरे सीने म अबुल इसान हजरत आदम का दिल धडक रहा है । मैं इस दुनिया के हर करीबो-दूर मुल्क को अपना वतन और हर नस्ल-के इसान को अपना बच्चा समझता हू ।

जब किसी के घर म जश्न होता है तो मैं समझता हू कि वह जश्न मेरे ही घर म होता है और जब किसी के घर से कोई जनाजा निकलता है तो मैं यह महसूस करता हू कि वह जनाजा मेरे ही घर स निकल रहा है । सभी इसान एक ही किस्म के उनासर (तत्त्वों) स बने हैं जिनम सिर्फ नाम और जिस्म का फर्क है । इस दुनिया म गरियत का कही कोई नाम ही नही है । अगर किसी से नफरत या दुश्मनी करूगा तो इसके सिवा और कोई मानी भी नही हो सकते कि मैं खुद अपना ही जान स नफरत या दुश्मनी कर रहा हू —

ऐ दोस्त, दिल में गर्दे-कदूरत न चाहिए
अच्छे तो क्या बुरे से भी वहशत न चाहिए
कहना है कौन फूल से रगबत न चाहिए
काटे से भी मगर तुझे नफरत न चाहिए
काटे की रग में भी है लहू सब्ज़ाज़ार का
पाला हुआ है वह भी नसीमे-बहार का।

कुछ मित्र   कुछ रेखाचित्र

जोश ने मेरे चद वाविले ज़िक्र अहबाव' और मरे दौर की चद अजीब हस्तिया शीपका के अतगत कोई ५२ व्यक्तिया के बारे म लिखा ह। उन सबको ज्या का त्या दे देने की गुजायश नही है और उनम से बहुता का हिन्दी पाठका क लिए कोई विशेष महत्त्व भी नहीं हैं। इसलिए हमने सिफ उन लोगा को चुन लिया है जिनस या तो हिन्दी पाठक परिचित है या चरित्र अथवा स्वभाव से विशिष्ट और दिलचस्प है। जो लोग विचित्र और दिलचस्प है उनम काजी खुरशीद अहमद, वस्ल बिलग्रामी कजू खा और छदू खा उल्लेखनीय हैं। य लोग अपने दौर की नुमाइदा हस्तिया हैं।

—अनुवादक

}

१

पंडित जवाहर लाल नेहरू

वह अपनी मोहिनी सूरत के आकर्षण अपने रंग की चमक-दमक, अपनी आंखों की मुरव्वत, अपने लहजे की कड़ाई, अपने उच्चारण के नमीन, अपनी मुसकराहट की मृदुता अपनी कुल प्रतिष्ठा, अपने हृदय की असीम विशालता, अपने स्वभाव की अद्वितीय शालीनता और अपने चरित्र की बेजोड़ दृढ़ता के एतबार से एक ऐसे इंसान थे जो इस धरती पर सदियों के बाद पैदा होते हैं और जो यह आवाज़ बुलन्द कर सकते हैं—

> मत सहल हमें समझो फिरता है फ़लक[1] बरसों
> तब खाक के पर्दे से इंसान उभरते हैं।

उनका अस्तित्व हिन्दुस्तान का गौरव, एशिया की प्रतिष्ठा और समूची मानव जाति का विश्वास है। वह शरीरधारियों की दुनिया के ऐसे सजीव ताजमहल थे जिसे शामे-अवध की लालिमा और सुबहे-बनारस की उषा ने इलाहाबाद के अर्थपूर्ण संगम पर छेनियों से तराशकर तामीर किया था।

इससे पहले दो-तीन अवसरों पर उनका ज़िक्र कर चुका हूं, इसलिए उनके बारे में जो बातें बयान करने से रह गई हैं सिर्फ वही बयान करूंगा।

एक बार यह सुनकर कि वह कुम्भ के मेले में शरीक होने इलाहाबाद गए थे मेरे तन-बदन में आग लग गई। मैं गुस्से में भरा उनके पास गया और कहा "इतू ब्रूटस।"[2]

उन्होंने बड़ी हैरत से पूछा "क्या साहब मैंने वह कौन ऐसी अप्रत्याशित बात की है कि आप मुझसे इतू ब्रूटस कह रहे हैं?" मैंने कहा "पंडित जी आप तो बढ़-चढ़कर यह दावा किया करते थे कि दुनिया के किसी मज़हब से मेरा कोई ताल्लुक नहीं है और इसके बावजूद सुनता हूं कि आप कुम्भ के मेले में वहम के मारों को हवा देने की ख़ातिर इलाहाबाद तशरीफ़ ले गए थे?" उन्होंने कहा कि अगर मैं वहां पुजारी की हैसियत से जाता तो आपको हक़ था कि मुझ पर एतराज़ करते लेकिन मैं तो वहां पब्लिक माइंड (जन-स्वभाव) के अध्ययन के लिए गया था। मैंने कहा "जी नहीं आप वहां गए थे अपने वोटों

---

१ आसमान।

२ शेक्सपीयर ने अपने नाटक 'जूलियस सीज़र' में लिखा है कि सीज़र ने जब यह देखा कि उसका सबसे बड़ा दार्शनिक मित्र भी उसके हत्यारों की पंक्ति में खड़ा है तो ज़मीन उसके पैरों तले से निकल गई। आश्चर्य में भरकर उसने 'इतू ब्रूटस' कहा और अपनी तलवार फेंक दी यह ध्यान करके कि जब मेरा ऐसा अभिन्न मित्र और गम्भीर विचारक मेरे विरुद्ध हो गया है तो ज़रूर मुझमें कोई ऐसा बड़ा दोष होगा जो मेरे राष्ट्र और देश को हानि पहुंचा सकता है। उसने क़त्ल हो जाने के लिए गर्दन झुका दी।

की खातिर जनमत को प्रभावित करने के लिए।' वह जवाब देने के लिए होंठ हिला ही रहे थे कि डाक्टर काटजू आ गए। पंडित जी ने उनसे कहा, 'मिस्टर काटजू, जोश साहब मुझपर ऐतराज कर रहे हैं कि मैं कुम्भ के मेले क्या गया था।' काटजू ने कहा, 'यह तो खैर मेले की बात है, एक दिन मुझे पूजा करते देखकर जोश साहब ने मुझसे यहां तक कहा था कि काटजू साहब आप बालिग हो जाने के बावजूद पूजा करते हैं। जब मैंने इनसे पूछा था कि पूजा करना कोई बुरी बात है ? तो इन्होंने कहा था कि यह ऐसी बुरी बात है कि इसे देख कर कभी यह भी हो सकता है कि एक विचारशील व्यक्ति के मन पर ऐसी गहरी चोट लग जाए कि वह तुरत तड़पकर मर जाए। इसपर पंडित जी ने कहकहा मारकर कहा था, 'जहां तक पूजा का ताल्लुक है मैं भी जोश साहब का हम-ख्याल हूं।' काटजू का मुंह लटककर रह गया था।

देश के बंटवारे के तुरत बाद सरदार पटेल ने उस वक्त के दिल्ली के मुसल्मान चीफ कमिश्नर को, जो अलीगढ के साहबजादा आफताब अहमद खां के बेटे थे, हटाया तो नहीं था पर मौखिक आदेश द्वारा उनके तमाम अख्तियारात छीनकर उस वक्त के डिप्टी कमिश्नर मिस्टर रंधावा के सुपुर्द कर दिए थे और बड़ी धूम धाम के साथ मुसल्मान लूटे और कत्ल किए जा रहे थे। उस भयानक दौर में अगर जवाहरलाल खुलकर मैदान में न आ जाते और खौफनाक गलियों में घुस घुसकर और हिंदुओं के मुंह पर थप्पड़ मार मारकर वह उस आग को न बुझा देते तो दिल्ली में एक भी मुसल्मान जिन्दा न रहता।

उसी जमाने की एक घटना यह भी है कि दिल्ली के मुहल्ला सूईवालान में हिंदू जब एक मस्जिद के सामने से बाजे बजाते हुए गुजर रहे थे और मुसल्मानों ने उन्हें मारकर भगा दिया था तो शहर के हिंदू कोतवाल ने चौराहे पर खड़े होकर मुसल्मानों को मां-बहन की गालियां दी थीं। जब मुझे इस बात की खबर दी गई तो मैंने एक दरख्वास्त पर लोगों के दस्तखत लिए और उनसे जाकर कहा कि पंडित जी, इस खता पर कि मुसल्मानों ने कानून शिकनी की थी उनपर मुकदमा तो चलाया जा सकता था और उनकी गिरफ्तारियां भी अमल में लाई जा सकती थीं मगर कोतवाल को इस बात का कोई हक हासिल नहीं था कि वह तमाम मुसल्मानों को चौराहे पर खड़े होकर गालियां देता।

उन्होंने कहा, 'आपके पास इसका क्या सबूत है ?' मैंने कहा, 'मैं अभी वहां से आ रहा हूं। आप यह दरख्वास्त मुलाहिजा करें जिस पर हिंदुओं के भी दस्तखत हैं।'

दरख्वास्त पढ़कर वह गुस्से में कांपने लगे और टेलीफोन उठाकर जनरल पुलिस को उसी वक्त फोन पर हिदायत की कि कोतवाल को तुरन्त मुअत्तल करके उसकी तहकीकात करो और मुझे इत्तला दो।

उन्हें उर्दू जबान से बड़ी मुहब्बत थी। उन्होंने मुझसे एक दिन कहा था

कि उर्दू के बारे म मेरी जाती राय और है और मेरी गवनमट की राय और है। लेकिन मैं गवनमट पर अपनी राय थ्रस्ट (थोपना) नही करना चाहता, इसलिए कि यह मामला डेमोक्रेसी के खिलाफ है।

एक रोज लखनऊ स्टेशन पर उन्होने रेलवे अफसरो को बुलाकर बहुत बुरी तरह फटकारकर कहा कि आप लोगो न मुझे निरा जाहिल बनाकर रख दिया है। हर तरफ हिन्दी के बोड लगे हुए हैं। कुछ पता नही चलता कि यह खाने का कमरा है या लवेटरी।

एक बार पाकिस्तान से रुखसत लेकर मैं जब दिल्ली म उनसे मिला तो उन्होने बडे विद्रूप के साथ मुझसे कहा था जोश साहब, पाकिस्तान को इस्लाम इस्लामी कलचर और इस्लामी जबान यानी उर्दू की सुरक्षा के लिए बनाया गया था, लेकिन अभी कुछ दिन हुए मैं पाकिस्तान गया और वहा यह देखा कि मैं शेरवानी और पायजामा पहने हुए हू लेकिन वहा की गवनमट के तमाम अफसर सौ फीसदी अग्रेजो का लिबास पहने हुए हैं। मुझसे अग्रेजी बोली जा रही है और हद यह है कि मुझे अग्रेजी म एड्रेस दिया जा रहा है। मुझे इस सूरते-हाल से बेहद सदमा हुआ और मैं समझ गया कि उर्दू-उर्दू-उर्दू के जो नारे हिन्दुस्तान म लगाए गए थे वे सारे ऊपरी दिल से और खोखले थे। जब मैं खडा हुआ तो मैंन उसका उर्दू म जवाब दकर सबको हैरान और परेशान कर दिया और यह बात साबित कर दी कि मुझे उनके मुकाबिले म उर्दू स कहीं ज्यादा मुहब्बत है। जोश साहब, माफ कीजिए आपन जिस उर्दू के लिए अपना वतन तज दिया, पाकिस्तान म उसे कोई मुह नही लगाता। और जाइए पाकिस्तान ? मैंने शम से आखें नीची कर ली। उनसे तो कुछ नही कहा, लेकिन उनकी बातें सुनकर मुझे एक घटना याद आ गई। मैंने पाकिस्तान के एक बडे शानदार मिनिस्टर साहब को जब उर्दू म खत लिखा और उन साहब बहादुर न अग्रेजी म जवाब भेजा तो मैंन जवाबुल-जवाब म यह लिखा था कि जनाबे-वाला मैंने आपको अपनी मादरी ज़बान म खत लिखा था लेकिन आपन उसका जवाब अपनी पिदरी (बाप की) जबान म तहरीर फरमाया है—

चू कुफ्र अज काबा बरखेजद कुजा मानद मुसल्मानी।
(अगर काबा ही स कुफ्र उठने लग तो इस्लाम कहा जाए ?)

अब चद घटनाए उनकी अदबनवाजी उनकी ग़ैरमामूली शराफत और उनकी बनज़ीर नाजबरदारी की भी सुन लीजिए।

जब केंद्रीय सरकार के सूचना विभाग म मेरी नियुक्ति सरकारी रिसाले 'आजकल' म हो गई तो मैंने उन्हें खत लिखा कि मेरे पर्चे के वास्ते अपना पयाम जल्द भेज दीजिए। अगर आपने सुस्ती स काम लिया तो मेरी आपसे जबरदस्त जग हो जाएगी। एक हफ्ते के अन्दर उनका पयाम आ गया। अपने पयाम के आखिर म उन्होंने यह भी लिखा था कि मैं जल्दी म पयाम इसलिए भेज रहा हू कि जोश साहब न मुझे धमकी दी थी कि अगर देर हो गई तो वह

मुझसे लड पडेंगे। जब मैंने पयाम के मुतअल्लिक उन्हें खत लिखा तो दबी जबान से यह शिकायत भी कर दी कि आपने मेरे खत का जवाब खुद अपने हाथ से लिखने के बजाय सेक्रेटरी से लिखवाया है। मेरे साथ आपको यह बरताव नहीं करना चाहिए था।

उनकी शराफत देखिए कि मेरी इस शिकायत पर उन्होंने खुद अपने हाथ से मुझे यह लिखा कि अधिक व्यस्तता के कारण मैं सेक्रेटरी से खत लिखवाने पर मजबूर हो गया। आप मेरी इस गलती को माफ करें।

एक बार मैं उनके यहां पहुंचा तो देखा कि वह दरवाजे पर खडे किदवई साहब से बातें कर रहे हैं। लेकिन जैसे ही मैंने बरामदे में कदम रखा और उनसे आंखें चार हुई तो वह एक सेकंड के अन्दर रूपोश हो गए।

मैंने किदवई साहब से कहा कि मैं तो अब यहां नहीं ठहरूंगा। आप पंडित जी से कह दीजिएगा कि लीडरी और प्राइम मिनिस्टरी को लीडरी और प्राइम मिनिस्टरी तक महदूद रखें और उसे इस कदर न बढाएं कि वह मानवी बादशाही से टक्कर लेने लगे। किदवई साहब ने मुस्कराकर पूछा कि आप किस बात पर इस कदर बिगड गए हैं? मैंने कहा, अरे आप अभी तो खुद देख चुके हैं कि मेरे आते ही वह रूपोश हो गए हैं। मिजाजपुरसी तो बडी चीज है, उन्होंने मुझसे साहब सलामत तक नहीं की। इतने में जवाहरलाल आ गए। मैं मुंह मोडकर खडा हो गया। उन्होंने कहा, 'जोश साहब, मामला क्या है?' किदवई साहब ने सारा माजरा बयान कर दिया। वह मेरे करीब आए और मेरे कान में कहा, मुझे इस कदर जोर से पेशाब आ गया था कि अगर एक मिनट की भी देर होती तो पायजामे ही में निकल जाता। यह उज्र सुनकर मैंने उन्हें गले से लगा लिया।

एक बार कुंवर महेन्द्रसिंह बेदी ने मुझसे कहा कि मेरे वजीर श्री सच्चर ने दिल्ली से मेरा तबादला कर दिया है। मैंने कहा, 'यह श्री सच्चर है या मिस्टर खच्चर?' वह हंसने लगे, कहा, 'क्या खूब काफिया मिलाया है। तो मैं आपसे यह कहने आया हूं कि आप और बेगम पटौदी दोनों मिलकर पंडित जी के पास जाएं और मेरा तबादला रुकवा दें।

दूसरे ही दिन हम दोनों प्रधान मंत्री की कोठी पहुंचे। अपने आने की इत्तला की। बेगम पटौदी को तुरंत बुला लिया गया और मैं मुंह देखता रह गया। जवाहरलाल की इस अशिष्टता पर मुझे बडा ताव आया और यह सोचकर कि मैं वहां से उसी वक्त चला जाऊं कि उनसे फिर कभी न मिलूं, मैं उठा ही था कि उनके सेक्रेटरी शायद प्यारेलाल साहब आ गए। उन्होंने मेरी तरफ आंख उठाकर कहा, 'क्या बात है जोश साहब? इतना पानी बरस रहा है और आप आगबबूला बने खडे हैं?' मैंने उनसे सारा माजरा बयान करके कहा, 'अब मैं यहां नहीं ठहरूंगा।' सेक्रेटरी ने कहा, 'आप सिर्फ दो मिनट मेरी खातिर ठहर जाएं।' मैं ठहर गया। वह सीधे उनके कमरे में दाखिल

हो गए। और दो मिनट के अंदर-अंदर मैंने यह देखा कि वह मुसकराते चले आ रहे हैं। उन्होंने कहा जोश साहब आपके तशरीफ लाने की मुझे किसी ने इत्तला नहीं दी। आपने किससे इत्तला देने को कहा था? मैंने कहा, विमला कुमारी जी को।' उन्होंने विमला कुमारी को बुलाकर पूछा कि तुमने मुझे जोश साहब के आने की इत्तला क्या नहीं दी? विमला कुमारी ने कहा कि लेडीज़ फर्स्ट के खयाल से मैंने जोश साहब का नाम नहीं लिया। पंडित जी ने झटककर कहा नानसेंस और मेरा हाथ पकड़कर अन्दर ले गए और कहा, 'आप भी महद्रसिंह का तबादला रुकवाने के ख्वाहिशमंद हैं?' मैंने कहा, जी हां! उन्होंने जवाब दिया कि यह डेमोक्रेट उसूल के खिलाफ है कि मैं इस मामले में दखल दूं। मैंने कहा 'पंडित जी मैं जानता हूं कि आपका दिमाग मेड इन इंग्लैंड है, लेकिन कुछ अपवाद भी जरूरी होते हैं। मैं जानता हूं प्राइम मिनिस्टर से किसी के तबादले के मसूख करने का मुतालिबा ऐसा ही है जैसे हम किसी हाथी से कहें कि मेज पर से ज़रा मेरी दियासलाई उठा दो। लेकिन आज तो मैं हाथी से दियासलाई उठवाकर दम लूंगा।' वह हंसने लगे और तबादला मसूख कर दिया।

एक मर्तबा गर्मी की छुट्टियां मनाने के लिए मैं शिमले गया हुआ था। तीन चार रोज के बाद मालूम हुआ कि पंडित जवाहर लाल भी आ गए हैं। मैंने फोन किया और बदकिस्मती से रिसीवर उठाया उनके एक नये सेक्रेटरी ने जो लहजे से मदरासी मालूम हो रहा था। मैंने अपना नाम बताकर कहा कि मैं पंडित जी से मिलना चाहता हूं। आप उनसे टाइम लेकर मुझे इत्तला दें। उसने बार-बार मेरा नाम पूछा। मैंने कहा जोश मलीहाबादी। लेकिन उसकी समझ में नहीं आया। आखिर मैंने झल्लाकर कहा जे ओ एस एच।' उसने कहा मिस्टर जोश, आपका पर्टीकुलर्स? मैंने कहा जो शख्स मेरे पर्टीकुलर्स नहीं जानता उसे यह हक नहीं है कि हिन्दुस्तान में रहे। यह सुनकर उसने कहा "ओह ऐसा बोलेगा। मैंने कहा 'इससे ज्यादा बोलेगा। उसने कहा आप होल्ड किए रहे हम पंडित जी से पूछकर बताएगा।' दो मिनट के बाद उसने कहा 'पंडित जी ऐसा बोलता है कि हम यहां मजे करने आया है आप दिल्ली में मिलो।'

मेरे तन-बदन में आग लग गई। मैंने बीवी से कहा कि मैं अभी उन्हें ऐसा खत लिखूंगा कि घिरनी का नाच नाचने लगेंगे। बीवी ने कहा कि हमारे सर की कसम अभी खत न लिखो। इस वक्त गुस्से में भरे हुए हो। जाने क्या-क्या लिख मारोगे। पानी पीकर थोड़ी देर लेट जाओ।

पानी पीकर मैं लेट तो गया मगर दिल की आग भड़कती रही। जाग घंटे से ज्यादा लेट नहीं सका। बिस्तर पर अंगारे दहकने लगे। मैं उठ बैठा और ऐसा खत लिखा कि अगर उस किस्म का खत किसी थानेदार को लिख भेजता तो वह भी तमाम उम्र मुझे माफ न करता।

दूसरे दिन इन्दिरा गांधी का फ़ोन आया कि आज तीन बजे सह पहर को

मेरे साथ चाय पीजिए।मैंने कहा 'वहाँ तुम्हारे बाप मौजूद होंगे। मैं उनसे मिलना नहीं चाहता।' उन्होंने कहा, "मैं पिताजी को अपने कमरे में बुलाऊँगी ही नहीं।' मैं तयार हो गया।

शाम को जब बरामदे में पहुँचा तो एक चपरासी ने अन्दर की तरफ इशारा कर दिया। जब मैं उनके कमरे की तरफ चला तो पंडित जी ने पीछे से मेरा हाथ पकड़कर कहा आइए मेरे कमरे में। मैं ठिठककर खड़ा हो गया उन्होंने मेरा हाथ खींचा और मुहब्बत के दबाव में आकर मैं उनके साथ हो गया।

उनके कमरे में पहुँचा तो देखा मेरे बुजुर्गों के मिलनेवाले सर महाराज सिंह बैठे हुए हैं। पंडित जी ने कहा महाराज यह वही जोश साहब हैं जिन्होंने मुझे ऐसा गर्म खत लिखा कि शिमले की ठंडक में भी पसीना आ गया। महाराज सिंह ने कहा 'गनीमत समझिए कि यहीं तक नौबत आई। इनके बुजुर्गों से आप वाकिफ नहीं। वे जिस पर गर्म हो जाते थे उसे ठंडा कर दिया करते थे। पंडित जी हँसने लगे। घण्टी बजाई उस मदरासी सेक्रेटरी को बुलाया और जैसे ही उसने कमरे में कदम रखा वह उसपर बरस पड़े कि तुमने मुझसे पूछे बगैर जोश साहब को ऐसा बेहूदा जवाब क्यों दिया। मैं अभी तुम्हारा ट्रांस्फर किए दे रहा हूँ। कल से तुम मिनिस्टरी आफ कामर्स में चले जाओ।

उनका यह बर्ताव देखकर मैं पानी-पानी हो गया और उनकी बेमिसाल रवादारी और शराफत पर निगाह करके मैं उन्हें गले लगाकर रोने लगा।

अब एक आखिरी घटना और सुन लीजिए।

उनके इंतकाल से चंद महीने पहले मैं हिंदुस्तान गया और उनसे दरख्वास्त की कि आप किसी दिन मेरी जाए-क्याम (निवास स्थान) पर आकर मेरे साथ खाना खाएँ। हरचंद मैं उनका दिल तोड़कर पाकिस्तान आ गया था, लेकिन इसके बावजूद वह आए खाना खाया और दो घण्टे से ज्यादा बैठे रहे। इस दावत में उनकी आवाज की कमजोरी और मुसकराहट के फीकेपन से यह अंदाजा करके मेरा दिल बैठने लगा कि अब वह अपनी ज़िंदगी के दिन पूरे कर चुके हैं। चुनांचे वही हुआ। मेरे पाकिस्तान वापस आने के दो-तीन महीने बाद वह आसमाने शराफत का आफताब डूब गया और हिंदुस्तान ही में नहीं सारे एशिया में अंधेरा छा गया।

२

सरोजनी नायडू

लहजे म अरसनू वाता म अपम् मदाने-जग म झासी की रानी गोकुल-वन की गाया मधुर बीन बुलबुले हिदुस्तान। अगर यह दौर मर्दों म जवाहर लाल और औरता म सरोजनी की सी हस्तिया पदा न करता तो पूरा हिदुस्तान नाबीना (अधा) होकर रह जाता।

मैंने उन्ह सबसे पहले १९२६ के लगभग हैदराबाद दकन म देखा था और उनकी शख्सीयत की मकनतीसीयत (चुम्बकपन) ने मुझे हमशा के लिए मोह लिया था।

उनके गले म रगें नही सारगी के खनकते हुए तार थे। उनके लहजे मे इस कयामत का उतार चढाव था कि उनके सामने रागिनिया पानी भरती थीं और उनके दिलो दिमाग के भवन म शायरी की वह सगीतमय लहर उठती थी कि उनके सामन चादनी राता म समुद्र का राग शर्मिदा होकर रह जाता था।

हरचन्द उर्दू उनकी मादरी जबान नही थी लेकिन हैदराबाद की उर्दू आबो-हवा ने उन्हें उर्दू और फारसी के मजाक म इस तरह ढाल दिया था कि फकत यही नही कि वह बडी रवानी के साथ उर्दू बोलती बल्कि बडी आसानी के साथ उर्दू शायरी को समझ लेती और अल्फाज पकडकर इस तरह दाद देती थी कि उन्ह शेर सुनाकर जी खुश हो जाता था। आज तक याद है मुझे वह रात जब मैंने उन्हें अपनी नज्म अगीठी सुनाई थी और वह हिचकिया ले लेकर रोने लगी थी।

उन्होने मेरी उस नज्म और उसके साथ ही मेरी और भी तीस चालीस नज्मो का अग्रेजी म बहुत अच्छा अनुवाद किया था। अफसोस कि इस यादगार सरमाये को मेरी लापरवाही ने गुम कर दिया।

उनकी यू० पी० की गवनरी के जमाने म एक बार मैं लखनऊ गया और सुबह के वक्त गवनमट हाउस म फोन किया कि मैं मिसेज नायडू से बात करना चाहता हू। उनके सेक्रेटरी ने मुझसे कहा कि आप उनके नाम पैगाम दे दें। मैं पहुचा दूगा। वह खुद बात नही कर सकती। मैंने जवाब दिया कि मेरे उनके दरम्यान यह रस्म नही है। मैं रिसीवर उठाए हुए हू आप उनसे जाकर यह कह दें कि वह मुझसे बात कर लें। सक्रेटरी ने कहा, आप अपना फोन नम्बर दे दें, मैं थोडी देर म आप को रिंग करूगा।

दस मिनट के बाद घटी बजी और सरोजनी की आवाज ने मेरे कान म रस घोल दिया। उन्होने पूछा आप कब आए? मैंने जवाब दिया 'अभी आया और सबसे पहले आपको फोन कर रहा हू। उन्होने कहा सबसे पहले मुझे

मिलने आप यहा आ जाइए। मैं बाथ रूम जा रही हू। अगर आप मेरे बाथ-रूम से निकलने से पहले यहा आ जाए तो दो चार मिनट इंतजार करें। ऐसा न हो कि मुह फलाकर चले जाए।'

यह था सरोजनी का इखलाक। अब उन शराफतो को खुर्दबीन लगा लगाकर ढूढता फिरता हू, लेकिन कही पता नही चलता। हाय, किधर चल गए वे लोग!

जिंदगी के आखिरी दौर में वह बार बार बीमार पडने लगी और मैं बार बार पूछता था कि इस बार-बार बीमार पडने की वजह क्या है। वह हर बार मुख्तलिफ सबब बताकर टाल दिया करती थी। लेकिन एक बार जब मैंने जोर देकर बार बार बीमार पडने की वजह पूछी तो वह उदास होकर कहने लगी 'जोश साहब आप नही मानते तो मुझे यह कहना पड रहा है कि इसका सबब है मेरा बुढापा।' औरत के मुह से बुढापे का एतराफ सुनकर मेरा दिल गमगीन हो गया। उन्होने मेरी उदासी को भापकर कहा 'आप गमगीन न हो। मेरे बाल तो सफेद हो रहे हैं मगर आप यकीन रखे, मेरा दिल अभी तक स्याह है और जब तक दिल स्याह है जवानी बाकी है।'

३

फिराक गोरखपुरी

अपने फिराक को मैं बरसों (दशकों) से जानता और उनकी खल्लाकी (सृजन शक्ति) का लोहा मानता हूं। वह इल्म और अदब के मसलों पर जबान खोलते हैं तो लफ्ज़ और मानी के लाखों मोती रोलते हैं और इस अफरात (अधिकता) से कि सुननेवालों को अपनी कमइल्मी का एहसास होने लगता है।

वह बला के हुस्नपरस्त और कयामत के शाहिदबाज़[1] हैं और यही वह खास खूबी है जो दुनिया के तमाम बड़े फनकारों में पाई जाती है। तथाकथित धर्म उपदेशकों पर आवाज़ें कसते हैं और उन कम-तौफीकों पर हंसते हैं। लेकिन उनकी रातों से होशियार! पीने से पहले वह यारे गमगुसार होते हैं और पीने के बाद दुश्मने-खूंख्वार बन जाते हैं। और बड़े आश्चर्य मिश्रित दुख के साथ कहना पड़ता है कि उनका अपनी जीवन-संगिनी के साथ जो बर्ताव है वह मानवता के सीने का एक भयंकर घाव है और उनके आतंक से तंग आकर उनका बेटा खुदकुशी कर चुका है।

वह एक दोहरी शख्सीयत के इंसान हैं। कभी मसीहाए-दौरां[2] और कभी मूसाए[3]-उम्रां। कभी मुहब्बते गुलज़ार कभी छुपी तलवार। जब मैं दिल्ली में रहता था तो एक बार वह मुझसे भी बुरी तरह उलझ पड़े थे। उस वक्त अगर मैं अपनी पठनौली का गला न घोंट देता तो बड़ा खूना-खराबा हो जाता। उस रात की सुबह को मैंने उनपर एक नज़्म कही थी, जिसका सिर्फ एक शेर याद है—

न अताकर मगर मुझे माबूद
भूल कर भी शबे-वसाले फिराक

(ऐ खुदा मुझे भूलकर भी फिराक के संग बितानेवाली रात अता न कर।)

पीकर लड़ पड़ना और महफ़िल को दरहम-बरहम[4] कर देना अब उनकी ट्रिक बन चुका है। इसलिए उन्हें बुरा न कहिए, उनपर तरस खाइए और उनकी रातों से दामन बचाइए।

एक बार कश्मीर के हाउस-बोट में वह और सागर मेरे साथ ठहरे हुए थे। फिज़ा निहायत खुशगवार और झील की मौजें नग्मा-बार[5] थीं। दौर चलने लगा और दो जाम खाली करके उन्होंने सागर की तरफ इशारा करके मुझसे पूछा, 'यह सामने कौन बैठा हुआ है?' मेरा माथा ठनक गया। मैंने कहा 'देखो फिराक हमको अपनी गज़ल न बनाना।' वह चुप हो गए। लेकिन चेहरे की

१ महबूब का शौकीन यानी आशिक मिज़ाज
२ अपने युग के मसीहा ३ पीढ़ियों का ईसा ४ अस्त-व्यस्त ५ संगीतमय

असीम यन्ना से पता चलने लगा कि रंग पर आने के लिए उनका नशा एड़िया रगड़ रहा है। और अब उनसे रहा नहीं गया। उन्होंने कहा, 'जोश, तुम बताओ-न बताओ, मैं देख रहा हूं कि मेरे सामने सागर बैठा हुआ है। मैंने कहा, फिर तुमसे क्या गरज? उन्होंने अपनी गोल आंखों को घुमाकर कहा, "इस लौंडे सागरवा की भी खुदा की शान यह दावा है कि मैं शायर हूं। हालांकि खुदा की कसम मेरा बटलर इससे अच्छे शेर कहता है।' अब क्या था उनकी आरज़ू पूरी हो गई। सागर यह सुनते ही जामे से बाहर हो गए और उन दोनों में गुत्थमगुत्था हो गई।

एक बार अली सरदार जाफरी किसी मुशायरे में शरीक होने इलाहाबाद गए और उनके यहां ठहरे। उन्होंने जी खोलकर सरदार की खातिर की खूब खिलाया पिलाया। जब मोटर में बैठकर दोनों मुशायरे की तरफ रवाना हुए तो मुशायरे के फाटक पर खड़े होकर फिराक का जी चाहा कि थोड़ी सी गजक कर लें। यह खयाल आते ही मुशायरे के प्रबन्धक से उन्होंने कहा सुन लीजिए जनाब या तो फिराक मुशायरे में शरीक होगा या सरदारवा। प्रबंधक ने लाख लाख समझाया और अली सरदार ने कहा फिराक साहब मैं तो आपका मेहमान हूं। लेकिन वह नहीं माने। फाटक पर तमाशाओं के थट लग गए और वह अली सरदारवा को बुरा भला कहते हुए अपने घर को चले गए। सुबह के वक्त रात के उसी सरदरवा के गले में बांह डालकर मुसकराने लगे।

लेकिन अबके जब मैं दिल्ली गया तो उनके मिजाज की तब्दीली देखकर दंग रह गया। वह दिल्ली में किसी मुशायरे में शरकत के लिए आए और अपने शागिर्द गंग के यहां ठहरे हुए थे। मैं पहुंचा तो दौड़कर उन्होंने गले लगा लिया। हरचंद वह रात के बारह बजे तक बैठे मेरे साथ पीते रहे, लेकिन आखिर तक वह कतई बिगड़े नहीं बल्कि लड़ाई का गोशा निकालने के एवज उन्होंने इतने लतीफे सुनाए कि हंसते हंसते पेट में बल पड़ गए। एक लतीफा आप भी सुन लीजिए।

उन्होंने कहा कि परसों हम सबको एक दोस्त ने, जो वास्तुकला के ज्ञाता हैं, बहुत तड़के अपने घर बुलाया और कहा कि वह दिल्ली की एक-एक तारीखी इमारत से हम आगाह कर देंगे। चूंकि यह जाड़े का मौसम है, इसलिए हमने खयाल किया कि उन्होंने सुबह के वक्त बुलाया है इसलिए नाश्ते का इंतजाम उन्हीं के घर पर होगा। चुनांचे हम लोग तीन मोटरों में बैठकर उनके यहां पहुंच गए। जब यह देखा कि वहां नाश्ते का कोई इंतजाम नहीं है और वह कुतुब पहुंचने की जल्दी कर रहे हैं तो हम यह सोचकर मुतमईन हो गए कि वहां पहुंचकर नाश्ता कराएंगे। लेकिन जब वहां भी नाश्ते का कोई बंदोबस्त नहीं देखा तो हम परेशान हो गए। वह हमें एक जगह से दूसरी और दूसरी से तीसरी जगह लिए फिरते रहे, यहां तक कि दोपहर के खाने का वक्त भी गुजरने लगा और

भूख से हम सबका बुरा हाल हो गया। उस वक्त मुझे शरारत सूझी। इशारे से मेजबान को एक कोने में ले जाकर मैंने कहा जनाबे-वाला अब तो यही मुनासिब मालूम होता है कि आप मेरे कर दें। उन्होंने बडी हैरत से मुझे देखा और कहा, 'फिराक साहब आप ऐसे संजीदा आदमी होकर मुझसे ऐसी फोहश बात की फरमाइश कर रहे हैं।' मैंने बडी संजीदगी से कहा 'जनाब, भूख इस कदर लगी है कि मैं सोचने लगा हू कि आखिरकार कुछ तो पेट मे जाए।"

मैंने कहकहा मारकर कहा अरे मर गए। इस कुछ तो पेट मे जाए की बलागत का कुछ ठिकाना नही। और सब लोग पेट पकडकर हसने लगे।

लगे हाथों एक वाकया और भी सुन लीजिए। हम लोग अहमदाबाद-बम्बई के किसी मुशायरे की शरकत के वास्ते गए। एक बालाखान के बहुत बडे खुले और शानदार हाल म फर्श पर बैठे शगल कर रहे थे कि एक अजनबी नौजवान ने आकर कहा कि मैं हजरत फिराक गोरखपुरी से मिलने आया हू। वस्ल ने कहा, 'यह हैं फिराक साहब।" उस नौजवान ने लपककर फिराक के हाथ चूम लिए और घुटनो के बल बडे अदब से बैठ गया। फिराक ने कहा "आपका नाम?' उसने नाम बताने के बाद दोनो हाथ जोडकर कहा 'मैं आपको कल का एक वाकया सुनाने आया हू। इजाजत हो तो अर्ज करू। फिराक ने कहा 'जरूर कहिए। उस नौजवान ने कहा कि परसो मैं बाजार से गुजर रहा था। देखा कि बरात का एक बहुत बडा जुलूस चौराहे पर रुका हुआ दम-बखुद खडा हुआ है। मैंने पूछा—यह माजरा क्या है? एक साहब ने बताया कि दूल्हा जिस हाथी पर सवार है वह जमीन पकडकर खडा हो गया है। लाख-लाख आकुस मारे जा रहे हैं मगर वह अपनी जगह से हरकत नही कर रहा है। और चूकि दूल्हा की सवारी का रास्ते म रुक जाना अपशकुन समझा जाता है, इसलिए दूल्हा के बाप के हवास उडे हुए ह। अभी वह आदमी मुझसे यह कह ही रहा था कि मैंने देखा एक पन्द्रह-सोलह बरस का लडका दौडा हुआ आया और उसने दूल्हा के बाप से कहा—मैं हाथी को अगर अभी-अभी चला दू तो क्या आप मुझे पचास रुपये दे देंगे? दूल्हा के बाप ने कहा—अरे पचास नही सौ रुपये दूगा। यह सुनकर उस लडके ने उचककर हाथी के कान म एक बात ऐसी कही कि वह बेसाख्ता दुम दबाकर भागने लगा। फिराक ने पूछा 'उस लडके ने क्या कहा था? उस नौजवान ने निहायत संजीदगी से कहा कि उस लडके ने हाथी के कान म कहा था अबे साले तेरे पीछे फिराक आकर खडे हो गए हैं। हम सबके जोरदार कहकहा से हाल की महराब गूजने लगी। वह नौजवान तुरन्त भाग खडा हुआ और फिराक की आखो के दानो ढेले पहियो की मानिंद घूमने लगे।

आखिर मे निहायत अफसोस के साथ मैं यह कहूगा कि हिन्दुस्तान ने अभी तक फिराक की महानता को पहचाना नही है। भारत सरकार को चाहिए कि

वह उन्हें सर आँखों पर जगह दे और उन्हें हर तरह सन्तुष्ट करके अपने दामन को फूलों से भरे और नमकहरामी के दाग से अपनी पेशानी को बचा ले।

जो शख्स यह तस्लीम नहीं करता कि फिराक का महान व्यक्तित्व हिन्दुस्तान के माथे का टीका, उर्दू ज़बान की आबरू और शायरी की माँग का सिन्दूर है वह खुदा की कसम निरा घामड़ है।

ज़िन्दाबाद फिराक!—पाइन्दाबाद फिराक!

४
मजाज

अफसोस कि मैं यह लिखने को जिंदा हूं कि मजाज मर गया।

यह कोई मुझसे पूछे कि मजाज क्या था और क्या हो सकता था। मरते वक्त तक उसका फक्त एक चौथाई दिमाग खुलने पाया था और उसका यह सारा कलाम उस एक चौथाई खुलावट का करिश्मा है। अगर वह अपने बुढ़ापे की तरफ आता तो अपने जमाने का सबसे बड़ा शायर होता।

मगर अफसोस कि पीना उसे खा गया।

मैंने मजाज को मुखातिब करके एक 'पंदनामा' (सीख) कहा था। वह मेरी नज्म सुनकर रोया था कि आपको मुझसे किस कदर मुहब्बत है। मगर उसपर अमल नहीं कर सका। अमल करता भी तो कैसे?

बारहा कह चुका हूं कि या तो दुनिया के हर काम में एतिदाल बरतना बेहद मुश्किल है लेकिन शराब में एतिदाल का कायम रखना तकरीबन मुहाल है।

मजाज एतदाल बरत न सका और जवानी में यह कहता गुजर गया—

हम मैकदे की राह से होकर गुजर गए।
वरना सफर हयात का बेहद तवील था।

एक रोज किसी अल्लाह के बंदे ने मजाज को समझाया कि देखो जोश साहब की तरह शराब की एक निश्चित मात्रा को घड़ी सामने रखकर एक निश्चित समय में पिया करो तो उसने जवाब दिया था कि जोश साहब तो घड़ी सामने रखकर पीते हैं मेरा बस चलता तो मैं घड़ा सामने रखकर पिया करूं। मैं उसे बार-बार समझाया करता कि तुमने इल्म से रिश्ता तोड़ लिया है यहां तक कि अखबार तक नहीं देखते हो, अपने इल्म और अध्ययन को बढ़ाओ। लेकिन वह नहीं माना।

यह बम्बई का जिक्र है मैं समुद्र के सामने के एक होटल में ठहरा हुआ था, मजाज और सागर भी मेरे हम-प्याला थे। आसमान पर लालिमा थी, जमीन पर समुद्र, मेज पर शीशा व सागर और हवा कमबख्त ऐसी मुलाइम चल रही थी कि नाचने लगो। जब हमारा नशा खूब गठ गया तो मजाज ने उठकर सागर के गले में बाहें डाल दीं। सागर भी उसमें लिपट गए। मजाज ने कहा मेरा सगरवा अरे सगरवा। सागर भी उससे लिपटकर मेरा मजजवा मेरा मजजवा कहने लगे। अभी यह सिलसिला चल ही रहा था कि मजाज ने सागर का चट से बोसा ले लिया और मटक मटककर कहने लगा 'मगर एक बात है मगर एक बात है मगर एक बात है। सागर ने कहा क्या बात है? मजाज ने कहा मगर यह बात है, प्यारे कि तू शायर बिल्कुल

नहीं है।" हंसते हुए सागर ने रोना शुरू कर दिया। मजाज़ फिर उनके गले लग गए "प्यारे मैं तुझे अपनी जान से ज़्यादा अज़ीज़ रखता हूं। तेरा कोई जवाब नहीं।" सागर ने रोना बंद कर दिया।

मजाज़ ने कहा 'तुमसे इस कदर मुहब्बत के बाद भी खुदा की कसम मैं तुम्हें शायर तस्लीम कर ही नहीं सकता। मगर एक बात है मगर एक बात है'। सागर फिर रोने लगे।

जब मैंने देखा कि बार-बार मजाज़ सागर को गले लगाकर 'मगर एक बात है' से रुला रहा है तो मैंने कहा मजाज़ खत्म कर इस तकरार को! बैठ जा खामोश सोफे पर! और मजाज़ जब बैठ गया तो सागर ने बिसूरकर कहा "यह मजाज़ भी अजीब आदमी है मुझसे मुहब्बत भी करता है और मेरा दिल भी तोड़ता है। यह सुनते ही मजाज़ फिर खड़ा होकर सागर की बलाएं ले-लेकर कहने लगा प्यारे मुझे माफ करो। मैं तुमसे बेहद मुहब्बत करता हूं। खुदा के लिए हंसने लगो नहीं तो मेरा दिल पाश-पाश हो जाएगा।' सागर हंसने और थिरकने लगे। और ऐन उसी आलम में मजाज़ ने कहा 'मगर एक बात है'। सागर ने फिर रोना शुरू कर दिया।

हाय रे उन रातों को कहां से ढूंढकर लाऊं।

एक दिन वह मेरे पास आया और आते ही तख्त पर गिरकर हंसने और लोटने लगा। मैंने पूछा तो उसने बताया कि अभी एक नया तमाशा देखकर आ रहा हूं। मैं खां साहब के यहां बैठा था कि उनके नौकर ने आकर कहा 'बावर्ची ने यह कहला भेजा है कि हमारी तनख्वाह बढ़ा दीजिए। वरना हम नौकरी छोड़ देंगे। खां साहब ने बिगड़कर कहा बुला लाओ बावर्ची के बच्चे को।

बावर्ची आया तो उन्होंने डपटकर पूछा 'क्या कहलवा भेजा था तूने मुझसे?' उसने कहा मैंने कहलवा भेजा था कि हमारी तनख्वाह बढ़ा दें वरना '

खान साहब ने उसकी ज़बान से वरना सुनते ही डंडा तान लिया और कहा हां कहो वरना के बाद क्या करोगे?' बावर्ची ने सर झुकाकर जवाब दिया, वरना इसी तनख्वाह पर काम करते रहेंगे।'

मैंने एक दिन पूछा मजाज़ तुम्हारे मां-बाप तो नमाज़ रोज़े के पाबंद पक्के मुसलमान हैं, फिर वे तुम्हारी शराबनोशी को कैसे बरदाश्त करते होंगे? उसने बे मोहला कहा जोश साहब बाज़ मां-बाप इतने खुशकिस्मत होते हैं कि उनकी औलाद निहायत सआदतमंद (आज्ञाकारी) होती है और मैं एक ऐसा खुशकिस्मत बेटा हूं जिसके मां-बाप बहुत सआदतमंद वाकया हुए हैं।' मैं उसके इस जवाब से फड़क गया।

एक बार दिल्ली में वह मुझसे बहुत नाखुश हो गया था। वह ताज़ा-ताज़ा दिमागी हस्पताल से बज़ाहिर तंदुरुस्त होकर आया था। मुझे क्या मालूम था कि हरचंद वह अच्छा हो चुका है लेकिन मरज़ अभी दूर नहीं हुआ है।

एक रोज़ उसने दिल्ली के चीफ कमिश्नर को फोन किया कि मुझे सौ रुपये

भेज दीजिए। मैंने इसपर बहुत फटकारा कि तूने अपनी और पूरी शायर कौम की इज़्ज़त खाक में मिलाकर रख दी है। उसने मेरे मुंह पर तो कुछ नहीं कहा, लेकिन यह शेर लिखकर मेरे पास भेज दिया—

जो गुज़रती है कल्ब शायर पर
शायरे इनकलाब क्या जानें।

हैफ दुनिया के कारखाने पर यहां जो रातें पल भर के लिए हंसाती हैं वे मरते दम तक रुलाती हैं—

तारे जां रिश्ताए-सोजां है, यह मालूम न था
मौत की लरज़िशे मिज़गां है यह मालूम न था।
मोहमल मुस्तसरे-माहवत-याराय शबाब
मुस्तकल मातमे-यारां है यह मालूम न था।

सरदार दीवानसिंह मफ्तू

जब वह 'रियासत' निकालते थे, हिज मजेस्टी के खिलाफ और हिज हाईनेसों के महलों में खलबली डालते थे। राजे नवाबों की नींदें हराम कर दी थीं उनकी कलम ने। बड़े-बड़े शासक कांपते थे उनके नाम से।

दिल्ली की बात है। एक दिन शाम के वक्त एक रियासत के प्रधान मंत्री मेरे पास बैठे हुए थे कि दीवानसिंह आ गए। उन्हें देखते ही प्रधान मंत्री साहब खड़े हो गए। जब मैंने गिलास भरके उनके सामने रखा तो उन्होंने दीवानसिंह की ओर इशारा किया कि उनके सामने मैं नहीं पिऊंगा। दीवानसिंह ने उन्हें इशारा करते देखकर मुझसे कहा, 'जोश साहब, प्राइम मिनिस्टर साहब से कह दीजिए, शौक से पिएं, मैं उनके खिलाफ एक लफ्ज भी नहीं लिखूंगा। यह राजा नहीं हैं, मैं तो राजाओं पर हमला करता हूं, जिसके यह मानी हैं कि मैं इंसान का नहीं, सुअर का शिकार खेलता हूं।'

उनकी सुल्तान शिकारी की घटनाओं से तो हिंदुस्तान अब तक गूंज रहा है। अब उनकी उदारता की भी एक घटना सुन लीजिए, जो उनके एक दोस्त ने मुझे सुनाई थी। उन्होंने मुझसे बयान किया था कि किसी राजा के बारे में ऐसी दस्तावेज उनके हाथ लग गई थी, जिसमें उसके हरामी होने का सबूत मौजूद था। उस दस्तावेज के जोर पर वह उस राजा से साठ सत्तर हजार रुपया हासिल करके घर आए। नोटों के बंडल बड़ी बेपरवाही के साथ मेज की दराजों में ठूंसकर वह मुझसे बातें कर रहे थे कि उनके एक शिकस्ताहाल मित्र आ गए और खड़े-खड़े कहा कि सरदार साहब, मैं आपसे हमेशा के लिए रुखसत होने आया हूं। मुझसे गले मिल लीजिए। वह खड़े होकर उनसे गले मिले और उन्हें जबरदस्ती बिठाकर कहा, 'मीर साहब, यह हमेशा के लिए रुखसत होने के क्या मानी हैं?' मीर साहब ने कहा, 'मेरे पास वक्त बहुत कम है। बस इतना कहूंगा कि करबलाए मुअल्ला जा रहा हूं और अब जीते-जी वापस नहीं आऊंगा। अच्छा, खुदा हाफिज।' यह कहकर मीर साहब उठ खड़े हुए। लेकिन जैसे ही वह जीने की ओर बढ़े, दीवानसिंह ने बढ़कर उन्हें रोक लिया और कहा, 'जब तक आप इसकी वजह नहीं बताएंगे, भगवान की कसम मैं आपको जाने नहीं दूंगा।' मीर साहब की आंखों में आंसू आ गए और कहा, 'सरदार साहब, यह न पूछिए और मुझे जाने दीजिए।' दीवानसिंह उन्हें खींचकर कमरे में ले आए और कहा, 'जब तक आप इसकी वजह नहीं बताएंगे मैं कसम खा चुका हूं कि आपको जाने नहीं दूंगा।' मीर साहब ने कहा, 'सरदार साहब, मुझ पर इतना कर्ज हो गया है कि उसका अदा करना मेरे वास्ते अब नामुमकिन है। इसलिए जा रहा हूं कि करबलाए मुअल्ला में जिंदगी के बाकी दिन गुजार

दूगा। अच्छा अब जाने दीजिए, वक्त कम है।" मीर साहब फिर उठ खडे हुए। दीवानसिंह ने उनका दामन पकडकर पूछा 'आप पर किस कदर कर्जा है?" मीर साहब ने कहा, 'पद्रह हजार रुपये।"

दीवानसिंह ने कहा, बस ? सिर्फ एक मिनट!" और उन्होंने गिनकर बीस हजार के नोट मीर साहब की जेब म जबरदस्ती ठूस दिए। मीर साहब की आखो से आसू बरसने लगे और दीवानसिंह ने हाथ जोडकर उनके सामने सर झुका लिया। है कोई इस दौर मे दोस्त के या काम आनेवाला ? क्या आज कोई अरबपति भी इस उदारता का साहस कर सकता है ?

रियासत' के दौर म उन्होंने बेहद कमाया। लेकिन अपने पास कभी कुछ नही रखा। खाया पिया और खिलाया पिलाया।

इसलिए उन पर मुफलिसी और फाकामस्ती के दौरे पडा करते थे। लेकिन अगर मुफलिसी म कोई दोस्त या मेहमान आ जाता था तो वह चुपके चुपके अपने घर की चीजें बेचकर उसकी दावत किया करते थे। और जब कोई उनकी मुफलिसी भापकर उन्हें दावत से मना करता था तो वह लड पडते थे।

मजाज ने एक दिन मुझसे कहा कि कल तो सरदार साहब ने कमाल ही कर दिया। मैं शाम को उनके यहा पहुचा। उन्होंने मुलाजिम से कहा कि बारह दजन सोडे की बोतलें ले आ। मुहल्ले म उनका बडा रौब था। थोडी देर म बोतलें आ गइ। एक दजन बोतलें रखकर उन्होंने नौकर को हुक्म दिया कि बाकी बोतलो का सोडा गिराकर खाली बोतलें फला दुकान पर बेच आए। (उन दिनो गोलीवाली सोडे की खाली बोतल बारह आने म बिकती थी)। और उनसे जो रुपया हाथ आए उसकी एक ह्विस्की की बोतल और कुछ खाने का सामान ले आए। यह थी उनकी मेहमाननवाजी की शान।

शायद यह १९३७ की बात है जब मैं दिल्ली से कलीम निकाल रहा था और रोजगार और इश्क दोनो ने हाथो बुरी तरह परेशान था, और इसपर तुर्रा यह कि मेरी बडी की शादी सर पर आ चुकी थी कि वह एक रोज शाम के वक्त मेरे घर आए। ब्राडी की बोतल अपने साथ लाए। (वह ह्विस्की पर ब्राडी को तरजीह देते थे।)

जब दौर खत्म हो गया तो उन्होंने मुझसे कहा 'मैं भाभी से एक बात कहना चाहता हू। मैंने सखावत से कहा, "सरदार साहब को ऊपर ले जाओ। मेरी बीवी उस वक्त तक पर्दे की पाबद थी, लेकिन उनसे खाना पर्दा करती थी। जब वह मेरी बीवी से बातें करके नीचे आए और दो मिनट के अदर रुखसत हो गए तब मैं ऊपर गया, तो बीवी ने मुझसे कहा 'सरदार साहब नोटो का यह बडल दे गए हैं। यह कहते थे कि उन्होंने यह रकम अपने दोस्त नवाब बहावलपुर से खत लिखकर मगवाई है। देखो आपने दीवानसिंह की शराफत और दोस्ती।

एक जमाने म जब वह रफी अहमद किदवई के खिलाफ बहुत सख्त मजमून लिख रहे थे, उस वक्त उनकी माली हालत बहुत खराब थी। मैं उनके

इफ्लास का अन्दाजा करके सीधा किदवई साहब के पास गया और उनसे कहा कि किदवई साहब आप मिनिस्टर नहीं इस जमाने के हातिम हैं। आपकी दोस्त नवाजी के डंके पिटे हुए हैं लेकिन दोस्तनवाजी कोई बड़ा गुण नहीं। हलाकू, नीरो, चंगेज और यजीद भी अपने दोस्तों को नवाजते थे। अलबत्ता दुश्मन नवाजी एक ऐसा गुण है जो इसान को पैगम्बरी की सतह पर ले जाता है। क्या आप हलाकू की सतह पर रहना पसन्द करेंगे या पैगम्बरी की सतह तक पहुंचना चाहेंगे? उन्होंने मुसकराकर कहा 'पहेलियां-सी क्या बुझा रहे हैं आप जो मुद्दा हो उसे खुलकर कहिए।' मैंने कहा दीवानसिंह आजकल सख्त परेशान हैं।

उन्होंने यह सुनते ही घंटी बजाई। सेक्रेटरी आया। उसके कान में उन्होंने कुछ कहा। वह चला गया और पांच मिनट के बाद चैक लाया। दस्तखत करके किदवई साहब ने कहा यह चैक जाकर दीवानसिंह को दे आइए। वह दस हजार का चैक लेकर मैं उनके पास गया। उन्होंने कहा चलिए अभी कैश करा लें। चैक कैश हो गया तो वह यह आग्रह करने लगे कि आधी रकम आप ले लें। जब मैंने इंकार किया तो वह लड़ने पर आमादा हो गए। और मैं वहां से भाग खड़ा हुआ।

मैं कह चुका हूं कि वह कट्टरीन दुश्मन भी हैं। इसका भी एक वाकया सुन लीजिए। मैं पाकिस्तान से दिल्ली गया और उनके यहां ठहरा हुआ था। एक सुबह को जब मैं बाहर जाने लगा तो उन्होंने पूछा आप कहां जा रहे हैं? मैंने जवाब दिया, 'सागर से मिलने के लिए।'

सागर का नाम सुनते ही वह उछल पड़े। दौड़कर मेरा हाथ पकड़ लिया। कहने लगे मैं आपको एक ऐसे एहसानफरोश के पास जाने की इजाजत हरगिज नहीं दूंगा जिसे आपने पंडित जी से कहकर रेडियो पर नौकर रखवाया था और उसका बदला उसने यह दिया कि जबसे आप पाकिस्तान चले गए हैं वह आपके खिलाफ जहर उगलता फिरता है। मैंने कहा सरदार साहब, मैंने सागर को नौकर नहीं रखवाया सागर ने खुद पंडित जी से अपनी मुलाजमत का वादा ले लिया था।' उन्होंने कहा यह मुझे मालूम है। लेकिन जब केसकर जी ने पंडित जी को धोखा देकर उसका पत्ता काट देना चाहा था उस वक्त तो आप ही थे जिसने केसकर के फरेब का पर्दा चाक करके उसे नौकरी दिलवाई थी। मैंने कहा सरदार साहब सागर बुरा आदमी नहीं है। अगर उसने मेरे पाकिस्तान जाने के बाद मेरे खिलाफ आवाज बुलंद की थी तो इसका मकसद यह था कि वह बेचारा हुकूमत हिंद पर अपनी वफादारी का सिक्का जमा रहा था। और यह कोई ऐसी बुरी बात नहीं कि मैं इतने पुराने दोस्त से सम्बन्ध तोड़ लूं। दीवानसिंह ने मारे गुस्से के कांपते हुए कहा 'आप आदमी नहीं देवता हैं।' लफ्ज 'देवता' को इस कदर दांत पीसकर अदा किया था गोया वह कोई मोटी सी गाली दे रहे हों। और जब मैं खामोश हो गया तो उन्होंने कहा "जोश साहब मैं तो जब तक दुश्मन का खून न पी लूं मुझे चैन नहीं आता। मेरे नजदीक दुश्मन को मार डालना ही सबसे बड़ा धर्म है।

६

वस्ल बिलग्रामी

अंग्रेजों की तरह गोरे ऊंचा माथा दरम्याना कद नूरानी चेहरा, घनी लाल दाढ़ी फरिश्ता सूरत और नेपोलियन-सीरत इंसान थे।

मेरी इतनी उम्र आ चुकी है लेकिन मैंने उनका सा दृढ़ निश्चय और शेर-दिल इंसान आज तक नहीं देखा है। वह जब किसी बात पर कमर बांध लेते थे तो उन तमाम बातों को जो दुनिया भर के लिए नामुमकिन होती थीं पल भर में मुमकिन बना दिया करते थे।

अगर वह उस जमाने में पैदा होते जब एक व्यक्ति का साहस मुल्कों के नक्शे बदल दिया करता था तो मुझे यकीन है कि वह एक महान साम्राज्य क़ायम करके सिकन्दर महान से टक्कर ले सकते थे।

हाफिज़ा बहुत कमज़ोर हो चुका है। उनके सिर्फ चंद कारनामे याद रह गए हैं। इन्हीं से आपको खुद मालूम हो जाएगा कि वह क्या थे। उस दौर में जबकि फिरंगी हुकूमत का रोब हर तरफ छाया हुआ था और उसका गुरूर ज़मीन पर पांव नहीं रखता था हम दोनों शायद बम्बई के एक बहुत शानदार होटल में बैठे खाना खा रहे थे और बड़ी-बड़ी मूछों का एक धमधूसड़ जुगादरी अंग्रेज हमारे सामने की मेज पर शराब पी रहा था। मैंने वस्ल साहब से कहा, "तब जानें कि आप इस गड़ामीर अंग्रेज को पान खिला दो" वह गिलौरी चुटकी में दबाए उसके पास गए और उससे कहा, "आपकी सूरत देखकर मुझे अंदाज़ा हुआ है कि आप बहुत बड़े आदमी हैं, लेकिन दुनिया आपके साथ इंसाफ नहीं कर रही है। मैं मुसलमानों का हेड पोप हूं चाहता हूं आप सरबुलंद हो जाएं। आप मुंह खोल दें।" उस अंग्रेज पर उनकी सूरत और उनकी बातों का इस क़दर असर पड़ा कि बे-सोचे-समझे उसने अपना मुंह खोल दिया और उन्होंने उसके मुंह में गिलौरी रखकर उसकी पीठ को थपथपाया और 'खुदा आपका भला करेगा' कहते हुए मेरे पास आ गए। वह सिटपिटाया हुआ अंग्रेज उन्हें गौर से देखने लगा फिर अपनी जगह से उठा सर हिलाकर थैंक यू कहा और गुस्लखाने चला गया।

वह राजा साहब कठूरा की क़ैसरबागवाली निचली मंजिल में रहते थे और मैं उनके वहां ठहरा हुआ था। एक रोज झुटपुटे का वक्त था कि मेरी नज़र पड़ी एक मुरमुरे के थैले की-सी बूढ़ी मेम पर जो सामने की सड़क से हद से ज्यादा आहिस्ता आहिस्ता बारादरी की तरफ चली जा रही थी।

मैंने कहा कि वस्ल साहब क्या आप में यह ताक़त है कि आप इस थलाजान की सुस्त रफ्तार को तेज रफ्तारी में तब्दील कर दें।

उन्होंने कहा, 'बेशक।' और वह अपने कमरे के सामने के कुएं की जगत

पर जो घने दरख्तों और झाड़ियों से घिरा हुआ था, जाकर खड़े हो गए और मेम साहब का इन्तज़ार करने लगे। जब वह ठमक ठमक करती घने दरख्तों के नीचे से गुज़रने लगीं तो उन्होंने बड़े ज़ोर से इल्लल्लाह का नारा लगाकर और अपने नकली दाँतों को ज़रा सा आगे निकालकर इस तरह खट-खट बजाना शुरू कर दिया कि वह मेम साहब 'ओ माई गॉड' कहती हुई भाग खड़ी हुईं सरपट और शउर ने लोट-लोट कहकहे मारकर तालियाँ बजाने लगे।

एक दिन शाम को यह मलीहाबाद आए। कहा कि श्यामनारायण निगम ने मुझे आपके पास भेजा है कि मैं सुबह की गाड़ी से आपको कानपुर ले आऊँ। कल रात को उनके यहाँ आपकी दावत है, जिसमें आपके दोस्त जगतमोहन रवाँ, तेजबहादुर सप्रू और जस्टिस शाह सुलेमान भी मौजूद होंगे। मैंने बीवी से इजाज़त माँगी। वह बिगड़ गईं। कहने लगीं, "अभी परसों तो लखनऊ से आए हो। चाहे इधर की दुनिया उधर हो जाए मैं तुमको इतनी जल्दी नहीं जाने दूँगी।" मैंने वस्ल साहब से अपनी मजबूरी ज़ाहिर कर दी और कहा कि निगम साहब से माज़रत कर दीजिएगा। उन्होंने कहा 'ऐसा हो ही नहीं सकता। आपको मेरे साथ जाना पड़ेगा।' मैंने कहा 'आप मेरी बीवी और उनकी हठ से वाक़िफ़ हैं वह मुझे किसी तरह जाने नहीं देंगी।' उन्होंने सीना ठोककर कहा, 'इजाज़त मैं दिलाऊँगा।' वह कोठी से बाहर निकल गए एक बहुत बड़ा नुकीला पत्थर उठा लाए और ज़ीने की सबसे ऊपर की सीढ़ी पर खड़े होकर उन्होंने आवाज़ दी, 'मेरी छोटी भावज, आप ज़रा दरवाज़े के पट की आड़ से देख लें कि मैं किस तरह दम तोड़ता हूँ।' बीवी ने पट की आड़ से कहा 'क्या बात है वस्ल साहब?' उन्होंने बड़ा सा नुकीला पत्थर हाथ में बुलन्द करके कहा, 'देखिए मैं इससे अपना सर फोड़कर मर जाने पर तुल गया हूँ। आपको मालूम है कि मैं सैयद हूँ। सुनता हूँ पठान सादात की बड़ी इज़्ज़त करते हैं। अगर आप जोश साहब को मेरे साथ जाने की इजाज़त नहीं देंगी तो मैं पत्थर अपने सर पर मारकर ख़ुदकुशी कर लूँगा और आले रसूल (रसूल की संतान) का खून आपकी गर्दन पर होगा।' यह कहकर वह पत्थर को अपने माथे के सामने ले आए और रो रोकर कहने लगे "आप इजाज़त देती हैं कि नहीं? मैं एक, दो, तीन कहूँगा। अगर तीन सुनते ही आप इजाज़त नहीं देंगी तो सर फोड़कर आपके ज़ीने पर अभी-अभी शहीद हो जाऊँगा। देखिए एक देखिए दो और दो कहते ही जैसे वह पत्थर उठाकर अपने माथे पर मारनेवाले थे कि बीवी ने कहा 'बहुत अच्छा। आप उन्हें अपने साथ ले जाएँ लेकिन कल ही वापस भेज दें।' यह सुनते ही उन्होंने पत्थर फेंक दिया सीढ़ी पर शुक्रिये का सजदा किया और मुझे आँख मारते हुए नीचे उतर गए।

एक बार हम लोग रेल में सफ़र कर रहे थे कि किसी जंक्शन पर एक दूल्हा अपनी दुल्हन और मिठाई के टोकरे के साथ हमारे दर्जे में आकर एक कोने में बैठ गया।

शौकत थानवी ने मिठाई की तरफ इशारा किया। वस्ल ने जल्दी में आखें बंद करके वादा कर लिया। इतने में बिल्ली के भागों छींका टूटा। दूल्हा ने दुल्हन से चुहलबाजी शुरू कर दी। उन्हें मौका मिल गया। वह अपनी सीट से उठे। दूल्हा से जाकर कहा, 'तू शरीफ घराने का बच्चा मालूम होता है। लेकिन यह अजीब बात है कि मैं तेरे दादा के बराबर हूं और तू मेरे सामने अपनी दुल्हन से छेड़ छाड़ कर रहा है।' उसका शाना पकड़कर उन्होंने उसे दुल्हन से अलग करके बिठा लिया। वह नौजवान अदब से बैठ गया। अब उन्होंने मिठाई के टोकरे में हाथ डाले दो लड्डू निकाले और दूल्हा से कहा, 'बेटा, इसी बात पर ले एक लड्डू तू खा ले। एक मेरी बहू को खिला दे और मैं बाकी लड्डू तेरी और तेरी दुल्हन की तरफ से तेरे हमसफरों में बांट दे रहा हूं।' वे भी क्या याद करेंगे कि एक दूल्हा दुल्हन के साथ सफर किया था।' और उन्होंने सारा टोकरा हम लोगों को खिला दिया।

वह लखनऊ के तमाम शायरों के दादा-अम्मा थे। जब कहीं कोई बड़ा मुशायरा होता था मुशायरा करानेवाले उनके पास शायरों की सूची और किराया वगैरह भेज देते और वह सबके घरों पर जाकर उन्हें निमंत्रित करते एक जगह पर सबको जमा करके अपने साथ स्टेशन ले जाते और टिकट लेकर अपनी जेब में रख लिया करते थे।

एक बार हम कुछ देर से स्टेशन पहुंचे कि गाड़ी छूट रही थी। उन्होंने सारे शायरों को बे टिकट ही रेल में सवार कर दिया और कहा कि आगे चलकर किसी बड़े स्टेशन पर गार्ड को आगाह कर देंगे। दो चार स्टेशनों के बाद एक नौजवान टिकट चेकर ने हमारे डिब्बे में दाखिल होकर हमसे टिकट तलब किए। हम सबने दूर बैठे हुए वस्ल साहब की ओर, जो टिकट चेकर को देखते ही तस्बीह पढ़ने लगे थे, इशारा कर दिया और सोचने लगे कि देखें अब क्या गुल खिलेगा। टिकट चेकर को कनखियों से अपनी तरफ आता देखकर उन्होंने आखें बंद करके सर झुका लिया। सूरत उनकी खसान-खुदा की-सी थी। टिकट चेकर उनके सामने आकर खड़ा तो हो गया लेकिन टिकट मांगने की जुरअत नहीं कर सका।

इतने में पटरी बदलने से गाड़ी को झटका लगा, उन्होंने आंखें खोल दीं। जब बड़े शरारती अंदाज में उन्होंने टिकट चेकर की तरफ निगाह उठाई और उसने कहा 'टिकट दो' तो उन्होंने उसके मुंह पर थप्पड़ मार दिया और पूछा 'पहले अपने बाप की खैरियत बता और फिर अपने चचा से टिकट मांग। मेरा नाम है वस्ल बिलग्रामी।' टिकट चेकर ने बड़ी गमनाक आवाज में कहा कि कोई एक महीना हुआ वह इंतकाल फरमा चुके हैं। यह सुनकर वस्ल साहब रोने लगे और उसे गले से लगा लिया और वह भी रोने लगा।

अब टिकट चेकर की क्या मजाल थी कि उनसे टिकट मांगता। इलाहाबाद स्टेशन पर उसने हम सबको चाय पिलाई और अपने साथ ले जाकर हमें बाहर

पहुंचाया।

बड़ी जंग के खतरनाक दौर में हम सब लोग वस्ल साहब की रहनुमाई में ग्वालियर से लखनऊ जा रहे थे और हमसे मिले हुए फर्स्ट क्लास के दर्जे में एक बड़ा लम्बा-तड़गा अधेड़ अंग्रेज फौजी अफसर भी सफर कर रहा था। उसकी यह शान थी कि हर बड़े स्टेशन पर चार-पांच गोरे उसके दर्जे के सामने खड़े होकर पहरा देने लगते थे। इस फौजी अफसर के साथ उसकी निहायत परी पैकर (सुन्दर) लड़की भी सफर कर रही थी। हमने उसे इस फौजी अफसर की लड़की इसलिए समझा कि वह उससे 'डैडी' कहकर बातें कर रही थी।

जब किसी जंक्शन पर गाड़ी रुकी तो वह लड़की उतरी और व्हीलर बुक-स्टाल पर किताबें देखने लगी। नयाज़ फतहपुरी ने वस्ल साहब से कहा कि हम आपको सूरमा तस्लीम कर लेंगे अगर आप उस लड़की का बोसा ले लें।

वस्ल साहब ने कहा,' शर्त बद लो।' और जब पचास रुपये की शर्त बद ली गई तो वह नीचे उतरे और व्हीलर की दुकान पर जाकर उसे घूरने लगे। जब उस माहजबीन (चन्द्रमुखी) ने तेवर बदलकर कहा 'तुम कौन गुस्ताख बूढ़े हो?' तो उन्होंने आव देखा न ताव झट से उसे गले लगाकर उसका बोसा ले लिया। लड़की ने चीख मारी। उसका बाप भरा हुआ पिस्तौल लेकर झपट पड़ा। पहरा देनेवाले गोरों ने भी बढ़कर उन्हें हल्के में ले लिया और वस्ल साहब ने रो रोकर कहना शुरू कर दिया, 'हाय, मेरी बेटी ऐसी बिल्कुल ऐसी ही थी।' यह सुनकर उस फौजी का दिल पसीज गया। उन्हें अपने दर्जे में ले गया, केक खिलाए, चाय पिलाई और उन्हें अपनी बेटी के पहलू में बिठा दिया। जब तक वह जिया, उनकी दोस्ती का दम भरता रहा।

७

छद्दू खा

मलीहाबाद के बडे जमीदारो मे से थे। जिंदगी भर रेल म नही बठे। जब कभी मुकदमा की परवी के लिए लखनऊ या अपने मौजो की तहसील-वसूली के वास्ते शाहजहापुर जाते थे तो अद्धे[1] पर सफर किया करते थे। आगे-आगे उनका अद्धा होता था और उसके पीछे तीन अद्धे और होते थे, जिन पर खाने का सामान, बकरे और सिपाही लदे हुआ करते थे। लाख लाख लोगो ने समझाया कि रेल पर सफर कीजिए लेकिन उन्होने कभी किसी की बात नही मानी और हमेशा यह कहा कि खा साहब जो सवारी हमारे इशारे पर नही चल सकती उसपर बठना बेकार है।

उनकी दूसरी खसूसियत यह थी कि जो शख्स उनके गुस्से झिडकी या गाली का तुरत उत्तर नही देता था उसे वह पठानो के जुमरे से खारिज करके उससे सम्बध विच्छेद कर लिया करते थे।

और तीसरी खसूसियत यह थी कि जो मुलाजिम उनके पुकारते ही दो सेकड के अदर अदर हाजिर न हो जाए वह उसे छुडा दिया करते थे। और इसी कारण नादिरशाही हुक्म की तरह छद्दूखानी हुक्म दूर दूर तक मशहूर था।

उनका यह एक बधा टिका उसूल था कि जब कोई पठान उनके पास नौकरी के लिए आता था वह मुसकराकर उससे पूछते थे कि आप खिदमतगारो के जुमरे म आ सकेंगे? जब वह जवाब देता था कि हम पठान है खिदमतगारी स तो हमारे बाप दादा भी नही वाकिफ तो वह खुश हो जाते थे। उसके सम्बधियो के बारे म मालूम करते कि वे सब किस कदर है। और जब मालूम हो जाता तो उसके बाल-बच्चो की तादाद पर निगाह करके वह उसकी उसी कदर तनख्वाह मुकरर कर दिया करते थे। चूकि खुश्क तनख्वाह के वह कायल नहीं थे इसलिए वह पूछते थे कि खा साहब आप कितनी रोटिया कितनी दाल और किस कदर गोश्त खाएगे और कितना दूध पिएगे? जब वह जवाब देता कि मैं आठ रोटिया और पाव भर गोश्त खाऊगा और आध सेर दूध म मेरा काम चल जाएगा तो वह अपने मुशी कमरुद्दीनखा को हुक्म दिया करते थे कमरी दारद! यानी ऐ कमरुद्दीन खा इसका नाम मुलाजिमो की फर्दी म दर्ज कर लो मय खुराक।

एक बार उनकी बीवी ने कहा कि जिस सिपाही की आठ रोटिया मुकर्रर की गई थीं उसके दस्तरख्वान से आज एक रोटी वापस आ गई है। वह यह सुनकर बाहर आए उस सिपाही को बुलाया और कहा, "खा साहब, आप

१ छोटी बलगाडी।

आपने एक रोटी कम खाई है। यह बात हमारे आपके मुआहिदे के खिलाफ है।" सिपाही ने कहा "हुजूर, आज मेरी तबीयत खराब थी।" उन्होंने कहा "नहीं खा सकते थे तो अपनी बची रोटी घर ले जाते।" यह कहकर उन्होंने अपने मुंशी कमरुद्दीन खां को पुकारा और कहा "कमरी, यह खां साहब नदारद" (यानी यह बरखास्त कर दिए गए।) सिपाही ने बड़ी लजाजत से कहा 'हुजूर मुझे नदारद न करें।' उन्होंने कहा 'खां साहब आपने मुआहिदा तोड़ डाला। आप पूरे एक महीना तक नदारद रहेंगे। एक महीना बाद फिर दारद हो जाएंगे।

एक बार उन्होंने खिदमतगार को पुकारा। खिदमतगार दो-तीन मिनट के बाद आया। उन्होंने पूछा कि देर क्या की? उसने कहा 'पानी भर रहा था।' उन्होंने कहा 'मेरे पुकारते ही तुम पर यह बात लाजिम हो गई थी कि रस्सी का फौरन हाथ से छोड़कर दौड़ पड़ते।' इतना कहकर उन्होंने हुक्म दिया 'कमरी यह खिदमतगार नदारद।

वह साल में तीन मर्तबा गरीबों को खाना खिलाया करते थे। एक बार उन्होंने मजाक के तौर पर किसी गरीब आदमी से पूछा 'कभी ऐसा खाना तुम्हारे बाप ने भी खाया था?' उसने कहा 'मेरा बाप जो खाना खाता था वह आपके बाप ने भी नहीं खाया होगा।' उन्होंने पूछा, 'तुम्हारे बाप क्या खाते थे?' उसने कहा 'ज्वार की सूखी रोटी और चटनी।' वह हंस पड़े और कहा 'तुम सच कहते हो। अगर तुम मुझे पलटकर जवाब न दे देते तो मैं तुम्हें अभी निकलवा देता।

एक बार एक खिदमतगार ने उनसे कहा कि हुजूर आपका रहीमुद्दीन खां सिपाही आज यह कह रहा था कि छन्दू खां की नाजिरशाही मुझसे बरदाश्त नहीं होती। अगली तनख्वाह मिल जाए तो मैं उनकी नौकरी छोड़ दूंगा और न छोड़ूं तो मेरे नुतफे में फर्क है (यानी अपने बाप का नहीं।)। उन्होंने उसी वक्त रहीमुद्दीन खां को बुलाया और कहा 'खां साहब आपकी मुस्तैदी से हम बहुत खुश हैं। आज से आपकी तनख्वाह दुगनी कर दी है मजे से रहिए' और पुकारकर कहा 'कमरी आज से यह खां साहब दुगने दारद।' सिपाही खुश हो गया और बहुत जी लगाकर काम करने लगा। जब वह एक महीना काम कर चुका तो उसे बुलाकर दूनी तनख्वाह दे दी और कमरुद्दीन से कहा 'कमरी रहीमुद्दीन खां आज से नदारद।' रहीमुद्दीन ने पूछा 'हुजूर मेरी क्या खता है?' उन्होंने कहा 'आपने कुछ दिन पहले कहा था कि अब छन्दू खां की नौकरी करूं तो मेरे नुतफे में फर्क है। लेकिन जब मैंने तनख्वाह दूनी कर दी तो आपने लालच में आकर अपने पर गाली चढ़ा ली। बस अब आप जाइए।' 'कमरी नुतफे का फर्क नदारद।'

एक बार उनके सिपाही ने शिकायत की कि परगने में मेरा दूध नहीं आ रहा है। वह गुस्से में भरे घर पहुंचे और बीबी से गरजती आवाज में कहा

अशरफ की मा तुमने हैदर खा का दूध बद कर दिया है ?" उनकी बीवी ने कहा, क्या करूँ, तीन भैंसा ने दूध देना छोड दिया है। सिर्फ एक भैंस दूध दे रही है। उसका दूध कसरत के बाद अशरफ़ पी लेता है। उन्होंने कहा अशरफ खा दूध पिए और दारद को दूध न मिले। अच्छा, अभी छटी का दूध याद दिलाए देता हू। बाहर आकर उन्होंने ललकार कर कहा 'कमरी, सारी भैंसें नदारद!' कमरुद्दीन खा हैरत से उनका मुह ताकने लगे। उन्होंने कहा 'मेरा मुह क्या ताक रहे हो ?' क़मरुद्दीन ने कहा 'भैंसा का नदारद मेरी समझ मे नहा आ रहा है।' उन्होंने कहा, 'इसके यह मानी हैं कि फौरन कसाइयो को बुलाओ और सारी भैंसें जिबह कर डालो।" कमरुद्दीन खा उनके बडे पुराने खैरख्वाह थे। उन्होंने कहा 'भैंसा को किस खता मे जिबह कर डाला जाएगा।' उन्होंने कहा 'अशरफ की मा ने हमारे दारद का दूध नदारद कर दिया है। इसलिए सारी हरामजादी भैंसें नदारद।' क़मरुद्दीन खा लाख-लाख चीखते रहे मगर उन्होंने सारी भैंसें जिबह कराके उनका गोश्त खडे-खडे गरीबो मे तकसीम करा दिया।

एक दिन वह अपने बाग़ मे बैठे कमरुद्दीन खा से बातें कर रहे थे कि उनके बेटे अशरफ़ खा ने आकर सलाम किया। उन्होंने पूछा 'लखनऊ हो आए ?' बेटे ने कहा जी हा अभी-अभी लखनऊ से आ रहा हू और आपको सलाम करके घर जाऊगा। इतने मे उनकी नजर बेटे की जूती पर पड गई। जामे से बाहर होकर पूछा इस जूते का नाम क्या है ?' बेटे ने कहा "बाबा इसका नाम है डासना!' उन्होंने कहा पठान का पूत और यह जनखी जूती। इस जूती की मा की कमरी निकाल चाकू और टुकडे-टुकडे कर दे इस छिनाल जूती का। यह डासन की जूती अशरफ की पठनौती को डस लेगी।' और जूती का टुकडे टुकडे देखकर जब अशरफ की आखो मे आसू आ गए तो उन्होंने कहा जब जनमे जोरू के दूर हो जा मेरी नजरो से। जब अशरफ खा नजर चुराकर अन्दर चले गए तो उन्होंने कहा कमरी अशरफ नदारद! कमरुद्दीन उछल पडे। उनका मुह खुला का खुला रह गया। पूछा खान साहब बहादुर बेटा और नदारद! यह हो क्याकर सकता है ? उन्होंने कहा वह नदारद हो सकता है आज हो जाने के बाद। कमरुद्दीन खा ने कहा इतनी जरा सी बात पर! उन्होंने कहा 'यह जरा-सी बात है ? मैंने उसे गाली दी उसने पलटकर जवाब नहा दिया। कमरुद्दीन उनकी जिद से वाकिफ थे। दौडकर ड्योढी पर गए और लौंडी ने कहा बडा गजब हो गया। खा साहब बहादुर अशरफ को आक कर देने पर तुल गए है। जल्दी-जल्दी बीबी के पास जाकर कहो कि वह उन्हे घर बुलाकर समझाए। घर मे कुहराम मच गया। लौंडी ने ड्योढी मे पुकारकर कहा मिया आपको बीबी बुला रही हैं। वह अन्दर गए तो बीबी ने सर पीटकर कहा है है यह क्या अंधेर है ? एक निगोडी जूती पर बच्चे को आक किए दे रहे हो।" उन्होंने कहा यह

निगोडी जूती की बात नही। मैंने उसे गाली दी। वह उसे ' मुझे गाली नही दी। अगर वह असली पठान होता तो मुझे उनकी बीवी ने कहा, 'अरे यह तो साचा, वो बाप का गा है ?' उन्होने कहा, 'यही तो तुम्हारी भूल है। पठान बाप की भी गाली बरदाश्त नही कर सकता। अशरफ से कहो, मु दे, नही तो " बीवी ने मुह पीटकर बेटे से कहा, 'अ दे दे।' जब बेटे ने आनाकानी की तो उन्होने कहा, 'द कहता हू, मगर तीन पर तू गाली नही देगा तो अपनी सात पु खाकर कहता हू कि खडे खडे आक कर दूगा। यह कहकर अ कहा, "एक!' बेटा चुप रहा। फिर उन्होने कहा दो!" उन के मुह पर थप्पड मारकर कहा, 'दे क गाली! नही तो दूध न और जब उन्होने बडे निश्चय के साथ अगुली उठाकर तीन रफ खा ने कहा, 'अबे जनखे जोरू के तो उन्होने दौडकर ब लिया, मुह चूमा और पीठ ठोककर कहा 'तू पठान, तेरा बाप तेरा दादा पठान और घर से निकलकर बडी गरजती आव "कमरी, अशरफ दारद!'